युक्तप्रांत की गवर्नमेंट की प्रेरणा से प्रस्तुत

हमारा ग्राम-साहित्य

लेखक

रामनरेश त्रिपाठी

प्रकाशक

हिन्दी-मन्दिर

प्रयाग

पहला संस्करण] फ़रवरी, १९४० [मूल्य, दो रुपये

भूमिका

यह पुस्तक युक्तप्रांत के शिक्षा-विभाग के सेक्रेटरी श्रीयुत एन० सी० मेहता, आई० सी० एस०, की प्रेरणा और एजुकेशन एक्सपेंशन आफ़िसर श्रीयुत श्रीनारायण चतुर्वेदी के पत्र नं० ४५, ता० २२ जून, १९३९ के अनुसार प्रस्तुत की जा रही है। इसमें इस सूबे के ग्राम-साहित्य की एक रूप-रेखा तैयार कर दी गई है, जिससे उसके स्वरूप और उसकी उपयोगिता की साधारण जानकारी पाठकों को हो जायगी।

इसके पहले, सन् १९२९ में, मैंने ग्राम-गीतों का एक बड़ा संग्रह प्रकाशित किया था। उसके सम्बंध में एक शिकायत यह सुनने में आई कि उसमें ज़्यादातर पूर्वी प्रांतों ही के गीत दिये गये हैं। यह शिकायत कुछ अंशों में सही है। लेकिन उस संग्रह के प्रकाशित करने का मेरा उद्देश्य समझ लेने पर उक्त शिकायत के लिये गुञ्जाइश नहीं रह जायगी। मैंने उक्त संग्रह को केवल यह दिखाने के लिये प्रकाशित किया था कि गाँव के कण्ठस्थ साहित्य में भी हमारे उच्च कोटि के साहित्य और समाज के लिये उपयोगी विषय हैं। उदाहरण के लिये मैंने कुछ नमूने के गीत चुनकर संग्रह में दे दिये थे। नमूने तो किसी भी प्रांत के दिये जा सकते थे। मैंने संयोग ही से पूर्वी जिलों के ज़्यादा नमूने चुन लिये थे। मुख्य अभिप्राय समूचे ग्राम-गीत-साहित्य की उपयोगिता सिद्ध करने का था, न कि किसी खास जिले या सूबे के गीतों

की विशेषता बताने का। मेरा उद्देश्य समझने में भूल हो रही है, इसीसे ऊपर की शिकायत को मौका मिला है।

गीतों की मूल बोली या भाषा का पता लगाना बहुत कठिन ही नहीं, असंभव-सा है। क्योंकि गीत उत्पन्न होकर भाषा के प्रवाह में तैरते चलते हैं। मनुष्य के कंठ ही उनके घाट हैं। उपयुक्त कण्ठ पाकर कोई कहीं बसेरा ले लेता है, कोई कहीं। उनपर उनके आसपास का ऐसा प्रभाव पड़ जाता है कि उनका मूल रूप कायम नहीं रहता। इससे जहाँ वे गाये जाने लगते हैं, वहाँ के बहुत से शब्द, जो पर्यायवाची होते हैं, उनमें बैठ जाते हैं और उनके मूल शब्दों को स्थान-च्युत कर देते हैं। इससे कौन-सा गीत पहले-पहल कहाँ बना, इसका पता नहीं लगाया जा सकता। केवल इस बात का पता लग सकता है कि कौन-सा गीत कहाँ गाया जाता है।

स्त्रियों के गीतों में तो और भी गड़बड़ी रहती है। क्योंकि कन्यायें विवाहिता होकर जब दूसरे स्थानों को जाती हैं, तब अपनी असली बोली के गीत भी अपने साथ ले जाती हैं। उनकी ससुराल की बोली जुदा हुई, तो भी वे अपने गीतों में बहुत कम हेर-फेर करती हैं। एक तो शिक्षिता न होने के कारण हेर-फेर कर नहीं सकतीं; दूसरे अपरिचित बोली के शब्दों की प्राकृतिक मिठास से वे परिचित भी नहीं होतीं, इससे अपने परिचित शब्दों को बदलना वे पसंद भी नहीं करतीं। और जहाँ वे जाती हैं, वहाँ भी प्रायः उनके जाने हुये सब प्रसंगों के गीत वहाँ की बोली में मौजूद मिलते हैं, इससे हेर-फेर की जरूरत भी नहीं पड़ती। पर वे अपने लड़कपन के याद किये हुये गीतों को अधिक सरस समझती हैं और जब उनसे पूछा जाता है, तब उन्हीं गीतों को वे लिखाती

तथा लिखकर भेजती भी हैं। यही कारण है कि कभी-कभी पश्चिमी जिलों से पूर्वी जिलों में गाये जानेवाले गीत मिल जाते हैं, और पूर्वी जिलों के गीत पश्चिमी जिलों में।

मैंने इस पुस्तक में जितने गीत दिये हैं, अधिकांश में उनके जिलों के नाम भी दिये हैं; पर यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि वास्तव में वे उसी जिले के गीत हैं, या आसपास के दूसरे जिलों के, जहाँ से कन्यायें उन्हें ले गई हैं। मैंने जो जिलों के नाम दिये हैं, उसका अभिप्राय केवल इतना ही है कि मुझे उन-उन जिलों से वे गीत प्राप्त हुये थे।

भाषा या बोलियों के अनुसार गीतों का विभाग करना बहुत मुश्किल है। किसी-किसी जिले में एक से अधिक बोलियाँ बोली जाती हैं। जैसे, जौनपुर के पश्चिमी हिस्से में अवधी और पूर्वी हिस्से में भोजपुरी का मिश्रण मिलता है। अवधी और ब्रजभाषा के सरहद्दी जिलों में भी बोलियों का मिश्रण मिलता है। यही कारण है कि एक-एक गीत में दो-दो तीन-तीन बोलियों के शब्द पाये जाते हैं।

भाषा की दृष्टि से युक्तप्रांत के गीतों के केवल दो ही विभाग किये जा सकते हैं—पूर्वी जिलों के गीत और उसके पश्चिम के जिलों के गीत। अवध के कुल जिले पूर्वी प्रांत में शामिल होंगे और उसके पश्चिम के पश्चिमी प्रांत में।

मैंने सन् १९२५ से १९३० तक लगातार देशभर में घूम-फिरकर, मासिकपत्रों में लेख लिखकर तथा डाक-द्वारा पत्र भेजकर लगभग १५ हज़ार ग्राम-गीतों का संग्रह किया था। इस पुस्तक में जो साहित्य दिया गया है, सब उसी संग्रह से लिया गया है। मैं अपने संग्रह को समुद्र की एक बूँद के बराबर भी

नहीं मानता हूँ। यद्यपि १६३० के बाद भी मेरा प्रयत्न अबतक जारी है, पर इसका कार्य-क्षेत्र ऐसा असीम दिखाई पड़ा और सहायक इतने कम मिले कि अब मेरे उत्साह में शिथिलता आ गई है। संग्रह का काम किसी एक व्यक्ति के बूते का नहीं है, बल्कि गवर्नमेंट या अच्छी शक्तिशालिनी किसी संस्था के करने का है।

सभी ग्राम-गीत संग्रहणीय नहीं होते। उनमें कूड़ा-कचरा भी बहुत है। अच्छे पारखी ही उनमें से रत्नों को ढूँढ़ निकाल सकते हैं। अतएव योग्य व्यक्तियों ही को इस कार्य में लगना चाहिये।

जो गीत और कहावतें मैंने इस पुस्तक में और इससे भी पहले अपने 'ग्राम-गीत' में दी हैं, उनसे कहीं अधिक सरस और उपयोगी गीत और कहावतें अभी ग्रामीणों के कंठों में हैं। वहाँ से निकालकर उन्हें पुस्तकाकार प्रकाशित कर देना बहुत ज़रूरी है।

योरप और अमेरिका में ग्राम-साहित्य के संग्रह का कार्य बहुत जोरों पर हुआ है। वहाँ गीतों के रेकार्ड तैयार किये गये और नृत्यों के फ़िल्म। इस देश में भी ऐसा ही उद्योग करने की शीघ्र ज़रूरत है। क्योंकि जितने वृद्ध स्त्री-पुरुष रोज़ मर रहे हैं, उनमें से हरएक ग्राम-साहित्य की सम्पत्ति को कम ही करता जा रहा है।

ग्राम-साहित्य के संग्रह में कठिनाइयाँ बहुत हैं। सबसे बड़ी कठिनाई धैर्य सँभालने की है। क्योंकि गाँव के लोग बोलकर लिखा नहीं सकते। इसका उन्हें अभ्यास ही नहीं होता। वे जब गाने की तरंग में आते हैं और गाने लगते हैं, तभी सुन-सुनकर

गीत लिखे जा सकते हैं। वे जानते ही नहीं कि कहावतें और महावरे क्या चीज़ हैं। जब वे आपस में बातचीत करने लगते हैं, तब उनके मुँह से वाक्य-वाक्य में कहावतों और महावरों का ताँता लग जाता है। सावधान संग्रह-कर्ता चुन-चुनकर उन्हें लिख ले सकता है।

परदे की प्रथा के कारण स्त्रियों के गीत मिलने में और भी कठिनाई है। इसके लिये मेले-ठेले में उनके झुण्ड के साथ काग़ज़-पेंसिल लेकर चलना पड़ेगा। धान का खेत निराते समय मेंड़ पर, छत कूटते समय छत पर और चक्की पीसने के समय रात के आखिरी पहर में गृहस्थ के घर के पिछवाड़े, बैठना पड़ेगा। नीची श्रेणी के लोगों के शादी-ब्याह में सम्मिलित होना, जाड़े की रात में अलाव के पास बुड्ढों के साथ बैठकर बातें करना और जाड़े की आधीरात से चलनेवाले ईख के कोल्हू के निकट बैठकर, थर-थर काँपते हुये, गीत लिखना पड़ेगा। कठिन तपस्या है। मैंने अनुभव करके देख लिया है।

कितने ही गीत अधूरे मिलते हैं, जिन्हें कई गाँवों में सुन-सुनकर पूरा करना पड़ेगा। ग्राम-गाथाओं को महीनों बैठकर सुनना पड़ेगा। किसानों और मज़दूर पेशेवालों की फ़ुरसत का भी सवाल है, जो पैसे से हल होगा।

इस काम में, जबतक देश के विद्वान् और सुशिक्षित युवक अपनी आत्म-प्रेरणा से न प्रवृत्त हों, तबतक लाखों रुपये का खर्च है, और कोई गवर्नमेंट ही इसे करा सकती है। जहाँ ग्राम-सुधार के लिये सरकार हर साल लाखों रुपये खर्च कर रही है, वह प्रति वर्ष वह बीस-पचीस हज़ार रुपये भी इस काम में खर्च

करे, तो मेरा अनुमान है कि तीन-चार वर्ष के लगातार परिश्रम से एक प्रांत का पूरा कंठस्थ साहित्य लिपि-बद्ध हो जायगा।

इस पुस्तक में प्रकाशित कुछ गीतों और प्रायः सब कहावतों में उनके जिले के नाम नहीं दिये गये हैं। इसका कारण यह है कि मुझे स्वयं उनके जिले मालूम नहीं हैं। उनमें से कुछ तो कई जिलों में बिना किसी पाठान्तर के प्रचलित हैं।

यदि सूबों की सरकारें ग्राम-साहित्य के संग्रह का काम उठा लेती हैं तो मेरा विश्वास है कि वे इसके द्वारा साहित्य ही को नहीं, देश के अन्य विषयों को भी बहुत लाभ पहुँचायेंगी। और ग्राम-सुधार का काम तो ग्राम-साहित्य के अच्छे अध्ययन के बिना कभी सफल हो ही नहीं सकता, यह मेरा दृढ़ विश्वास है।

ग्राम-साहित्य के संक्षिप्त परिचय में मैंने ग्राम-साहित्य के बारे में कुछ बहुत आवश्यक बातें लिखी हैं। आशा है, उन पर सरकार के शिक्षा-विभाग और हमारे शिक्षित-वर्ग का भी ध्यान आकर्षित होगा।

अंत में मैं युक्तप्रांत के शिक्षा-विभाग के सेक्रेटरी श्रीयुत एन० सी० मेहता को धन्यवाद देना अपना कर्त्तव्य समझता हूँ, जिनकी प्रेरणा से मुझे कल्याण-कारी ग्राम-साहित्य को इस रूप में जनता के सामने उपस्थित करने का सौभाग्य फिर प्राप्त हुआ।

हिन्दी-मन्दिर, प्रयाग
वसंत-पञ्चमी, १९९६

रामनरेश त्रिपाठी

ग्राम-साहित्य के संक्षिप्त परिचय की

सूची

ग्राम-साहित्य का संक्षिप्त परिचय

ग्राम-साहित्य की रूप-रेखा

प्राचीन भारतवर्ष क्या था ? और उसके निवासियों का सच्चा स्वरूप क्या है ? यह अगर जानना और समझना हो, तो हमें ग्राम-साहित्य का अच्छा अध्ययन करना चाहिये।

जब हम किसी चमार के घर में 'सोने की थरिया मैं जेंवना परोस्यों' या 'खोलौ न चन्दन केवड़िया' वाला गीत गाया जाता हुआ सुनते हैं, तब हमें मानना पड़ता है कि किसी समय चमार के घर में भी सोने की थाली और चन्दन के किवाड़े रहे होंगे। और न रहे होंगे तो भी उसके दिमाग़ तक तो वे पहुँच ही गये थे। या जब चमारिन युवती गाती है—

> जौ हम होई सतवन्ती हो ना।
> मोरे अँचरा भभकि उठै अगिया हो ना॥

तब भारतीय नारी के सती-धर्म की एक मनोहर मूर्ति हमारे ध्यान में उतर आती है, जिस पर किसी समय हमारे देश की चमारिन भी गर्व करती थी। आज तो उसके घर में काँसे की फूटी थाली भी मुश्किल से मिलेगी और उसके फूस के झोपड़े में केवाड़ों की ज़रूरत ही नहीं है; तथा ग़रीबी के कारण उसका चरित्र-बल भी क्षीण हो चला है। पर उसने अपने सुख के दिनों की मधुर स्मृति अभीतक अपने गीतों में पिरो रक्खी है, जिसकी खिड़कियों से हम प्राचीन भारतवर्ष के वैभव और विलास को झाँककर देख सकते हैं। इसलिये पहले-पहल हमें उसीके द्वार से गाँव में प्रवेश

करना चाहिये। तभी हम गाँव के स्वरूप को ठीक-ठीक पहचान सकेंगे और उसकी उन्नति में सहायक हो सकेंगे।

ग्राम-साहित्य' को हम नीचे लिखे वर्गों में बाँट सकते हैं :—

१—संस्कारों के गीत।
२—व्रतों और त्योहारों के गीत।
३—ग्राम-गाथायें।
४—ग्राम-कथायें।
५—मन्दिरों में गाये जानेवाले पद।
६—राह के गीत।
७—खेत के गीत।
८—भिखमंगों के गीत।
९—भिन्न-भिन्न जातियों के गीत।
१०—कोल्हू के गीत।
११—चक्की के गीत।
१२—ऋतुओं के गीत।
१३—बच्चों के गीत, खेल और कहानियाँ।
१४—गाँव में मनोरञ्जन के साधन—मेले और तमाशे।
१५—गाँव के खेल।
१६—गुड़ियों के गीत।
१७—ग्राम-संगीत (नाच और गीत)।
१८—नाच और उनके तरीक़े।
१९—बाजे और उनके उपयोग।
२०—नीति की कहावतें।
२१—स्वास्थ्य की कहावतें।

२२—खेती की कहावतें।

२३—बुझौवल और ढकोसले।

२४—नये-नये शब्द और मुहावरे।

२५—मनुष्य और पशु के रोगों के नुस्खे।

२६—पेशेवरों के शब्द।

२७—जड़ी-बूटियों की पहचान और उनके उपयोग।

२८—मुसलमानों के घरों में प्रचलित गीत।

गाँव का स्वरूप

असली हिन्दुस्तान शहरों में नहीं, गाँवों में है। शहरों में अरब और योरप घुस आये हैं; पर गाँव की मूल संस्कृति और प्रकृति अभीतक उसी हालत में है, जिस हालत में वह चन्द्रगुप्त और अशोक के ज़माने में रही होगी। अन्तर पड़ा है तो केवल धन का। पहले-जैसा धन अब गाँवों में नहीं है, बल्कि घोर निर्धनता है। पर निर्धनता का उसकी नींव पर अभीतक बहुत ही कम प्रभाव पड़ा है।

गाँव को गाँव की दृष्टि से देखिये, तभी वह सुन्दर मालूम होगा। गाँव को अन्दर से देखिये, तभी उसकी सम्पूर्णता समझ में आयेगी। अभी जो हम गाँववालों को असभ्य, गंदे और अस्त-व्यस्त-सा पाते हैं, उसका पहला कारण तो उनकी असह्य ग़रीबी है; और दूसरा यह कि हम उन्हें योरप की आँखों से देखते हैं, इसीसे उनमें असंख्य त्रुटियाँ दिखाई पड़ती हैं। हम में उनकी त्रुटियाँ ही देखने का अभ्यास भी डाला गया है। उनकी त्रुटियाँ ही त्रुटियाँ हमें बताई भी जाती हैं और हम उन्हे अपनी प्रखर प्रतिभा से बढ़ाते भी रहते हैं, इससे उनसे हमें घृणा होती जाती है।

ग़रीबी किसी तरह हट जाय तो गाँववालों में अनेक ऐसे सद्गुण चमक उठेंगे, जो संसार के किसी भी सभ्य-समाज के लिये आदर्श माने जायँगे और जो पैतृक-सम्पत्ति की तरह हज़ारों पीढ़ियों से उनके पास हैं।

गाँव की प्राचीन व्यवस्था का अच्छी तरह अध्ययन किया जायगा तो वह एक आदर्श व्यवस्था साबित होगी। किसी ज़माने में गाँव में शिक्षा, न्याय, सहयोगिता, स्वास्थ्य, चरित्र-निर्माण और गृह-प्रबन्ध आदि की स्वतन्त्र और उत्तम व्यवस्था थी। इन सब को मिलाकर वह सम्पूर्ण था और उसे बाहरी सहायता की बहुत ही कम आवश्यकता थी। विदेशी सभ्यताओं ने उसके रूप को छिन्न-भिन्न कर दिया है। इसीसे हम उसके असली रूप को, जो अब उसके टुकड़ों में वर्तमान है, नहीं देख पाते हैं और वह हमें अप्रिय-सा लग रहा है।

शिक्षा

सबसे पहले शिक्षा को लीजिये :—

यह कहा जाता है कि गाँववालों में शिक्षा का अभाव होता है, यह सर्वांश में सत्य नहीं है। यह हम मानते हैं कि उनको अक्षर-ज्ञान नहीं होता, और इसीसे आँख-द्वारा मिलनेवाली शिक्षा से वे वंचित होते हैं। पर कान-द्वारा मिलनेवाले ज्ञान से वे रहित नहीं होते। वे ऐसे पूर्वजों के प्रतिनिधि हैं, जिन्होंने किसी दिन सारी पृथ्वी पर अपनी सभ्यता का प्रसार किया था और अपने ज्ञान के आलोक से मनुष्य-जीवन को चमत्कृत कर दिया था। इससे सभ्य-समाज में प्रचलित अनेक सद्गुण उनको

परम्परा से प्राप्त हैं, जो उनके साथ रहकर व्यवहार करने पर प्रकट होते हैं।

यह सच है कि वे हाईस्कूल और युनिवर्सिटी तक नहीं पहुँच पाते; पर कान से सुनकर मनुष्यता के जो लक्षण वे जान लेते हैं और जिन्हें वे व्यवहार में भी लाते हैं, उनसे क्या उनको शिक्षित नहीं माना जा सकता?

हमें उनकी सच्ची हालत की अच्छी तरह जानकारी प्राप्त करके ही उनके विषय में कोई बात बोलनी चाहिये।

मौखिक युनिवर्सिटी

गाँव का सारा समाज एक अद्भुत युनिवर्सिटी-जैसा है। जिसमें चमार से लेकर ब्राह्मण तक एक दूसरे को ज्ञान-दान करते रहते हैं और सभी गुरु और सभी शिष्य हैं। ज्ञान में वहाँ छूत नहीं है। चमार के मुख से गाये हुये भजनों से वहाँ ब्राह्मण पंडित वैसा ही आनन्द अनुभव करते हैं जैसा वे वाल्मीकि, व्यास और कालिदास के काव्यों से। और वह मौखिक युनिवर्सिटी हजारों वर्षों से, बिना किसी वाइस चांसलर की देख-रेख और बिना एक पैसे के खर्च के चल रही है।

गाँव की मौखिक युनिवर्सिटी में बचपन के लेकर मृत्यु की अन्तिम सीढ़ी तक शिक्षा के अलग-अलग कोर्स हैं और हरएक को उसकी आयु के अनुसार आप से आप शिक्षा मिलती रहती है। वहाँ वृद्धावस्था के लिये उपयोगी शिक्षा का भार बचपन ही में नहीं लाद दिया जाता।

कथा-प्रणाली

गाँव में बहुत प्राचीन काल से कथा कहने की प्रणाली प्रचलित है और इससे समाज को बहुत लाभ पहुँचा है।

बड़े-बड़े गाँवों में प्रायः प्रत्येक वर्ष कोई न कोई कथा-वाचक आते रहते हैं और गाँववालों की रुचि के अनुसार रामायण, महाभारत, श्रीमद्भागवत या दूसरे किसी पुराण की कथा कहते हैं। गाँव के स्त्री-पुरुष बड़ी श्रद्धा से कथा सुनते हैं और अपनी शक्ति और श्रद्धा के अनुसार कथा की समाप्ति पर कथा-वाचक को पैसा, रुपया, वस्त्र और अन्न आदि देकर संतुष्ट करते हैं। कथा-वाचक लोग मूल कथाओं के साथ और भी किस्से-कहानियाँ, और सामयिक घटनाओं की बातें कहते रहते हैं, तथा बुराइयों की कड़ी आलोचना भी करते हैं, इससे गाँव के स्त्री-पुरुषों को अपने गुणों और दोषों की जानकारी होती रहती है और वे कथा-वाचक के थोड़े परिश्रम से, थोडे समय में इतना अधिक ज्ञान पा जाते हैं, जितना शायद वे गाँव की पाठशाला या स्कूल से न पाते।

पुरानी और नवीन शिक्षा-प्रणाली में एक मौलिक अन्तर है। पुरानी शिक्षा-प्रणाली का माध्यम कान है; और नई का आँख। पहले लोग सुनकर अधिक सीखते थे और अब पढ़कर। दोनों में श्रेष्ठ कौन है ? यह प्रश्न विचारणीय है। वेद का नाम श्रुति इसीलिये है कि वह सुना जाता है। 'स्मृति' को स्मरण रखना पड़ता है; क्योंकि वह कानून का संग्रह है।

गाँव में कथावाली प्रणाली बहुत लाभदायक सिद्ध हुई है। इससे अपढ़ लोग भी हिन्दू-सभ्यता के मूल सिद्धान्तों से अवगत होते रहते हैं और अपने चरित्र में उनका प्रभाव भी पड़ने देते रहते हैं।

शिक्षा का आरम्भ

गाँवों में शिक्षा का आरम्भ माँ की गोद ही से हो जाता है। पहले बच्चे को बोलचाल के कुछ शब्द रटाये जाते हैं; फिर कुटुम्बियों के उपनाम जैसे, बाबा, दादा, चाचा, काका, भाई और बहन आदि तथा घर की चीजों के नाम बताये जाते हैं।

जब बच्चा घर के बाहर निकलने लगता है और वह कुत्ते, बिल्ली, गौरैया, गाय, भैंस, बैल, बछड़ा, गीदड़ आदि जानवरों और गृहस्थ से सम्बंध रखनेवाले नाई, धोबी, ग्वाला, कुम्हार, माली, पुरोहित, कहार आदि पेशेवरों से परिचित हो जाता है, तब उसे उनसे संबंध रखनेवाली कहानियाँ, गद्य और पद्य दोनों में, सुनाई जाती हैं, जिनसे उसे वस्तु-ज्ञान कराया जाता है, तथा शब्दों के प्रयोग की विधि और व्यवहार-कुशलता सिखाई जाती है।

बच्चों की शिक्षा का जो स्वरूप गाँवों में प्रचलित है, वह उनके लिये बहुत ही उपयोगी है, और विश्लेषण करने पर वह विज्ञान-सम्मत भी साबित होगा।

गीत, खेल और कहानियाँ

बच्चों को लोरियों, खेलों और कहानियों-द्वारा शिक्षा दी जाती है। माँ मधुर स्वर से गा-गाकर बच्चे को जगाती और सुलाती है। बच्चे लोरियाँ सुनते-सुनते सोना बहुत पसंद करते हैं। जिन्होंने शुरू-शुरू में लोरियों की प्रथा चलाई, उनको ज़रूर मालूम था कि किस तरह कान-द्वारा बच्चे के दिमाग पर नींद का जादू डाला जा सकता है।

बच्चा जब जाग उठता है, और उसे बहलाने की ज़रूरत

होती है, तब उसका बड़ा भाई, बहन, पिता, चाचा या घर का और कोई वयस्क व्यक्ति उसे गोद में उठा लेता है और घर में या बाहर किसी खाट पर चित लेटकर, अपने दोनों घुटनों को बराबर मोडकर, टाँगों पर उसे बैठा लेता है और यह गीत गाता है:—

खता-मता लेई थै, एक कौड़िया पाई थै; गंगा में बहाई थै, गगा माई बालू दिहिन; ऊ बालू हम भुजवा क दीन, भुजवा हम्मैं लाई दिहेस; ऊ लाई घसिकरवै दीन, घसिकरवा हम्मैं घास दिहेस; ऊ घसिया हम गैया क दीन, गैया हम्मैं दूध दिहेसि; वहि दुधवा का खीर पकायउँ, खिरिया गै जुड़ाइ; भैया गै कोहाँइ, बहिनी गै मनावै, चला भैया खाइ ला; भैया मारेन दुइ लात।

बीच से इसका एक पाठान्तर यह भी मिलता है:—

ऊ लावा हम कोहँरा क दीन; कोहँरा हम्मैं हाँड़ी दिहेस; वहि हँड़िया में खीर पकाये—

बाकी सब पहले जैसा।

एक पाठांतर यह भी है:—

ऊ लौवा हम मलिया क दीन; मलिया हम्मैं फूल दिहेस; ऊ फुलवा हम राजा क दीन, राजा हम्मैं घोडा दिहेन; ऊ घोडवा हम भैया क दीन। घोड़ा चढि के भैया गयेन, बहिनी क मनावै; बहिनी आइ हँसइ लागि; हँसी देखै चिरई आइ। चिरई दिहेसि दाना। ऊ दनवा घसिकरवा क दीन; घसिकरवा दिहेन घास। ऊ घसिया हम गइया क दीन, गैया दिहेथि दूध। ओहि दुधवा क खीर पकाये—

शेप पहले जैसा।

गीत के अंत में खेलानेवाला 'पु-लु-लु-लु' कहकर टाँगों को

इतना ऊपर उठा लेता है कि बच्चा खेलानेवाले की छाती पर सरक आता है, और उसका मुँह खेलानेवाले के मुँह के पास आ जाता है, जिसे वह चूम लेता है।

गीत पर ग़ौर करके देखिये तो मालूम होगा कि इस गीत-द्वारा बच्चे को घर के आसपास की कितनी वस्तुओं का ज्ञान करा दिया जाता है। कौड़ी, गंगा, बालू, भड़भूँजा, लाई, घसियारा, घास, गाय, दूध, खीर, कुम्हार, हाँड़ी, फूल, माली, राजा, घोड़ा, बहन, हँसी, चिड़िया, दाना आदि कितने ही शब्द, नये-नये वाक्य और क्रियायें, कुम्हार, माली आदि पेशेवर और उनके काम बच्चे को बता दिये जाते हैं। अन्त में भाई के हृदय में बहन के लिये प्रेम उत्पन्न करने का बीज बो दिया जाता है। 'भैया मारेन दुइ लात' सुनकर भैया पैर चलाये बिना रह नहीं सकते। फिर टाँगें ऊँची करने पर बच्चा जब छाती पर सरक आता है और उसका मुँह चूम लिया जाता है, तब वह भीतर ही भीतर कितना आनंद अनुभव करता होगा, यह कल्पनातीत है।

रात में जब चाँद दिखाई पड़ता है, माँ या बहन चाँद की ओर हाथ उठाकर बच्चे को दिखलाती है और गाती है:—

चंदामामा धाइ आवा, धुपाइ आवा,
टाटी क्योंड़ा देत आवा,
घी का लोंदा लेत आवा,
भैया के मुँह में डारि द, घुट्टक से।

'घुट्टक से' बच्चा दूध पीता है। गीत सुनकर उसे दूध पीने की याद आती है। टाटी-क्योंड़ा क्या है और क्यों दिया जाता है, इससे उसमें जिज्ञासा करने की प्रवृत्ति जगाई जाती है।

चार-पाँच बरस का होने पर लड़का टोले-महल्ले के लड़कों के साथ खेलने निकलता है। उसके लिये छोटे-छोटे खेल हैं, जो घर के अन्दर खेले जाते हैं। एक खेल यह है :—

किसी दालान में पाँच लड़के जमा कर लिये जाते हैं। चार लड़के अपने-अपने हाथों की मूठियाँ बाँधकर एक के ऊपर एक रखते हैं। पाँचवाँ लड़का नीचे लिखा गीत गाकर अपने हाथ की पहली उँगली से एक-एक मूठी को मारकर हटा देता है :—

आत तोरौं पात तोरौं तोरौं बन का खाम्का।
हथिया पर घुनघुनवा बाजै चमकि उठैं सब राजा॥
राजा क रजाई फाटै भैया क दुपट्टा।
हींचि हींचि मारै मुसरी क बच्चा॥

गीत का कुछ अर्थ नहीं है। खेल के शुरू में इसे मङ्गलाचरण समझिये। जिसकी मूठी पर गीत का अन्तिम शब्द गिरता है, वह 'चोर' घोषित कर दिया जाता है और उसे वहीं छोड़कर तत्काल चारों लड़के भाग-भागकर दालान के चारों कोनों पर खड़े हो जाते हैं। 'चोर' उनको छूने दौड़ता है। 'चोर' जिसके पास पहुँचता है, वह झट से बैठ जाता है। जो खड़ा रह जाता है, और 'चोर' से छुवा जाता है, वह 'चोर' होकर उसी तरह दौड़-दौड़कर दूसरों को छूने लगता है; और पहले वाला 'चोर' उसकी जगह पर खड़े होने और बैठने लगता है।

यह खेल बिना दाम-कौड़ी का है। एक दालान में, घर के अन्दर खेला जाता है। इससे बच्चों को राह के खतरे का और भूल-भटक जाने का भी भय नहीं रहता।

घर के अन्दर के खेल ६—७ बरस की उम्र तक के लड़कों

के लिये बने हुये हैं। इसके बाद कुछ बड़े खेल, जिनमें ज़्यादा लड़के शामिल होते हैं, खेलने को मिलते हैं।

क्वार और कातिक के महीने में जब खेत अगली फ़सल के लिये जोत दिये जाते हैं, तब लड़के और नौजवान भी खेत का खेल प्रायः रात में खेलते हैं, जिनसे सारे खेत के ढेले भी फूट जाते हैं।

जाडे और गरमी में वे कबड्डी खेलते हैं। पेड़ पर चढ़ने और पानी में तैरने के खेल भी वे खेलते रहते हैं, जिनसे पेड़ पर चढ़ना और पानी में तैरना उन्हें बिना कुछ खर्च के आ जाता है। बरसात में अखाड़ों में कुश्ती लड़ने और लम्बी कूद का खेल होता है। इस तरह लड़कों को बौद्धिक और शारीरिक शिक्षा साथ-साथ चलती है।

मानसिक शिक्षा के लिये कहानियाँ कही जाती हैं।

गाँव की कहानियों और स्कूली रीडरों की कहानियों में मौलिक अन्तर होता है। रीडरों की कहानियाँ ज़्यादातर योरप से आई हैं। उनमें दिमाग़ी कतर-ब्योंत ही अधिक होती है, भारत के सात्विक जीवन को पौष्टिक आहार देनेवाले तत्त्व कम। किसी में लोमड़ी ने चालाकी से कौवे का टुकड़ा कैसे छीन लिया' का जिक्र होता है; किसी में 'मकड़ी ने मक्खी को कैसे फँसा लिया' की चालाकी बतलाई गई होती है; और किसी में भेड़िये और मगर को धोखा देनेवाली बात होती है। निश्चय ही बच्चे का दिमाग़ विलायती कहानियों के प्रभाव से धोखा, चतुराई और धूर्तता के साँचे में ढल जाता होगा। दिमाग़ और शरीर को उत्तेजना देनेवाली और अङ्ग-संचालन की ज्यादा क्रियायें करानेवाली कहानियाँ योरप के ठण्डे मुल्कों के लिये तो लाभदायक हो सकती हैं, पर हिन्दुस्तान-जैसे गरम मुल्क के लिये

हृदय में शांति, सुख और सात्विक रस उत्पन्न करनेवाली कहानियाँ ही अनुकूल पड़ेंगी। कहानियों का सम्बन्ध केवल बुद्धि या मन ही से नहीं होता, शरीर के स्वास्थ्य से भी होता है। पूर्व और पश्चिम की कहानियों में जो मौलिक अन्तर है, उसीसे मालूम होता है कि दोनो ओर की कहानियों की रचनाओं पर जलवायु की सरदी और गरमी का भी असर पड़ा हुआ है। अतएव बच्चों के लिये उनके असली मुल्क की कहानियाँ ही स्वास्थ्यकर हो सकती हैं।

गाँव की पुरानी कहानियो की प्रकृति ही दूसरी होती है। जैसे, एक राजा था; उसके सात बेटे थे। राजा ने कहा—जो बेटा फलाँ टापू से फलाँ फल ला देगा, उसे वह आधा राज-पाट दे देगा। सातो बेटे अलग-अलग राहों से जाते हैं। रास्ते के अनेक कष्ट भोगते हैं। अन्त में सबसे छोटा बेटा ही सफल होकर लौटता है। राजा उसे आधा राज देता है। बेटा उसे बड़े भाई को सौंप देता है।

ऐसी कहानियों से बच्चों में साहस के काम करने का हौसला तो बढ़ता ही है, रास्ते के कष्टों का और उनसे छुटकारा पाने का ज्ञान भी उनको हो जाता है। और आधा राज पाकर उसे बडे भाई को सौंप देने का महत्व-पूर्ण त्याग भी उनको हृदयङ्गम करा दिया जाता है।

सबसे बड़ी विचित्रता गाँव की कहानियों में यह होती है कि उनमें, प्रायः सब में, सबसे छोटे भाई ही को जिताया जाता है। क्योंकि वे छोटे बच्चे के लिये ही होती हैं, जिसे उत्साहित करना ज़रूरी होता है। कभी बड़ा भाई भी छोटा था, तब वही कहानी उसके लिये थी।

कुछ कहानियाँ गद्य में होती हैं, कुछ पद्य में ; और कुछ गद्य-पद्य दोनों में। गद्य और पद्य दोनों की कहानियों की भाषा बोल-चाल की, सरल, सुबोध और छोटे-छोटे वाक्योंवाली होती है, जिससे बच्चे के नन्हे-नन्हें फेफड़ों पर ज्यादा बोझ नहीं पड़ता।

नौजवानों का साहित्य

नौजवानों के लिये जवानी के उमग को बढ़ानेवाले प्रेम और शृङ्गार-रस के गीत, पूर्वजों के सच्चे अनुभवों को बतानेवाली नीति की कहावतें, स्वास्थ्य के लिये चुटकुले और धनोपार्जन के लिये खेती की कहावतें आदि ज्ञान-वर्द्धक पाठ उनके कठ में मौजूद होते हैं।

अधेड़ों और वृद्धों का साहित्य

अधेड़ों और वृद्धों के लिये जीवन में शांति का सुख भरने वाले भजन हैं, जिन्हें वे मन्दिरों में बैठकर, तीर्थ-यात्रा में या सुबह शाम अपनी बैठक में, गाते रहते हैं। जो नहीं गा सकते, या जिनको गाने का अवकाश नहीं मिलता, उन्हें सरवन, गोपीचद भरथरी आदि गानेवाले भिखमंगे, शिव-पार्वती का विवाह गानेवाले जोगी, संतों के भजन गानेवाले रैदास भगत, संसार की असारता के पद गानेवाले मँगते साधू और फकीर घूम-घूमकर गाते और सुनाते रहते हैं। शिक्षा-प्रचार का काम प्रातःकाल के चार बजे से, जब से मदिरों में ठाकुरजी जागते हैं, और मसजिदों में अज़ान दी जाती है, रात के दस बजे तक, सोने के समय तक, बराबर जारी रहता है।

जब राह में डोली उठाये हुये कहार गाते हुये चलते हैं:—

घै देख्यो राम हमारे मन घिरजा।
सब की महलिया रामा दिअना बरतु हैं,
हरि लेत्यो हमरो अँधेर। हमारे मन घिरजा० ॥

तब क्या हजारों राही-बटोही, खेत में काम करनेवाले किसान और गाँव के अन्य निवासी उनके गीतों से प्रभावित नहीं होते होंगे ?

जातीय गीत

गाँव की प्रत्येक जाति ने, यहाँ तक कि जंगल में बसनेवाले मुसहर तक ने, अपने जातीय गीत अलग बना रक्खे हैं। उनके गीतों में उनके सामाजिक जीवन के लिये प्रोग्राम होता है। उनके गाने के स्वर और बाजे भी अलग होते हैं।

जातीय नाच

केवट, मल्लाह, मुसहर, अहीर, चमार, धोबी, पासी, नाई, भड़भूजा, गड़रिया, कहार, कुम्हार और हेला (भङ्गी) लोग अपने जातीय उत्सवों में खुद नाचते और गाते हैं। सबके नाच और गाने के तरीक़े तथा बाजे जुदा-जुदा होते हैं। कुछ लोग तो सूप ही बजाकर गाते और नाचते हैं।

प्राचीन काल में शिवजी नाचते थे, श्रीकृष्ण नाचते थे; अर्जुन नृत्य के गुरु बने थे; उनकी नृत्य-कला अब चाहे विकृत रूप ही में क्यों न हो, अभीतक गाँवों में सुरक्षित है। कुछ दिनों से पश्चिमी शिक्षा के प्रभाव से हमारे शिक्षित-वर्ग में भी नृत्य-कला के लिये अनुराग उत्पन्न हुआ है सही, पर अच्छी तरह विश्लेषण किया जायगा तो भारतीय नृत्य-कला, जो गाँव की विभिन्न

जातियों में बिखरी हुई मिलती है, पश्चिमी नृत्य-कला से बहुत बातों में विशेष कला-पूर्ण साबित होगी।

अहीरों का नाच नाच देना शायद योरप और अमेरिका दोनों के लिये मुश्किल होगा। उनकी 'फरी' देखकर सरकस वाले भी दंग हो जायँगे।

नृत्य के गीतों की शब्द-योजना इस ढङ्ग की होती है कि जब वे अपने स्वर में गाये जाते हैं, तब सुननेवालों के अंग फड़कने लगते हैं। जैसे—

चितै दे मेरी ओर, करक मिट जाय रे।
हम चितवत तुम चितवत नाहीं,
तोरी चितवन में मन लागो हमार—
करक मिट जाय रे॥ इत्यादि

नाच के वक्त इसकी गति, ताल और लय पर इसके श्रोता और दर्शक अंग-संचालन के लिये विवश-से हो जाते हैं। जिन्होंने नाच के लिये गीतों का सृजन किया है, वे अवश्य नृत्य-कला के विशेषज्ञ रहे होंगे।

संकेताक्षर

गाँव की सम्पूर्णता प्रमाणित करने के लिये सबसे अधिक रोचक उदाहरण संकेताक्षरों का निर्माण है।

किसी सद्गृहस्थ की बैठक में जब दस-पाँच मिलने-जुलने वाले बैठे होते हैं और उनमें से किसीको किसीसे कोई गोपनीय बात, बिना दूसरों को सुनाये हुये, कहनी होती है, तब वह संकेताक्षरों के उपयोग से अपना कार्य सिद्ध कर लेता है। संकेताक्षरों के लिये गाँव में यह छंद प्रचलित है:—

अहि-फनि कमल चक्र टंकोर।'
तरुवर पब्बै यो ससिकोर॥
अँगुरिन अच्छर चुटकिन मत।
कहैं राम बूझैं हनुमत॥

इसमें अ से लेकर श तक अक्षरों को वर्गों में बाँट दिया गया है। वर्गों का पता हाथ की कई तरह की बनावटों, जैसे साँप के फन, कमल, चक्र, धनुष आदि से बताकर, फिर उँगलियों से वर्ग के अक्षर और चुटकियाँ बजाकर मात्रायें समझा दी जाती हैं। गुप्त रीति से काम निकालने का कैसा सहज तरीका है! ऐसा ही तरीका झण्डियों से बातचीत करने में बर्त्ता जाता है। कम से कम इतना तो हमें स्वीकार कर ही लेना चाहिये कि गाँववालों ने अपनी छोटी-छोटी कठिनाइयों पर भी ध्यान दिया है और उन्हें किसी न किसी रूप में उन्होंने दूर भी कर लिया है। उन्हें मूर्ख कैसे कहा जायगा?

सम-सामयिकता

गाँव के लोग असावधान नहीं कहे जा सकते। उनका ढाँचा ही इस क़िस्म का बना हुआ है कि वर्तमान-काल आपसे आप उनके अंदर सरक जाता है। एक उदाहरण लीजिये:—

रेल उनके लिये बिलकुल एक नई चीज थी; पर थोड़े ही दिनों के बाद उन्होंने बड़ी बारीकी से उसका गुण-दोष समझ लिया। एक अहीर, जो बुद्धिहीन गिना जाता है, अर्थ-शास्त्र की वह बात कहता है, जो युनिवर्सिटी के किसी प्रोफेसर के कहने की हो सकती है। वह राह में ज़ोर से गाता हुआ, गाँव भर को सुनाता हुआ चलता है:—

जब से छूटि रेल कै गाड़ी कटिगा जँगल पहाड़।
पैसा रहा सो गोड़े क सौंपेंउ पेटवा पीठि कै हाड़॥

अर्थात् जब से रेल चली; उसके रास्ते के जंगल और पहाड़ काट डाले गये। पास में जो पैसा था, उसे मैंने पैर को सौंप दिया। अर्थात् पैर को पैदल चलने न देकर उसके लिये टिकट खरीद लिया और पेट को पीठ के हाड़ (रीढ़) के सुपुर्द कर दिया। मतलब यह कि खाने के लिये पैसा नहीं रह गया तो पेट पिचककर रीढ़ से जा सटा। क्या यह एक मार्मिक आलोचना नहीं है?

एक उदाहरण और लीजिये—

महँगो पड़ती है, तब गाँव के मज़दूर-पेशा लोग बहुत दुःख पाते हैं। एक नौजवान अहीर ने महँगी से उत्पन्न अपनी एक स्वाभाविक 'पीर' को गाकर किस प्रकार अपने हमजोली नौजवानों की पीर को जगा दिया है! जरा सुनिये—

महँगी के मारे बिरहा बिसरिगा भूलि गई कजरी कबीर।
देखि के गोरी क उभरा जोबन अब उठै न करेजवा मँ पीर॥

एक अहीर युवक की यह अतर्पीड़ा क्या करुणाजनक नहीं? और क्या इसमें कवि की प्रतिभा नहीं झलक रही है?

कहत पर शेख सादो-जैसे महाकवि ने भी ऐसे ही भाववाला एक शेर बोस्ताँ (बाब १) में लिखा है:—

चुनाँ कहत-शाले शुदन दर दमिश्क।
कि याराँ फरामोश कर्दन्द इश्क॥

अर्थात् दमिश्क में ऐसा कहत पडा कि यारो ने इश्क को भुला दिया।

मेरी समझ में इश्क और दमिश्क का तुक मिलता देखकर

ही सादी को उक्त भाव सूझा था। अहीर के बिरहे में शायर की कल्पना नहीं है, हृदय की सच्ची अनुभूति है, और वह सादी के शेर से कहीं अधिक सरस है।

जिस समाज में अपने वर्तमान सुख-दुःख की आलोचना की शक्ति और मन की तरंगो को पकड़कर उनमें सरसता अनुभव करने की समझ मौजूद है, उसे बुद्धिहीन कैसे कहा जायगा?

स्त्री-साहित्य

गाँव में स्त्रियों की शिक्षा भी बचपन से, गुड़ियों के खेल के साथ, शुरू कर दी जाती है। गुड़ियों के खेल में लड़कियों को गृहस्थी की कुल शिक्षा मिल जाती है। जरा सयानी होने पर लड़कियाँ गीत सीखने लगती हैं, जिनमें उनके भावी जीवन में लाभ पहुँचानेवाले मानसिक रोगों के मधुर नुस्खे होते हैं, जिन्हें वे बहू बनने पर नित्य आज़माया करती हैं। जैसे,

एक बहू अपने पिता की एक ही पुत्री, कई भाइयों की एक ही बहन और अपने पति की बहुत प्यारी पत्नी थी। वह उक्त तीनों के प्यार की नींद में आनद से सोया करती थी। उसका सुख उसकी सास और ननद से देखा न गया। उन्होंने उसे झिड़की दी। बहू ने पिता, भाई और पति के प्यार का अभिमान प्रकट किया। पति ने उसका उत्तर सुन लिया। तब,

एतना बचन राजा सुनलेन सनहू न पवलेन,
राजा सारी रात सुतलें करवटिया त मुखहू न बोलैं।

पति रुष्ट हो गया। बहू ने कारण पूछा। तब पति ने कहा—

नाहीं मोरा जेवना बिगडले, न सेजिया मोर भइलेनि हो,
रानी! गंगा जमुन मोरी मैया, गरब बानी बोलिहु।

कारण जानकर चतुर बहू ने तत्काल अपनी भूल स्वीकार कर ली और कहा—

हमसे भइलि तकसिरिया सासु पग लागव।
राजा, मैया मनाइ हम लेब राउर हँसि बोलहु।

लड़कियों को बहू बनने पर किस तरह भूल स्वीकार करके जल्द से जल्द मनोमालिन्य को मन से निकाल देना चाहिये, यह शिक्षा ऐसे गीतों से उनको दी जाती है। और साथ ही यह भी बता दिया जाता है कि बहू को अपने पति की प्रसन्नता का और पुत्र को अपनी माता की सम्मान-रक्षा का कहाँ तक ध्यान रखना चाहिये। जिस समाज में पारिवारिक शांति-स्थापन के ऐसे गीत मौजूद हैं, उसे असभ्य कैसे कहा जायगा?

एक उदाहरण और लीजिये :—

एक नव वधू भोजन तैयार करके पति की बाट जोह रही है। पति आता है। बहू उससे देरी का कारण पूछती है। पति ने कहा—

बाबा की बगिया कोइलि एक बोलै कोइलि सबद सुनौं ठाढ़॥

बहू ने तत्काल कोयल को पत्र लिखा—

तनी एक बोलिया नेवरतिउ कोइलरि प्रभु मोर जेवने क ठाढ़॥

कोयल ने भी बहू को जवाब लिख भेजा—

ऐसइ बोलिया तुँ बोलि के दुलहिन, दुलहे न लेतिउ बिलमाय॥

कोयल ने कैसी मीठी चुटकी ली है! बहू की बोली कोयल की तरह मीठी हो तो घर में कितना सुख छा जाय। यह बात गीत में कितने सुन्दर तरीके से बता दी गई है।

स्त्री-गीतों की दुनिया में एक यह विचित्र बात भी पाई आती है कि सारे गीत सास के जीवन तक ही पहुँचकर समाप्त

हो जाते हैं। बहू जब स्वयं सास बन जाती है, तब उसकी सास का कोई भी समाचार हमें गीतों से नहीं मिलता। पुरुषों के लिये वृद्धावस्था के गीत और भजन बहुत-से हैं, जो उनको श्मशान तक पहुँचा आते है। उनमें स्त्री, पुत्र, पौत्र आदि की निस्सारता ज़ोरदार शब्दों में प्रकट करके पुरुष को परलोक के लिये उत्कंठित किया जाता है; पर स्त्रियों की वृद्धावस्था के लिए न गीत हैं, न भजन, न पद। वृद्धा स्त्रियों को निराधार क्यों छोड़ दिया गया ? यह रहस्य समझ में नहीं आता। क्या स्त्रियाँ कुटुम्ब के लिये तरह-तरह की दवाओं से भरी हुई बोतलें हैं कि जब दवा ख़तम हो जाती है तब वे खाली बोतलों की तरह उपेक्षा-पूर्वक अलग रख दी जाती हैं, और फिर उनकी खोज-खबर भी नहीं ली जाती ? विचारणीय प्रश्न है।

ग्राम-गीत

जन्म से लेकर मृत्यु तक हिन्दुओं का समस्त सामाजिक जीवन काव्य-मय है। उसमें प्रत्येक मङ्गल-कार्य में सङ्गीत को मुख्य स्थान दिया गया है। शायद ही किसी हिन्दू का कण्ठ बचा हो, जिससे कभी न कभी कोई गान न फूट निकला हो।

उत्सवों में मनोरंजन के लिए हिन्दू-जाति में सङ्गीत तो मुख्य है ही, प्रत्येक परिश्रम के काम के साथ भी गीत लगा हुआ है। राह चलते हुए स्त्री-पुरुष गीत गा-गाकर थकान मिटाते चलते हैं, पालकी लिये हुए कहार गीत गा-गाकर रास्ता काटते हैं, चरवाहा सुनसान जङ्गल में अपने गीतों से पेड़-पत्तों तक को जगाता रहता है, रात में किसान कोल्हू चलाकर ईख का रस निकालने के साथ अपने सरल और सरस हृदय का मधुर

रस भी निकालकर जीवन के अनेक कष्टों से पीड़ित सहकर्मियों और दूर जानेवाले बटोहियों को बाँटता है।

पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों ने अपने कामों में गीतों की सहायता अधिक ली है। संस्कार के अवसरों पर प्रायः कुल गीत स्त्रियाँ ही गाती हैं। जाँत पीसने, धान रोपने, खेत निराने, खेत गोड़ने और काटने के समय गाँव की स्त्रियाँ जो गीत गाती हैं उनमें गृहस्थी के सुख-दुख की बड़ी ही मार्मिक बातें भरी होती हैं। सम्भव है, गाँव के गीतों में नागरिक कवि की कविता का-सा आनन्द न मिले, पर उनमें आनन्द का अभाव नहीं होता; रुचि-भेद से आनन्द की मिठास में अन्तर हो सकता है।

ग्राम-गीतों ने गाँव के अन्तःपुरों, चौपालों, बाग-बग़ीचों, खेतों और खलियानों में कहीं शृङ्गार-रस का, कहीं करुणरस का, कहीं हास्यरस का और कहीं वीररस का स्रोत खोल दिया है। सहृदय नर-नारी उसमें डुबकी ले रहे हैं, रसपान कर रहे हैं, मुग्ध हो रहे हैं और थोड़ी देर के लिये संसार के माया-जाल से मुक्त होकर स्वर्गीय सुख का रसास्वादन कर रहे हैं। नागरिक कवियों की कविता का ऐसा प्रभाव कहीं देखा नहीं गया।

सभ्य-समाज में आकर कविता भी सभ्य हो गई है। पिङ्गल, व्याकरण, रस, अलङ्कार और मुहावरे नामक सभ्यता के शुभ लक्षणों से उसका नख-शिख दुरुस्त होगया है। पर गाँव के गीतों में वह अपने असली ही रूप में निवास करती है। वहाँ वह कालिदास की 'भ्रूविलासानभिज्ञा' है और भोलापन ही उसका सौन्दर्य है।

गाँव प्रकृति का क्रीड़ा-स्थल है और नगर मनुष्य का कार्य-क्षेत्र। गाँव में प्रकृति स्वयं गान करती है; पर नगर में स्व-

निर्मित सभ्यता से बंधे हुये कवि की दशा 'व्यभिचारी और चोर' की-सी होगई है :—

चरन धरत काँपत हृदय, नाहिं सुहावत सोर।
सुबरन कहँ खोजत फिरत, कवि व्यभिचारी चोर॥

अतएव जहाँ तक स्वाभाविकता का सम्बन्ध है, नागरिक कवि की कविता से प्रकृति-जन्य ग्रामगीतों का महत्व अधिक है।

प्रकृति ने गाँव के प्रत्येक समाज में कवि उत्पन्न किये हैं। अहीरो के लिये बिरहे तुलसी ने नहीं बनाये थे; न कहारों के लिये कहरवा सूरदास ने। धोबी, चमार, नाई, बारी, पासी और कुम्हारों में कबीर, बिहारी, केशव, भूषण, देव और पद्माकर नहीं पैदा हुये थे। पर इन जातियों में भी कविता किसी न किसी रूप में वर्तमान है। और कहीं-कहीं तो वह नागरिक कवियों की कविता से अधिक सरस है।

सिद्ध कवियों की कविता का आनन्द वही उठा सकता है, जिसने छन्द, व्याकरण और अलङ्कार-शास्त्र का अच्छी तरह अध्ययन किया है। ऐसी कविता को हम स्वाभाविक कविता नहीं कह सकते। यह तो माली-निर्मित उस क्यारी की तरह है जिसके पौधे कैंची से कतरकर ठीक किये रहते हैं और जो खास तरह की रुचि से विवश होकर सजाई जाती है। ग्राम-गीत तो प्रकृति का वह उद्यान है जो जंगलों में, पहाड़ों पर, नदी-तटों पर, स्वतन्त्र रूप से विकसित हुआ है। वह अकृत्रिम है। सिद्ध कवियों की कविता किसी बँगले का वह फूल है, जिसका सर्वस्व माली है। पर ग्राम-गीत वह फूल है, झरने जिसको पानी पिलाते हैं, मेघ जिसें नहलाते हैं, सूर्य जिसकी आँखें खोलता है, मन्द-मन्द समीर जिसे झूले में झुलाता है, चन्द्रमा जिसका मुँह

चूमता है और ओस जिस पर गुलाब-जल छिड़कती है। उसकी समता बँगले का क़ैदी फूल नहीं कर सकता।

हमने इस पुस्तक में जो गीत दिये हैं, उनमें जो कवित्व है, उसे ही हम अपनी लेखनी-द्वारा प्रकट करने में समर्थ हुये हैं। पर वे ही गीत जब स्त्री-कंठ से निकलते हैं, तब उनका माधुर्य और उनका उन्माद कुछ और ही हो जाता है। विधाता ने स्त्रियों के कण्ठ में जो मिठास रख दी है, जो लचक भर दी है, उसे हम लोहे की लेखनी में कहाँ से ला सकते हैं?

ग्राम-गीतों में शृङ्गार, करुण और शांत रस के विषय अधिक मिलेंगे। कुछ हास्य-रस भी हैं। जैसे इस पुस्तक के पृष्ठ २२१ पर चमारों का 'कर्कशा नारी' वाला गीत।

पुरुषों के गीतों में ज्यादातर वीरता, नीति, स्त्रियों के प्रति घोर आकर्षण, त्याग और वैराग्य के भाव भरे होते हैं। स्त्रियों के गीतों में प्रायः शृङ्गार और करुणरस ही की प्रधानता होती है। उनसे त्याग और वैराग्य के गीत तो शायद ही कहीं प्राप्त हो सकें।

पुरुष के गीतों से ऐसा लगता है कि पुरुष भौंरे की तरह दौड़ दौड़कर सब रसों का स्वाद लेना चाहता है। और स्त्री के गीतों से यह प्रकट होता है कि वह उसे एक केन्द्र पर बाँधे रखना चाहती है।

हिन्दुओं मे सम्मिलित कुटुम्ब की प्रथा प्रचलित है। स्त्री-गीतों में बड़े ज़ोरों के साथ इसका समर्थन किया जाता है। कन्याये और बहुये सब कुटुम्बियों के अलग-अलग उपनामों को जोड़-जोड़कर गीत गाती हैं। जिससे गृहस्थी के एक केन्द्र से हरएक कुटुम्बी बँधा हुआ रहता है।

गीत भारतवर्ष के प्रत्येक प्रांत में पाये जाते हैं और घर के भीतर गाये जाने वाले गीतों में सर्वत्र समानता मिलती है। जान पड़ता है, एक ही आत्मा भिन्न-भिन्न भाषाओं में बोल रही है। यह हमारी एक संस्कृति का प्रभाव है। और यही इस बात का भी एक प्रबल प्रमाण है कि सारा भारतवर्ष एक है।

आगे गाँव में प्रचलित कुछ छन्द दिये जाते हैं, उनमें देखिये काव्य के रसों का परिपाक किस सुंदर ढङ्ग से हुआ है :—

जब महुआ चूने लगता है, तब अकसर लोग गाने लगते हैं :—

औचक आइ जोबनवा मारेसि बान।
महुवा रोवै ठाढ़ आम बौरान॥

महुवे का फूल आँसू की तरह टपकता है और उन्हीं दिनों आम में बौर भी आते हैं। 'बौरान' के दो अर्थ हैं—बौर गया और बावला हो गया। क्या यह किसी कविता से कम सरस है?

हास्य-रस के लिये एक फूहड़ स्त्री का मजाक सुनिये :—

फूहरि के घर खिड़की लगी। सब कुत्तों को चिंता पड़ी।
बाँड़ा कुत्ता छितवै मौन। लगी तो है पर देगा कौन?

फूहड़-स्त्री का इससे चुभता हुआ मजाक और क्या होगा?

अपने प्राण-धन के साथ दुःख में भी सुख अनुभव करने-वाली एक पति-वल्लभा का हृदयोद्गार सुनिये :—

टूटि खाट घर टपकत टटियौ टूटि।
पिय कै बाँह सिहँनवाँ सुख कै लूटि॥

एक प्रेम-विह्वला अपना घर जलता हुआ देखकर भी सुख-अनुभव कर रही है।—

आगि लागि घर जरिगा अति सुख कीन्ह ।
पिय के हाथ घइलना भरि भरि दीन्ह ॥

आगे की पंक्तियों में देखिये, कविता का सच्चा स्वरूप झलकता हुआ मिलता है, या नहीं ?

परवत पर दिवला बरै, चहुँ दिसि बाजै पौन ।
बरै अचंभा जानिये, बुझत अचंभा कौन ॥

× ×

साजन तेरे हेत, अँखियाँ तो नदियाँ भईं ।
मन भयो बारू रेत, गिर गिर परत करार ज्यों ॥

× ×

जोबन गयो तो भल भयो, तन से गई बलाय ।
जने जने को रूठना, मोसे सहा न जाय ॥

× ×

साँझ भई दिन अथवा, चकई दीन्हा रोय ।
चल चकवा वा देस को, जहाँ साँझ नहिँ होय ॥

× ×

आग लगी बनखंड में, दाझा चंदन बंस ।
हम तो दाझे पंख बिन, तू क्यों दाझे हंस ॥

फल खाया बीटाँ करी, बैठे तुमरी डाल ।
तुम जरो हम उड़ चलें, जीवेंगे कै काल ॥

× ×

सत मत हारे बावरे, सत हारे पत जाय ।
सत की बाँधी लच्छमी, फेर मिलैगी आय ॥

कहने के ढंग के बारे में भी एक उदाहरण देना आवश्यक है । 'मुद्दई सुस्त, गवाह चुस्त' की कहावत प्रायः शिक्षित-वर्ग में

प्रचलित है, पर इसी भाव को गाँववालों ने अधिक सरसता से ऐसा कहा है :—

नाव चढ़े झगड़ालू आवैं पौरत आवैं साखी।

कुछ उदाहरण और लीजिये :—

माँगे न आवै भीख। तो सुरती खाना सीख ॥

× ×

जब देखी परनारि। तब फूटि गईं चारि ॥

× ×

जोरू टटोलै गठड़ी। माँ टटोलै अँतड़ी ॥

कहावतें और मुहावरे

गाँव की कहावतों के थोड़े से शब्दों में एक व्यक्ति का, एक समाज का सच्चा और विशाल अनुभव कैसे भर दिया जाता है, यह देखकर आश्चर्य होता है।

जब एक किसान कहता है:—

लरिका ठाकुर बूढ़ दिवान। ममिला बिगरै साँझ बिहान ॥

अर्थात् राजा लड़का है और दीवान बूढ़ा; दोनो में पट नहीं सकती! सुबह से शाम तक झगड़ा होके रहेगा।

तब हमको मानना पड़ता है कि साधारण किसान को भी राजा और दीवान के स्वभाव का सूक्ष्म परिचय है।

एक दिन एक गाँव में एक रियासत का एक सिपाही एक देहाती आदमी से अपना यह दुखड़ा रो रहा था कि उसे खाना खाने तक की फ़ुरसत नहीं मिलती। रात के १२ ही क्यों न बजे हों, ज़िलेदार के हुक्म से उसे दौड़ना पड़ता है। इस पर देहाती ने कहा—

चाकर है' तो नाचाकर। ना नाचे तो ना चाकर ॥

इस उत्तर में गूढ़ तत्व की बात के साथ अनुप्रास का आनन्द भी भरा है।

हिन्दी में जितनी कहावतें और महावरे प्रचलित हैं, प्रायः सब गाँव-की बोली से आये हुये हैं। यह उसका एक बड़ा ऋण है, जिससे हिन्दी कभी उऋण नहीं हो सकती।

गाँव के लोग बड़े ही प्रत्युत्पन्नमति होते हैं, यह उनकी कहावतों और महावरों से अच्छी तरह विदित होता है। उन्होंने कोई चीज़ देखी, उसकी गति-विधि को समझा और झट उसकी एक कहावत बना ली। जैसे, मामूली-सा काम करते हुये कोई बड़ा कष्ट उत्पन्न होजाने पर वे कहते हैं :—खिचरी खात पहुँचा टूट।

कोई आदमी ऐसा काम करना चाहता है, जो उससे नहीं हो सकता, तब वे कहते हैं :—

डगर चला न जाय रजाई का फाँड़ बाँधे। इत्यादि

यह क्षमता शहरवालों में बिलकुल ही नहीं है। 'टाई' और 'पतलून' जैसे झंझटी वस्त्रों को वे सैकड़ों वर्षों से देखते और पहनते आ रहे हैं, पर कभी उन्होंने उनके लिये कोई महावरा या कहावत नहीं बनाई और न कभी उनमें सरसता अनुभव की। पर गाँववालों ने रजाई, धोती, पगड़ी, जूता सभी पर तो कुछ न कुछ कहा है।

कहावतें तो ग्राम-साहित्य के रत्न हैं। वे गाँववालों ही के लिये नहीं, मनुष्यं-मात्र के लिये उपयोगी हैं। और जो गाँववालों को समझना चाहें, उनके लिये तो अँधेरे रास्ते के दिये-जैसी हैं।

महावरे भाषा के प्राण हैं। महावरों का ठीक प्रयोग न जाननेवाला न अच्छी भाषा बोल सकता है, न लिख।

भाषा की टकसाल

आज हिन्दी या हिन्दुस्तानी भाषा का जो रूप हमें दिखाई पड़ता है, वह गाँव की टकसाल का ढला हुआ है। हिन्दी के आदि जन्म-दाता गाँववाले ही हैं। उन्ही ने संस्कृत शब्दों को हिन्दी का रूप दिया है।

गाँव की फैक्ट्री में नये-नये शब्दों के ढालने और पुराने शब्दों के खरादने का काम हर वक्त जारी रहता है। 'लालटेन' का असली नाम 'लैन्टर्न' है। गाँव की फैक्ट्री में उसका 'लालटेन' बना, जिसे अँग्रेज़ी पढ़े-लिखे लोगों ने भी स्वीकार कर लिया।

मोटर का 'हार्न' अँग्रेज़ी शब्द है, जिसका अर्थ 'सींग' है। यह उस समय का शब्द है, जब अँग्रेज़ गोरू चराया करते थे और सींग बजाकर अपनी गायें बुलाया करते थे। यद्यपि अब उसका शरीर हड्डी का न रहकर रबर और लोहे का बन गया है, पर स्वर-साम्य के कारण उसका नाम पुराना ही है। कभी भारत में भी सींग का चलन था। सींग बजाकर श्रीकृष्ण अपनी गायें और शिवजी अपने भूत-प्रेत बुलाया करते थे।

सृंगी टेरि भूतगन प्रेरे।

(तुलसीदास)

अगर 'हार्न' शब्द का हिन्दी नाम रखने के लिये युनिवर्सिटी या कालेज के प्रोफ़ेसरों को कहा जाता तो सम्भवतः वर्षों तक वे 'सींग के' आस ही पास चकराते रहते और शायद न बना पाते। पर गाँव की फैक्ट्री में, यह अपने दो स्वरों 'भों' और

"पूँ" को मिलाकर, 'भोंपू' बन गया, जिसे सभ्य और शिक्षित-वर्ग को भी स्वीकार करना पड़ा।

इसी तरह उन्होंने 'बाइसिकल' को 'पैरगाड़ी' कर लिया, जो 'बाइसिकल' शब्द के असली अर्थ 'दो पहिये' से कहीं अधिक सार्थक है। 'बाइसिकल' का ऐसा अनुवाद पढ़े-लिखे लोग शायद ही कर सकते।

अँग्रेजी में संज्ञा शब्दों की क्रियायें बना लेने की जो क्षमता है, वह गाँव की फैक्ट्री में भी है। अँग्रेजी में अगर 'मोटर' से 'मोटरिंग' और 'पेट्रोल' से 'पेट्रोलिंग' बन सकता है तो गाँव की बोली में 'मिट्टी' से 'मटियाना', 'साबुन' से 'सबुनाना', 'साठ' से 'सठियाना' आदि आसानी से, बिना किसी प्रेरणा के, बन जाते हैं। फारसी की क्रियाओं को हिन्दी-रूप दे देने की शक्ति भी गाँव की फैक्ट्री ही में है। उसी में 'बदल' का 'बदलना' बना है। अभी और भी कितने ही शब्द वहाँ बनकर काम कर रहे हैं, जिनका हिन्दीवालों को पता ही नहीं है। और किसी को पता है भी, तो वह उनसे काम लेने में हिचकता है। जैसे, उरेहना=चित्र बनाना।

ऊँची अटारी उरेही चितसारी रे ना।

(इ० ग्रा० सा०, पृ० १७०)

छिनगाना=पेड़ की डालें छाँटना (संस्कृत का छिन्नांग); आदि सैकड़ों शब्द हैं, जिनकी हिन्दी में नित्य जरूरत पड़ती है और मिलते नहीं। लेखकों को उनके अभाव में उनका अर्थ समझाना पड़ता है। ऋग्वेद का एक 'द्यौः' शब्द, जिसका अर्थ 'आकाश' है, 'दइउ' के रूप में गाँव के हिन्दू और मुसलमान दोनों के मुँह-मुँह में मौजूद मिलता है।

आजकल हिन्दुस्तान में एक राष्ट्रभाषा की अनिवार्य आवश्यकता समझी जा रही है और हमें हर्ष है कि हमारी 'हिन्दी' ही को यह गौरव प्रदान किया गया है। अब उसको अधिक व्यापक बनाने के लिये उसे एक नये साँचे में ढालने का प्रयत्न भी किया जा रहा है। इस प्रयत्न में सरकारी और गैर सरकारी दोनों ओर के विज्ञ शामिल हैं। और इसके लिये वे हिन्दी और उर्दू के कोषों से मसाला ले रहे हैं। पर हिन्दी और उर्दू के कोष-कारों की परिधि तो ख़ुद छोटी थी। उनके संग्रहीत शब्दों से चुनकर जो भाषा बनाई जायगी, वह राष्ट्र की भाषा नहीं, कोष की भाषा बन जायगी।

देहात में संस्कृत और अरबी-फ़ारसी के इतने शब्द अपने अपभ्रंश रूप में प्रचलित हैं कि आश्चर्य होता है कि वे वहाँ कैसे पहुँच गये?

मुझे एक गीत में 'व्यक्ति' शब्द सुनकर आश्चर्य हुआ—

रामा तब बोले बारी दसवतिया रे ना।
रामा जहूँ हउवा घर के बेकतिया रे ना॥

(नयकवा गीत)

मैं समझता था, संस्कृत का यह शब्द हिन्दी में बँगला से आया है; पर यह तो घनान्धकार में बसनेवाले एक ग्रामीण के घर में मुझे मिला। ऐसे शब्दों को राष्ट्रभाषा से अलग कैसे रक्खा जा सकता है?

इसी तरह संस्कृत के और भी बहुत से शब्द हैं, जो ग्राम-गीतों में आम तौर से प्रयुक्त होते हैं, पर हिन्दुस्तानी भाषा के निर्माण में संलग्न विद्वानों को पता है कि नहीं, मालूम नहीं।

गाँव में जितने पेशेवर होते हैं, सब के अलग-अलग पेशे के शब्द हैं। हिन्दी में उनका तो अभाव ही है।

अतएव यह मानना पड़ेगा कि गाँव की बोली हमारी हिन्दी से अधिक सम्पन्न है। और जब इतना बड़ा बोलता हुआ कोष हमारे सामने खुला पड़ा है, तब हम अलमारी में रक्खे हुये अपूर्ण और मूक कोषों से हिन्दुस्तानी भाषा का पेट भरने में लगें, तो यह हँसी ही की बात है।

मेरा विश्वास है, गाँव के साहित्य का अध्ययन किया जायगा तो हिन्दुस्तानी भाषा का प्रश्न सहज में हल हो जायगा। क्योंकि हमको संस्कृत और अरबी-फारसी के उन शब्दों को ग्रहण कर लेने में आगा-पीछा न करना पड़ेगा, जिनको गाँव में हिन्दू और मुसलमान दोनों आम-तौर से बोलते और समझते हैं। जिनके लिये हम भाषा को सरल बनाने जा रहे हैं, वे कितने शब्दों को, जिनको हम उनके लिये कठिन समझ रहे हैं, आसानी से समझ लेते हैं, यह तो हमें सबसे पहले जान लेना चाहिये।

न्याय की व्यवस्था

अँग्रेजी राज होने से पहले गाँव-गाँव में पंचायतें थीं, और पंचायतें केवल धन-सम्बन्धी झगड़े ही नहीं निपटाती थीं, समाज के संगठन को सुदृढ बनाये रखने के लिये बुराइयों के रोकने में भी वे तत्पर रहती थीं। हजारों वर्षों से भिन्न-भिन्न प्रकार की शासन-व्यवस्थाओं का दबाव पड़ते रहने से अब पंचायतें टूट-टूटकर छोटे-छोटे टुकड़ों में बँट गई हैं और हरएक पेशेवालों की पंचायतें अलग-अलग बन गई हैं। इन पंचायतों के सरपंच 'चौधरी' कहलाते हैं। सवर्गियों में चौधरी का मान किसी राजा

से कम नहीं होता। वह स्वयं जातीय नियमों का कड़ाई से पालन करता है और अन्यों से कराता भी है।

छोटी जातियों में प्रत्येक व्यक्ति पंच कहलाता है, और सरपंच या चौधरी उन सब में बड़ा माना जाता है।

एक चौधरी के मर जाने पर, या किसी जातीय अपराध से उसके पद-च्युत किये जाने पर दूसरा चौधरी सर्व-सम्मति से चुन लिया जाता है। चौधरी का चुनाव सार्वजनिक होता है। चुनने वाले खुद स्वजाति के किसी लोक-प्रिय व्यक्ति से उनका चौधरी बनने की प्रार्थना करते हैं। इससे उम्मीदवारों के झगड़े नहीं उठते।

तेलियों के एक बिरहे में 'पंच' की बड़ी सुन्दर व्याख्या मिलती है :—

जहँ पंच तहँ परमेसर भाई जहँ कुँवना तहँ कींच।
वहिंय कींच का बना चउतरा, सब पंच नवावइँ सीस ॥
पंचा क बैठ मँडरिया, मँडरिया छोट बड़ा एक तूल।
केकरे अर्ती उतारउँ रामजी, केकरे खोंसउँ बेली फूल ॥
पंचा क आउब बहुत निक लागै, जो घर संपति होय।
आवत के पंचा क सिसिया नवावउँ
जात के पैयाँ पड़ रे जाउँ ॥

इसमें पंच को परमेश्वर कहा गया है, और पचों की मंडली में छोटे-बड़े सब बराबर बताये गये हैं। पंचों का किसी गृहस्थ के घर जमा होना बड़े सौभाग्य की बात मानी गई है; और पंचों का स्वागत-सत्कार करना, उनको सिर झुकाकर प्रणाम करना और उनके पैर छूना एक सद्गृहस्थ के गर्व की

बात बताई गई है। आज देश में कांग्रेस या एसेम्ब्ली के प्रधान मंत्री, जो चुने जाकर अपने पदों पर पहुँचते हैं, जिस ज़िम्मेदारी का अनुभव करते हैं, वही चौधरी या सरपंच भी करता है। अन्तर इतना ही है कि चौधरी अवैतनिक होता है। सार्वजनिक सेवा का इससे अच्छा उदाहरण शायद ही और कहीं मिले।

जातीय नियम के विरुद्ध जब कोई व्यक्ति अपराध करता है तब सब पंच बुलाये जाते हैं और उनके सामने मामला पेश होकर उसका निर्णय होता है। पंचायत का निर्णय अपराधी को मंजूर करना पड़ता है। अदालती निर्णय से पंचायती निर्णय कम खर्च का तो होता ही है, अपराधी नम्रतापूर्वक अपराध और उसकी सज़ा भी स्वीकार करता है और आगे वैसा अपराध प्रायः करता भी नहीं है। अदालतों के निर्णय में यह विशेषता नहीं होती। उससे तो परस्पर द्वेष-भाव ही की वृद्धि होती हुई दिखाई पड़ती है।

जिन जातियों में चौधरी चुनने और पंचायत का निर्णय मानने की ऐसी सर्वोत्तम प्रथा प्रचलित है, उन्हें शासन-कला से अपरिचित बताना कहाँ तक युक्ति-संगत होगा ?

स्वास्थ्य और स्वच्छता

गाँववालों को स्वास्थ्य और स्वच्छता के जितने ज्ञान की ज़रूरत होती है, वह उनके पास पूरा है। वे साफ़ नहीं रहते, सफ़ाई नहीं रखते, इसका कारण उनकी ग़रीबी है, न कि अज्ञान। वे स्वास्थ्य और सफ़ाई के नियमों से परिचित हैं, यह उनकी कहावतों से प्रमाणित होता है। मेले-ठेले, शादी-ब्याह

में गाँव के नौजवान जब बन-ठनकर और भड़कीले कपड़ों से सज-बजकर निकलते हैं, तब कौन कह सकता है कि उनमें शृंगार के प्रति उदासीनता है ?

शारीरिक स्वास्थ्य ठीक रखने के नियम उनको मालूम हैं। उनके नियम बहुत सस्ते और बड़े ही गुणकारी भी हैं। यदि उनकी जानी हुई औषधियाँ उनको उपलब्ध हो सकें, या सबका संग्रह कराके, हरएक को बता दी जायँ तो उनको अस्पतालों की जरूरत बहुत कम रह जायगी।

और मनुष्य के भयंकर रोगों के तो उनके पास अचूक नुस्खे हैं। ग्रामगीतों के सग्रह में खान-पान की अव्यवस्था के कारण और गुड़ अधिक खाने से मुझे 'डायबिटीज' रोग होगया था और पेशाब में १० फी सदी चीनी जाने लगी थी। वह गाँव के एक ग़रीब बुड्ढे की बताई हुई दवा—गूलर की तरकारी खाने से चला गया। इसी तरह कोढ़, क्षय, दमा, ब्लड-प्रेशर आदि अमिट माने जानेवाले रोगों के सैकड़ों नुस्खे गाँववालों को मालूम हैं।

बेल की पत्तियों का रस शहद मिलाकर रोज सबेरे लेने से भी 'डायबिटीज' रोग मिट जाता है। मैं ने एक रोगी पर आज़मा कर देखा है।

हिन्दी-मन्दिर प्रेस के एक कपोजीटर को क्षय रोग लग गया था। उसके थूक के साथ ख़ून जाने लगा था। देहात के लोग इस रोग का इलाज 'लहसुन बतलाते हैं। लहसुन का सेवन एक महीने करके कंपोजीटर बिलकुल नीरोग हो गया और अब वह प्रेस में 'फोरमैन' है।

गाँवों में जाते-आते रहने से मुझे बहुत सी बीमारियों के देहाती नुस्खे मालूम होगये। मैंने कइयों को आजमाया और बहुत ही गुणकारी पाया। जैसे,

कमल या पीलिया रोग में गाँव के लोग मूली के पत्तों का अर्क गुड़ के साथ लेते हैं और लाभ होता है।

एक्जिमा के लिये ताँबे के पैसों को काँसे की थाली में दही के साथ घिसकर लगाते हैं।

गाँव में जब कोई नई बहू किसी बड़ी बूढ़ी को प्रणाम करती है, तब हाथ में आँचल पकड़कर, आँचल को उसके पैर से तीन बार छुवा-छुवाकर अपने माथे से छुवाती है। तब उससे वह यह आशीर्वाद पाती है:—

दूधन नहाओ, पूतन फलो।

इसके शाब्दिक अर्थ से इसका भावार्थ गूढ है। वास्तव में यह एक नुस्खा है। नई बहू आँचल इसलिये हाथ में लेती है कि उसे आँचल भर देने का अर्थात् पुत्रवती होने का आशीर्वाद मिले। आशीर्वाद में उसे बता दिया जाता है कि दूध से नहाओगी तो पुत्र उत्पन्न होगा।

मुझे मालूम नहीं कि इसमें सचाई कहाँ तक है। पर यह नुस्खा उसी मतलब के लिये है, यह मुझे विश्वास है।

गाँव के लोग उत्तर तरफ सिर करके नहीं सोते और दक्खिन तरफ मुँह करके भोजन नहीं करते। इसमें भी कोई वैज्ञानिक रहस्य होगा, जो उनके पूर्वजों को मालूम था।

वे पेशाब एँड़ी उठाकर करते हैं। उनका कहना है कि इससे अंड-वृद्धि का रोग नहीं होता। अंड-वृद्धि को रोकने के लिये पैर के अँगूठे को काले डोरे से कसकर बाँधते भी हैं।

हरएक हिन्दू लड़के का कान छिदाया जाता है और उसमें सोने या चाँदी की बाली पहना दी जाती है। गाँव वालों का विश्वास है कि कान में कोई धातु का टुकड़ा लगा रहने से आँखों की ज्योति बढ़ती है।

हो सकता है कि गाँव के ग़रीबों के इलाज अमीरो को सूट न करें, पर अस्पताल के महँगे इलाज, जो अमीरों के लिये हैं, गरीबो पर क्यों लादे जाँय? ग़रीबों लिये उनके के सस्ते नुस्खे क्यों न संग्रह किये जायँ?

गाँव के लोग स्वस्थ, साहसी, सुदृढ़ और बड़े ही परिश्रमी होते हैं। स्वास्थ के बारे में इससे अधिक प्रमाण और क्या चाहिये कि वे बीमार कम पड़ते हैं।

साहसी वे ऐसे होते हैं कि घोर अँधेरी रात में, हाथ में लाठी लिये सुनसान जंगल में जा सकते हैं। सारी रात अकेले अपना खेत रखाते रहते हैं। न उन्हें साँप का डर, न भूत-प्रेत का भय, न कंकड़ और काँटे की परवा। उनके बराबर साहसी दूसरा हो नहीं सकता।

उनकी सुदृढ़ता का सब से प्रबल प्रमाण तो योरप की बड़ी लड़ाई में मिला था। जब कि हिन्दुस्तान के सिपाहियों ने दो-दो तीन-तीन दिनों तक केवल चने और थोड़े पानी पर गुजर करके जर्मनों के छक्के छुड़ा दिये थे। अतएव खानपान की विशेषता से हमारे गाँवों के आदमी संसार की किसी भी सभ्य कहलाने वाली जाति के आदमियों से ज्यादा ही सुदृढ़ साबित होंगे।

उनके परिश्रमी होने का तो कहना ही क्या है! वे लगभग चार बजे सवेरे उठ जाते हैं। शौच आदि से निवृत्त होकर सूरज निकलते-निकलते घर-गृहस्थी के कामों पर डट जाते हैं।

जवान किसान दोपहर से पहले मुँह में कोई आहार नहीं डालता। दोपहर को जब सूरज ठीक सिर पर आता है, और जाड़ों में सूरज लगभग दो बजे वहाँ पहुँचता है, वह नहा कर पहला आहार लेता है। फिर दूसरा आहार रात में नौ-दस बजे। इससे उसका स्वास्थ्य दिनभर में चार बार खानेवालों से अच्छा तो रहता ही है, साथ ही परिश्रम करने का उसे काफ़ी समय भी मिल जाता है।

अखबारों में पढ़ा है कि अमेरिका में 'ऐंटी ब्रेकफास्ट लीगें' (सवेरे के भोजन की विरोधिनी सभायें) कायम हो रही हैं, और लोगों को पहला आहार दोपहर को लेने की सलाह दी जा रही है। इससे तो यही कहा जायगा कि हमारे गाँव के किसान सदियों से उस स्थान पर खड़े हैं, जहाँ सभ्य-संसार बहुत घूम-फिरकर अब पहुँचना चाहता है।

गाँव की स्त्री दिनभर काम में जुती रहती है। सवेरे घर साफ़ करती है, बरतन माँजती है, कुवें से पानी लाती है, जानवरों को चारा-भूसा डालती है, आटा पीसती है, दाल दलती है, बच्चों की सँभाल करती है, रसोई बनाती है, सबको खिलाकर तब स्वयं खाती है, तब कहीं दोपहर के बाद शाम तक कुछ फ़ुरसत पाती है; उस फ़ुरसत मे भी वह कुछ सीती-पिरोती रहती है। रात में फिर भोजन बनाकर घर भर को खिला-पिलाकर, सबके अंत में स्वयं खा-पीकर तब विश्राम करती है। इस तरह गाँव के स्त्री-पुरुष दोनों का अधिकांश समय परिश्रम में बीतता है, और परिश्रम से उनका स्वास्थ्य अच्छा रहता है।

अधिकांश स्त्री-पुरुष रविवार को नमक नहीं खाते; एकादशी

-को निराहार रहते हैं; बहुत-से त्योहारों पर केवल फलाहार करते हैं। इन सब का भी प्रभाव उनके स्वास्थ पर पडता है और वे बहुत कम बीमार पड़ते हैं।

पुरुष और स्त्री दोनों दातुन और स्नान करके ही भोजन करते हैं और कपड़े खोलकर हाथ-पैर धोकर तब खाने पर बैठते हैं।

चूल्हा रोज पोता जाता है और चौका गोबर लीपा जाता है। बरतन मांजकर ख़ूब चमका दिये जाते हैं।

अतएव स्वच्छता का ध्यान गाँव के लोग कम नहीं रखते, जैसा कि समझा जाता है। उनमें जो कुछ गंदगी दिखाई पड़ती है, वह हाथ की तगी की वजह से है, न कि उनका स्वभाव ही गदा होता है।

वर्ष में दो बार वे अपने घरों की सफाई करते हैं—एक दीवाली के आसपास, दूसरे होली के दिन। दीवाली का दिया जलाने के पहले वे अपने घर को लीप-पोतकर साफ कर लेते हैं, घूरे पर भी दिया जलाकर उसे प्रकाशित कर देते हैं। होली के कई दिन पहले से वे घर और बाहर की सफाई में लग जाते हैं। अनावश्यक कूड़ा-करकट जमा करके जला देते हैं और घर लीप-पोतकर साफ और सुन्दर कर लेते हैं। स्त्री और पुरुष दोनों घर की सफाई में लगे रहते हैं।

गाय-बैल आदि जानवरों को किसी पोखरे में ले जाकर नहलाना, धोना और उनकी सींगों में तेल लगाकर उनको चमका देना हरएक किसान अपना कर्त्तव्य समझता है।

होली के दिन गाँववालों की ख़ुशी देखने योग्य होती है। वे सफ़ेद कपड़े पहनकर हँसते, गाते, परस्पर विनोद करते, रग

और अबीर उड़ाते घर से निकलते हैं। सारा दिन और रात में भी देर तक गाते-बजाते रहकर वे सारा दुःख-दर्द भूल जाते हैं। अतएव स्वच्छता का उनको पूरा खयाल रहता है बशर्ते कि उनके पास पैसा हो।

खोज की जाय तो गाँव वालों में इतने प्रकार के स्वास्थ्य-वर्द्धक खेल प्रचलित मिलेंगे, जितने सभ्य कहे जानेवाले समाज में नहीं हैं। और सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उनके खेल बिना कोड़ी खर्च किये, बहुत मामूली साधनों से, खेले जाते हैं। हँस-बोलकर, दौड़-धूपकर, वे प्रकृति में से प्राण-पोषक तत्व ले लेते हैं और फिर अपने जीवन-पथ पर आगे बढ़ते हैं। उनको मूर्ख कौन कह सकता है?

सहयोगिता

गाँवों में सामाजिक संगठन का आधार सहयोगिता है। वहाँ का प्रत्येक कुटुंब दूसरे कुटुंब को हरएक सामाजिक विषयों में सहयोग देता रहता है। सहयोग के कुछ कार्य तो रूढ़ हो गये हैं और वे चक्र की तरह नियमित चलते हैं। जैसेः—

(१) कन्या के विवाह मे निमंत्रित गृहस्थ कन्या के पिता को कम से कम एक रुपया 'न्यौता' दे जाते हैं। रिश्तेदार लोग रुपया, आटा, घी और अचार आदि लेकर आते हैं। इन सबसे कन्या के पिता का बोझ हलका हो जाता है और कन्या का विवाह करके वह टूट नहीं सकता। इसका एक अर्थ यह भी है कि कन्या समाज की कन्या मानी जाती है और उसका विवाह समाज के सहयोग से होता है।

(२) जनेऊ में भी 'न्यौता' जाता है। कम से कम एक

गज कपड़े का एक टुकड़ा, उसमें कुछ आटा और कुछ पैसे बँधे हुये होवे हैं। समाज में जिसकी मान्यता जितनी अधिक होती है, उसी के अनुसार उसे 'न्यौते' मिलते हैं। अतएव मान्यता बढ़ाने का प्रयत्न प्रत्येक गृहस्थ करता रहता है और उसकी प्राप्ति का रास्ता दूसरों को सहयोग देना होता है। 'न्यौतों' से 'जनेऊ' का बहुत-सा खर्च निकल आता है।

(३) जब कोई किसान कुवाँ खुदवाता है, तब भी उसका समाज उसका बहुत-सा खर्च अपने ऊपर ले लेता है। एक प्रकार से वह समाज का कुँवा हो जाता है, केवल नाम खुदवाने वाले का होता है। जब कुवाँ पानी तक खुद जाता है और उसमें 'नेवार' पड़ती है, तब आसपास के किसानों को 'बुलौवा' जाता है। वे 'नेवार' में पैसा डालने आते हैं। 'नेवार' गढ़ने वाले लोहार या बढ़ई कुँवें के अन्दर चादर फैलाकर खड़े होते हैं, उसमें किसान के मित्र लोग पैसे या रुपये डालते हैं। कभी-कभी लोहार को उसकी उजरत से कहीं ज्यादा रुपये मिल जाते हैं। रुपयों की संख्या किसान की सामाजिक मान्यता पर निर्भर होती है। लोहार 'नेवार' की गढ़ाई न लेकर केवल ऊपर से डाले हुये धन पर संतोष करता है।

(४) किसान खेत की कटाई की मजूरी पैसों में नहीं देता। वह काटने वालों को १६ बोझ पीछे एक बोझ काटे हुये नाज का देता है। कहीं-कहीं बीस बोझ पीछे एक बोझ देने की प्रथा भी है।

(५) नाई सालभर तक किसान की हजामत बिना पैसा लिये करता रहता है। किसान उसे साल में एक बोझ कटे हुये अन्न का देता है।

(६) लोहार साल भर तक किसान का हल, खुरपा, फावड़ा और कुदाल वग़ैरह बनाता रहता है और पैसा नहीं लेता। चैत्र में किसान उसे एक बोझ अन्न देता है।

(७) धोबी सालभर तक किसान के कपड़े धोता है। बदले में साल में एक बोझ अन्न वह भी पाता है।

(८) कुम्हार सालभर तक मिट्टी के बरतन देता रहता है। किसान उसे साल में एक बार एक बोझ अन्न देता है।

(६) शिक्षा के लिये पहले 'मूठी' की प्रथा थी। हर एक गृहिणी खाना बनाने से पहले एक मूठी आटा, चावल या दाल निकालकर एक घड़े मे रखती जाती थी। महीने मे किसी समय आकर पाठशाला के विद्यार्थी उसे माँग ले जाते थे, और उससे पाठशाला के विद्यार्थियों और अध्यापक का भी खर्च चल जाता था। समय के प्रभाव से यह अत्यन्त उपयोगी प्रथा अब बिलकुल ही बन्द होगई है।

इसी प्रकार कुछ और भी पेशेवर हैं, जिनका संबंध किसान से होता है और वे अपने काम के बदले में अन्न पाते हैं।

विचार किया जाय तो सच्चा सहयोग तो यही है। मानो नाई, लोहार, धोबी और कुम्हार को किसान आश्वासन देता है कि तुम्हारे खाने के लिये अन्न मैं पैदा करूँगा, तुम निश्चिन्त होकर अपना पेशा करो। और नाई, लोहार आदि भी साल में किसानों से सैकड़ों मन ग़ल्ला पा जाते हैं, इससे उनको खाने के लिये अन्न उपजाने या खरीदने की आवश्यकता नहीं रहती। एक-एक पेशेवर सैकड़ों किसानों का काम करते रहते हैं।

अब पैसे ने बीच में पड़कर उनमें गड़बड़ी मचा दी है और किसान को नाई आदि की सेवा के बदले में वह चीज देनी पड़

रही है, जिसे वह खेत में नहीं पैदा करता। जैसे-जैसे पैसे वाली सभ्यता बढ़ती जा रही है, वैसे-वैसे गाँव का सामाजिक सहयोग बिखरता जा रहा है।

गृह-प्रबंध और मितव्ययिता

गाँव के लोग आदर्श मितव्ययी होते हैं। थोड़ी आमदनी में भी वे ऐसा अच्छा गृह-प्रबंध करके जीवन बिताते हैं कि देखकर आश्चर्य होता है।

एक उदाहरण के साथ चलिये। मान लीजिये, एक किसान के पास कुल १० बीघे खेत हैं। जिसमें अच्छी फ़सल हुई तो साल में अधिक से अधिक १०० मन नाज पैदा होगा। १०० मन नाज का दाम भी १००) मान लीजिये; अर्थात् महीने में ८) से कुछ अधिक।

अब उसका खर्च जोड़िये। उसके घर में वह, उसकी स्त्री, माँ-बाप, दो बच्चे, दो बैल, एक गाय या भैंस, इतने प्राणी हैं। इन सबको उसी आमदनी में से वह खिलाता-पिलाता है; घर वालों को कपड़े, जाड़े के अलग, गरमी के अलग, देता है। सालभर में कुछ जमींदार को देता है और कुछ उसके जिलेदार को भी। पटवारी भी मुँह बाये रहता है, कुछ उसमें डालता है। पुलिस का सिपाही भी कुछ लेता ही है। साल में वह दो-तीन बार कथा सुनता है और कुछ पुरोहित को देता है। भूत-प्रेत का भी उसे विश्वास है, इससे ओझा-सोखा भी कुछ ले ही जाते हैं। होली-दिवाली और दशहरे में भी कुछ अधिक खर्च उसे करना पड़ता है। मेहमान भी आते-जाते रहते हैं। महाजन से जरूरत पर उधार लाता रहता है, उसे कुछ ब्याज देता है। दिल खोलकर

लड़के-लड़की की शादी करता है, उसमें महाजन से कर्ज़ लेकर खर्च करता है। गाँव में कथा बैठती है, आल्हा होता है, कठ-पुतली का नाच, नौटंकी आदि खेल-तमाशे होते रहते हैं; सब में चंदा देता है। साधु-संत जो दरवाजे पर आ जाते हैं, उन्हें कुछ खाने को देता है। गाय-भैंस की चरवाही, घर की मरम्मत की मजदूरी और खपड़े और बाँस का दाम चुकाता है, और इतनी चिंतायें लादे हुये वह खेत के मेंड़ पर मस्त होकर गाता भी चलता है और जी खोलकर हँस सकता है। इससे भी विचित्र बात यह है कि वह सत्तर-अस्सी वर्ष तक जो भी देता है। क्या कोई डाक्टर, जिसे स्वस्थ रहने के तरीक़े सबसे अच्छे मालूम होते हैं, आठ रुपये मासिक पर सत्तर या अस्सी वर्ष तक जी देगा? इतनी छोटी आमदनी में घर का ऐसा सुप्रबंध शिक्षित-समाज का क्या कोई व्यक्ति करके दिखा सकता है? अगर नहीं तो गाँव वालों को बेअक़्ल कैसे कहा जा सकता है?

ग्राम-सुधार और वेसिक ट्रेनिंग स्कीम

कुछ समय से सूबे की सरकार ने गाँवों की हालत सुधारने की ओर पहले से कहीं अधिक ध्यान देना शुरू किया है। उसने 'रूरल डेवलपमेंट' नाम का एक नया महकमा कायम किया है और शिक्षा-विभाग की ओर से 'वेसिक ट्रेनिंग स्कीम' के अनुसार इलाहाबाद मे एक कालेज खोला गया है।

महकमे और स्कीम दोनों के सामने अब यह प्रश्न है कि वे किस प्रकार गाँवों के लिये अधिक उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं। और गाँव के सामने भी यह प्रश्न, यदि अभी तक नहीं आया है तो, आना चाहिये कि उक्त महकमे और स्कीम से

उनको कैसे लाभ उठा लेना चाहिये। इस सम्बन्ध में गाँव की मेरी कुछ जानकारी, संभव है, दोनों ओर के लिये लाभदायक सिद्ध हो, इससे मैं नीचे लिखी बातो की ओर उनका ध्यान आकर्षित करता हूँ :—

१—पहले यह स्वीकार कर लेना चाहिये कि गाँव की एक प्राचीन व्यवस्था है, जिसको लेकर वह अपने रूप में सम्पूर्ण है।

इस आधार पर उसकी प्राचीन व्यवस्था की अच्छी जानकारी प्राप्त की जाय और जाँच की जाय कि वह गाँव के लिये वास्तव में कहाँ तक लाभदायक है, और उसमे बाहर से कहाँ सुधार की जरूरत है। क्योंकि व्यवस्था की कोई नई स्कीम, जो उसकी मूल प्रकृति से मेल न खायगी, उसमें टिक न सकेगी। और यदि वह उसमें जबरदस्ती दाखिल की जायगी तो वही परिणाम होगा जो एक गली हुई मिट्टी की दीवार पर सीमेंट का पलस्तर करके उसे चिकनी और मजबूत समझने का होता है। किसी दिन सीमेट की पपड़ी असली दीवार का भी कुछ हिस्सा चिपकाये हुये गिर पड़ेगी और दीवार को और भी कमजोर बना देगी।

ऐसा देखा गया है कि गाँववालो की रहन-सहन को बिना समझे-बूझे जो सुधार उनमें डाले जाते हैं, उनको वे ग्रहण नहीं करते और थोड़े ही समय तक रखकर वमन कर देते हैं। जैसे, अकसर बीमारी के दिनों में गाँवों में सरकारी स्वास्थ्य-विभाग की ओर से ऐसे परचे बाँटे जाते हैं, जिनमें यह हिदायत की गई होती है कि खाली पेट घर से न निकलो। यह हिदायत योरप के लिये है, जहाँ चाय पीकर ही लोग बिछौना छोड़ते हैं। हमारे गाँवों में तो नब्बे फीसदी लोगों के पास सबेरे खाने को

कुछ रहता ही नहीं, और गाँववाले दोपहर से पहले कुछ खाते भी नहीं हैं। अतएव योरप के जीवन की हिदायत उनके जीवन के अनुकूल नहीं पड़ सकती और इसी से वे उसकी परवा नहीं करते।

अथवा जैसे, गाँव वालों पर, खासकर किसानों पर, यह दोषारोपण किया जाता है कि वे अपनी आमदनी का ज्यादा हिस्सा गहनों में खर्च कर देते हैं। पर यह नहीं सोचा जाता कि गहने गाँव की प्राचीन व्यवस्था के एक अंग हैं। गहने शरीर की शोभा बढ़ाने ही के लिये नहीं पहने जाते, वह किसानों के बैंक का भी काम देते हैं। जो स्त्री विधवा होने पर दूसरा विवाह नहीं करती, वह अपने पिता, ससुर और पति के दिये हुए गहनों ही के सहारे अपना निर्वाह करती हैं। वही उसका 'फिक्स्ड डिपॉजिट' है।

२—गाँव की प्रकृति और संस्कृति को समझने के लिये उसका मौखिक साहित्य सबसे निकट का सहायक है। अतएव उसका सग्रह यथा-सम्भव शीघ्र कराके उसका गभीर अध्ययन और मनन किया जाना जरूरी है; और तब उसके सुधार की स्कीम बनाई जाय।

३—ग्राम-साहित्य के सग्रह के लिये हरएक ज़िले और तहसील मे ग्राम-साहित्य-समितियाँ खोली जायें। जिले के कलक्टर और तहसीलो के तहसीलदार उनके सभापति बनाये जायँ और वे अपने मातहत सरकारी नौकरो से गाँव का साहित्य संग्रह करावे।

४—'रूरल डेवलपमेंट' का महकमा अपने आर्गनाइजरों और ग्राम-सेवकों से प्रत्येक केन्द्र से संबंधित गाँवों का कंठस्थ साहित्य संग्रह करा ले। जिसमे बीमारियों के नुस्खे, जड़ी बूटियों

के नाम और गुण, जातीय नाचों, विवाह आदि संस्कारों और त्योहारों के विवरण भी शामिल हों।

५—सूबे की सरकार अपने शिक्षा-विभाग के सेक्रेटरी या डाइरेक्टर की प्रधानता में कुछ सरकारी और गैर सरकारी विद्वानों की एक समिति बना दे, जो जिलों, तहसीलों और ग्राम-सुधार के केन्द्रों से आये हुये साहित्य का विश्लेषण करके उसे प्रकाशित करे और ग्राम-सुधार की एक स्कीम तैयार करके सरकार और जनता दोनों के सामने रक्खे।

६—जातीय नृत्यों के फिल्म लेने के लिये और जातीय गीतों के रेकार्ड तैयार करने के लिये शिक्षा-विभाग के सेक्रेटरी या डाइरेक्टर मशीनों की व्यवस्था करें।

७—शिक्षा-विभाग ग्राम-साहित्य के पठन-पाठन की व्यवस्था अपने स्कूलों और कालेजों में करे।

८—गाँव में शिक्षा-प्रचार के लिये कथा की पद्धति जारी की जाय। आँख की अपेक्षा कान को शिक्षा का माध्यम बनाने में अधिक महत्व दिया जाय।

९—गाँव के पुस्तकालयों में उद्योग-धधों की ज़्यादा पुस्तकें चुन-चुनकर रक्खी जायँ।

१०—ग्राम-सुधार और बेसिक ट्रेनिंग स्कीम का प्रयत्न सब से पहले गाँव की ग़रीबी दूर करने के लिये होना चाहिये। ग़रीबी दूर हो जायगी तो गाँव के अतस्तल में व्याप्त सद्गुण स्वय विकसित होने लगेंगे और उसके स्वभाव का बाहरी मैल छूँट जायगा। जैसे शरीर के भीतर का स्वास्थ्य सुधरने लगता है तो चेहरे की झुर्रियाँ आप से आप ग़ायब हो जाती हैं।

हमारा ग्राम-साहित्य

सूची

विषय | पृष्ठ-संख्या

दो स्त्रियाँ चक्की पर गीत गा रही हैं।

हमारा ग्राम-साहित्य

सोहर

हिन्दू-परिवारों में पुत्र-जन्म के अवसर पर जो गीत गाये जाते हैं, उनको युक्तप्रांत के पूर्वी ज़िलों में सोहर और पश्चिमी ज़िलों में सोहिलो कहते हैं।

जिस दिन लड़का पैदा होता है, सोहर प्रायः उसी दिन से गाया जाने लगता है। महल्ले की स्त्रियाँ रात में जब घरवालों को खिला-पिलाकर छुट्टी पाती हैं, तब ज़च्चा के घर बुला ली जाती है, और ज़च्चा की कोठरी के सामने सब एक साथ बैठकर एक निश्चित स्वर से सोहर गाती हैं। कभी-कभी कोई स्त्री ढोल भी बजाने लगती है।

सोहर में जो विषय गाया जाता है, वह प्रायः पुत्र-जन्म और पति-पत्नी के व्यक्तिगत जीवन के मार्मिक प्रसंगों ही से संबंध रखता है, इससे स्त्री-मात्र को वह बहुत रुचता है।

लड़की पैदा होने पर भी कहीं-कहीं सोहर गाया जाता है। पर ज़्यादा ख़ुशी लड़के ही के जन्म पर मनाई जाती है। इसका भी कोई ख़ास कारण हो सकता है। संभव है, बहुत पहले कोई ज़माना रहा होगा, जब देवता और राक्षस, आर्य और अनार्य एक दूसरे से लड़ते रहते थे और मर्दों की कमी लगातार पड़ती रहती थी, तब से लड़की की अपेक्षा लड़का पैदा होने पर स्वभावतः ज़्यादा ख़ुशी मनाई जाने लगी। होते-होते वह ख़ुशी एक पक्की आदत के रूप में बदल गई।

योरप की बड़ी लड़ाई के बाद उसके भी कई देशों में मर्दों की कमी पड़ गई थी और लड़का पैदा करनेवाले माता-पिता को उनकी सरकारों की तरफ़ से पुरस्कार दिया जाने लगा था।

पुरस्कृत करने का काम इस देश में भी हज़ारों वर्ष पहले से होता आ रहा है। अन्तर केवल यह है कि यहाँ पुत्र के माता-पिता को सरकारी पुरस्कार के बदले समाज की ओर से सम्मान दिया जाता है। पुत्र-जन्म के छठे दिन ख़ास बिरादरी के लोग और बारहवें दिन उस गाँव ही के नहीं, आस-पास के, मीलों दूर के गाँवों के भी, हित-मित्र लड़के के पिता के घर पर आते हैं, वहीं भोजन करते हैं और लड़के के घरवालों को सम्मानित करते हैं।

शूरता के लिए प्रशंसित जातियों में कन्या के जन्म से ख़ुशी का न मनाया जाना बिलकुल स्वाभाविक है। उनको अपने समाज के लिए वीर मर्द चाहिए। इससे नवागन्तुक मर्द का स्वागत समाज के लोग जी खोलकर करते हैं।

यहाँ सोहर के कुछ नमूने दिये जाते हैं, जिनमें पुत्र के परि-वार और उसके समाज के हृदय की सुन्दर झलक देखने को मिलेगी—

[१]

कोठवा से उतरी राधिका अँगनवाँ मे ठाढ़ी भईं
अँगनवा मे ठाढ़ी भईं रे।
अरे ओ मोरे रामा, हँसि हँसि पूँछहिं जसोदा
काहे बहु अनमन रे ॥१॥

काह कहौ मोरी सासु कहत मोहे लाज लागे रे।
अरे ए मोरी सासु, आजु महल मोरे चोरी भई
तिलरी चोराय गई रे ॥२॥

तोरि डारौ हाँथे क हँथेहरा, गोड़े क गोड़ाहर।
अरे ए मोरी बहुआ, ओढ़ि लेहु नित का डुपटवा
त मुरली चुराय लावो ॥३॥

तोरि डारिन हाँथे का चुड़िला गोड़े का गोड़ाहर।
ओढ़ि लिहिन नित का डुपट्टा त
मुरली चुराइ लाइन रे ॥४॥

बहरा से आयें कन्हैया अँगनवाँ मे ठाढ़े भये।
अरे ए मोरे रामा, हँसि हँसि पूछहि जसोदा
काहे बेटा अनमन रे ॥५॥

काह कहौ मोरी माया, कहत मोहिं लाज लागे।
आज बृन्दावन चोरी भई, मुरली चोराय गई रे ॥६॥

अस जिन जानो राधिका मुरलिया बाँस की है रे ।
मुरली मे बसे मोरे प्रान, मुरलिया हमरी दै देव रे ॥७॥

अस जिन जान्यो कन्हैया तिलरिया लाह कै है ।
अरे ए मोरे कान्हा, तिलरी मे लागो हीरा लाल,
तिलरिया हमरे बाप की है ॥८॥

(मुरादाबाद)

राधा कोठे से उतरीं और आँगन में खड़ी हुईं । यशोदा हँसकर पूछने लगीं—हे बहू ! मन उदास क्यों है ? ॥१॥

हे सासु ! मै क्या कहूँ ? कहते हुये मुझे लाज लगती है । आज मेरे महल में चोरी हुई है । कोई मेरी तिलरी चुरा ले गया ॥२॥

यशोदा ने कहा—हाथ-पैर के कड़े तोड़ डालो, और हे मेरी बहू ! दुपट्टा ओढ़कर तुम भी मुरली चुरा लाओ ॥३॥

राधा ने हाथ की चूड़ी और पैर के कड़े तोड़ डाले और दुपट्टा ओढ़कर वह मुरली चुरा लाईं ॥४॥

कन्हैया बाहर से आये और आँगन मे खड़े हुए । यशोदा हँसकर पूछने लगी—हे बेटा ! उदास क्यों हो ? ॥५॥

हे मेरी माँ ! मैं क्या कहूँ ? कहते हुये लाज लगती है । आज वृन्दावन मे चोरी हुई, मेरी मुरली चोरी गई ॥६॥

हे राधा ! ऐसा मत समझना कि मुरली बाँस की है । मुरली में मेरा प्राण बसता है । मेरी मुरली दे दो ॥७॥

हे कन्हैया ! ऐसा मत समझना कि तिलरी लाख की है। तिलरी में हीरा और लाल जड़े हैं। वह मेरे बाप की दी हुई है ॥८॥

इसमें विवाह के उपरान्त पति-पत्नी की प्रेम-वर्द्धक छेड़-छाड़ का वर्णन है।

[२]

मोरे आँगन चन्दन रुखवा त लहर लहर करै हो।
ललना, तेही पर बोलै काग त बोल सुहावनै ॥१॥

को काग नैहर से आवा की हरिजी पठावा।
काग कौन सँदेस तुम लायो त बोलिया सुहावन ॥२॥

नहीं हम नैहर से आवा ना हरिजी पठावा।
आज के नवयें महीना होरिल तोरे होइहैं ॥३॥

चुप रहौ काग तू चुप रहौ बैरिनि ना सुनै।
एक तो बिटियही मोरी कोख दुसरे हरि दारुन ॥४॥

आठै नौ मास लागत होरिल जनम भए।
बाजै लागे आनँद बधैया उठन लागे सोहर हो ॥५॥

रान्ह परोसिन माया मोरी और बहिन मोरी।
कगवा का हेरी मँगाओ मै सोनवा मिढ़ावौं ॥६॥

सोनवाँ मिढ़ौवै वोकै ठोर रूपे दोनौ डखना।
सोने के कटोरिया मे दूध भात कगवा क भोजन ॥७॥

मेरे आँगन में चंदन का पेड़ लहलहा रहा है। हे सखी! उस पर कौवा बोल रहा है। उसकी बोली बड़ी सुहावनी लगती है ॥१॥

हे कौवा! तुम नैहर से आये हो? या मेरे प्रियतम ने तुमको भेजा है? कौन-सा संदेशा तुम लाये हो? तुम्हारी बोली बड़ी सुहावनी लगती है ॥२॥

न तो नैहर से आया हूँ, न तुम्हारे प्रियतम ने मुझे भेजा है। आज के नवें महीने तुम्हारे पुत्र होगा ॥३॥

हे कौवा! चुप रहो, कहीं वैरिन न सुन ले। एक तो मेरी कोख यों ही कन्या-वाली है, दूसरे मेरे प्रियतम (बार-बार कन्या ही कन्या पैदा करने के कारण) मुझसे प्रेम नहीं करते ॥४॥

आठवें के बाद नवाँ महीना लगते ही पुत्र ने जन्म लिया; आनंद की बधाई बजने लगी और सोहर गाया जाने लगा ॥५॥

हे मेरी पड़ोसिनो! तुम मेरी माँ हो, मेरी बहन हो, कौवे को खोज लाओ, मैं उसे सोने से मिढ़ाऊँगी ॥६॥

उसकी चोंच और उसके दोनों डैनों को मैं सोने से मिढ़ाऊँगी। सोने की कटोरी में मैं उसे दूध और भात खाने को दूँगी ॥७॥

इस गीत में पुत्र-जन्म से माता को होनेवाली खुशी का वर्णन है। कौवा-जैसा कुत्सित गिना जानेवाला पक्षी भी सुखदायक वचन बोलने के कारण सोने से मढ़ा जाने का पात्र समझा गया है। इस प्रकार कौवे के बहाने मनुष्य के परिवार में मधुर भाषण की विशेषता भी बताई गई है।

गाँववालों का यह विश्वास होता है कि जब कौवा घर की मुँडेर पर काँव-काँव बोलता है, तब घर में कोई न कोई नया मेहमान आता है।

---

[३]

मैं तो पहले जनौंगी धीयरी,
मेरी जौ कोखि होय सुलच्छनी ॥
जाकी गरजति आवैगी बराइति री,
पालिकी चढ़ि आवै साजना ॥१॥

मेरो घरु जो रितो अरु पेटु री,
मेरी धीयरि जमईया लै गयो ॥
मै तौ बहुरि जनौंगी पूतु री,
मेरी जौ कोखि होय सुलच्छनी ॥२॥

जाकी गरजति जायगी बरायत री,
पालिकी चढ़ि आवै कुलबहू ।
मेरो घरु तौ भरो अरु पेटु री,
मेरी रुनुक झुनुक डोलै कुलबहू ॥३॥

(बदायूँ)

बहू अपने मन की लालसा बतलाती है :—

मैं पहले कन्या जनूँगी; यदि मेरी कोख सुन्दर लक्षणवाली हुई तो। जिसके विवाह के लिये बाजा बजाती हुई बरात आयेगी और दामाद पालकी में चढकर आयेगा ॥१॥

हाय ! मेरा तो घर भी खाली होगया और पेट भी; मेरी कन्या को तो दामाद लेगया। अब तो मैं पुत्र जनूँगी, यदि मेरी कोख सुन्दर लक्षणवाली हुई तो ॥२॥

जिसकी बरात बाजा बजाती हुई जायगी और बहू पालकी में

चढ़कर आयेगी। मेरा घर भी अब भरा-पूरा लगता है और पेट भी। बहू रुन-झुन करती हुई घर में डोल रही है ॥३॥

इस गीत में गर्भिणी बहू के मन की तरंगें दिखाई गई हैं।

---

[४]

एक साध मन उपजी, जो हर पुजवै।
साहिब! हमरे नैहर लौ जावो पियरी लै आवो ॥१॥
तुम्हरो तो नैहर गोरी दूर बसै, को मेरे जैहै।
घर ही मे पियरी रँगैहौ, मै साध पुजैहौ ॥२॥
भोर होत पौ फाटत होरिल उर घरे।
बजन लागे अनँद बधाये, गावैं सखी सोहरे ॥३॥
बाहर बजै बधैया, भीतर सखी सोहरे।
सात सबद सहनैया ससुर द्वारै बाजै,
बहुत नीको लागै ॥४॥
बरहीं बरस बोरा आये, मलिन घर उतरे।
मालिन, किन घर बजै बधैया, गावैं सखी सोहरे ॥५॥
साहिब, तुम्हरी बहिन घर लाल भये,
तुम्हरे भनिज भये।
उन घर बजै बधैया, गावैं सखी सोहरे ॥६॥
जो मै ऐसी जनतो, बहिन घर लाल भये,
हमरे भनिज भये।
बेचतों मैं ढाल तलवरिया, कमर कटरिया,
सिर की पगड़िया, पियरी लै आवतो ॥७॥

हकरो गाँव के बजजवा, बेगि चले आव,
अरे जल्दी आव।
बजजा ! पँचरग चुनरी लै आव, बहिनै पहिरावौ
बहिन सुख मानै ॥८॥

हकरो गाँव के सुनरा, वेगि चले आव,
अरे जल्दी आव।
सुनरा, सोने रूपे खडुआ लै आव,
भनिजहिं पहिरावौ, बहनोई सुख मानै ॥९॥

हकरो गाँव के दरजी, बेगि चले आव, अरे जल्दी आव।
दरजी रेसम का कुरता सि लाव, भनिजहिं पहिरावौ,
बहिन सुख पावै ॥१०॥

(इटावा)

मन में एक इच्छा उत्पन्न हुई है, यदि भगवान उसे पूरी करें। हे स्वामी ! मेरे नैहर जाओ और वहाँ से 'पियरी' (पीली धोती) ले आओ ॥१॥

हे गोरे रंगवाली ! तुम्हारा नैहर तो बड़ी दूर है, कौन जाय ? मैं घर ही में 'पियरी' रँगवा दूँगा; मैं ही तुम्हारी इच्छा पूरी कर दूँगा ॥२॥

सबेरे, पौ फटते ही, पुत्र उत्पन्न हुआ। आनन्द की बधाई बजने लगी और सखियाँ सोहर गाने लगीं ॥३॥

घर के बाहर बधाई बज रही है और घर के भीतर सखियाँ

सोहर गा रही हैं। ससुर के द्वार पर सातों स्वरों में शहनाई बज रही है, जो बहुत प्यारी लगती है ॥४॥

बारहवें वर्ष (बहन के विवाह के बाद) भाई आया और मालिन के घर पर ठहर गया। हे मालिन ! किसके घर में बधाई बज रही है और सखियाँ सोहर गा रही हैं ? ॥५॥

मालिन ने कहा—हे साहब ! तुम्हारी बहन के पुत्र उत्पन्न हुआ है ; तुम्हारे भाञ्जा हुआ है। इसीसे उस घर में बधाई बज रही है और सखियाँ सोहर गा रही हैं ॥६॥

भाई पछताने लगा—मैं ऐसा जानता कि बहन के पुत्र हुआ है, मेरे भांजा हुआ है, तो मैं अपनी ढाल-तलवार, कमर की कटारी और सिर की पगड़ी बेंचकर बहन के लिये 'पियरी' (पीली धोती) ले आता ॥७॥

गाँव के बजाज को बुलाओ। अरे, जल्दी आओ। हे बजाज ! पाँच रंगों में रँगी हुई चूनरी ले आओ; मैं बहन को पहनाऊँ, जिससे मेरी बहन बहुत सुख माने ॥८॥

गाँव के सुनार को बुलाओ। सुनार ! जल्दी आओ। हे सुनार ! सोने और चाँदी के कड़े बना लाओ; मैं भाञ्जे को पहनाऊँ, जिससे बहनोई प्रसन्न हों ॥९॥

गाँव के दरज़ी को बुलाओ। दरज़ी ! जल्दी आओ। हे दरज़ी ! रेशम का कुरता बना लाओ; मैं भाञ्जे को पहनाऊँ, जिससे बहन सुख पाये ॥१०॥

इस गीत में बहन के लिये भाई का अकृत्रिम प्रेम दिखलाया गया है।

---

[५]

छापक पेड़ छिउलिया तौ पतवन घन बन।
ए हो ओहि तरे ठाढ़ी सीतल देई
मनही बिसोह करै हो ॥१॥

को मोरे दुइ खर तुरिहै त मड़ई बनइहँइ।
ए हो, को मोर दियना जरइहैं
त मड़ई रखइहँइ ॥ २ ॥

बन से जो निकरे बन तपसी
त सीता समुझावहिँ हो।
सीता ! हम तोरा दुइ खर तुरब त मड़ई छवाइब।
सीता ! हम तोरा दियना जराइब त
मड़ई रखाइब हो ॥३॥

को मोरा लीन्हे मुट्ठी भर सोने का छुरवा त
को मोर धगरीन।
ए हो को मोर पँजरा बैठइहैं त
बिपती गवाँइब हो ॥४॥

बन से जो निकरी बन तपसिन
सीता समुझावहिँ।
सीता ! हम लेबो मुट्ठी भर सोने का छुरवा त
हम तोर धगरीन।
सीता ! हम तोरे पँजरा बैठाइब त
बिपति गवाँइब हो ॥५॥

भोर भये पहु फाटल लउहर जनम ले ले
जगल सोहावन हो।
ए हो, हँकरि बोलावहु नग्र के नउआ त
हँकरि बोलावहु हो।
नउवा चारि सोपारी लेइ लेहु
रोचन लेइ जावहु हो ॥६॥

पहिला रोचन राजा दसरथ दुसरा कौसिल्ला रानी।
ए हो, तिसरा रोचन देवर लछिमन,
पिअइ न बतायउ हो ॥७॥

छोटे कदम के रे डाल त राम दतुइन तोरै।
लछुमन किनके रोचन तुम पायो त
भहर-भहर करै झहर-झहर करै ॥ ८ ॥

भाभी जो हमरी सीतलदेई बड़ी गुन आगरि।
भइया, उनहीं के भये नँदलाल रोचन हम पायो।
मोरे सिर भहर भहर करै, झहर झहर करै ॥ ९ ॥

जनम तो लेले पूता बड़ी रे विपति में हो,
बड़ी रे सँसति मे हो।
पूता जनम जो लेतेउ अजोधिया हमहुँ मुँह देखित ॥१०॥
राजा दसरथ पटना लुटवते कौसिल्ला रानी अभरन।
रामा तरर तरर चुवै आँसु पटुकवन पोछई ॥११॥
(फैजाबाद)

ढाक का एक छोटा-सा पेड़ है, जो पत्तों से खूब सघन हो रहा

है। सीता देवी उसी के नीचे खड़ी होकर मन में चिंता कर रही है ॥१॥

मेरे लिये कौन खर (सरपत) तोड़ेगा ? कौन झोपड़ी बनायेगा ? कौन दिया जलाएगा ? और कौन झोपड़े की रखवाली करेगा ? ॥२॥

वन में से तपस्वी निकले। उन्होंने कहा—हे सीता ! हम तुम्हारे लिए सरपत तोड़ेंगे, झोपड़ी बनायेंगे, दिया जलायेंगे और झोपड़ी की रखवाली करेंगे ॥३॥

सीता फिर चिंता करने लगी। मेरा यहाँ कौन है जो सोने की मूठ वाला छुरा लेगा ? कौन मेरी धगरिन (नाल काटनेवाली चमारिन) होगी ? मेरी बच्चादानी कौन बैठायेगा ? और कौन मेरी विपत्ति हरेगा ?

वन मे से तपस्विनियाँ निकली। उन्हो ने कहा—हे सीता ! हम सोने की मूठ वाला छुरा लायेंगी, हम धगरिन होंगी, हम तुम्हारी बच्चादानी बैठायेंगी, और विपत्ति मे सहायक होंगी ॥५॥

सबेरा हुआ। पौ फटा। पुत्र उत्पन्न हुआ। जंगल सुहावना लगने लगा। अरे, दौड़कर नगर के नाई को तो बुला लाओ। हे नाई ! चार सुपारियाँ लेलो और रोचन लेकर जाओ ॥६॥

पहला रोचन राजा दशरथ को, दूसरा रानी कौशल्या को और तीसरा देवर लछमण को देना; पर पति (रामचन्द्र) को न बताना ॥७॥

कदम्ब का छोटा-सा पेड़ है। उसकी डाल से राम दातुन तोड़ रहे हैं। हे लछमण ! तुमने यह रोचन किसका पाया है, जो तुम्हारे माथे पर दमक रहा है ? ॥८॥

लछमण ने कहा—मेरी भावज जो सीता देवी हैं, जो गुणागर हैं, हे भाई ! उन्हीं के पुत्र उत्पन्न हुआ है। उन्हीं का यह रोचन मैं ने पाया है, जो मेरे माथे पर दमक रहा है ॥९॥

राम मन में कहने लगे—हे पुत्र ! जन्म तो तुमने बड़ी विपत्ति में लिया। हे पुत्र ! तुम अयोध्या में जन्मे होते तो मैं भी तुम्हारा मुँह देखता ॥१०॥

तुम्हारे जन्म की ख़ुशी में राजा दशरथ वस्त्र लुटाते और रानी कौशिल्या गहने लुटातीं। राम की आँखों से तरर-तरर आँसू बहने लगे; जिन्हें वे दुपट्टे से पोंछते हैं। ॥११॥

राम के जीवन-चरित्र मे सीता का वन-वास एक ऐसी घटना है, जो पत्थर के कलेजे को भी पिघला सकती है। हिंदी के भक्त कवियों ने इस घटना को छिपाने ही का प्रयत्न किया है; पर स्त्रियों ने इस विषय को लेकर अपने गीतों में पति-पत्नी के मनोभावों के बड़े ही करुणा-पूर्ण चित्र खींचे हैं। वन मे सीता को पुत्र हुआ है; सीता ने घर के सब लोगों को रोचन भेजा, केवल पति को नहीं; पति को इससे जो मनोवेदना हुई होगी, वह अनुभव की बात है; शब्दों में वह व्यक्त नहीं की जा सकती।

सीता के वन-वास के समय राजा दशरथ जीवित नहीं थे। पर गीत एक गृहस्थ के पूरे कुटुम्ब के लिये रचे गये हैं, जिसमें पिता, माता, पति, पत्नी, पुत्र, पुत्री और पतोहू सब हैं, और राजा दशरथ का परिवार उसका एक आदर्श है। इसलिये गीतों में राजा दशरथ से अभिप्राय किसी भी कुटुम्ब के पिता से है, और रानी कौशल्या का घर की स्वामिनी से।

---

[६]

कि गुन अमवा वउरलै अरे ना जानों कौने गुन ॥
कि अरे अमवा तोके मलिया जो सोचेला कि तू
अपने गुन ॥१॥

नाही मोके मलिया जो सींचेला नाहीं हंम अपने गुन ॥
रिमकि झिमकि दैव बरिसै उनके जो बुन्द परे ॥२॥

बहुवा होरिल बड़ सुन्दर ना जानौ कौने गुन ॥
मोरी बहुआ की तू खइलू नौरँगिया की पेट गुन ॥३॥

नाहीं हम खइली नौरँगिया नाही मोरे पेट गुन ॥
लगिलिउँ ससुइयाजी के गोड़ त उनके धरम गुन ॥४॥

बहुआ चउक बड़ सुन्दर ना जानी कौने गुन ॥
किय तोहरी सुघरी नउनियाँ की तोहरे आँगन गुन ॥५॥

नाहीं मोरी सुघरी नउनियाँ नाही मोरे आँगन गुन ॥
सैयाँ मोर तप व्रत कीन्ह तौ उनके धरम गुन ॥
ललना, जिअरा मे भरा है हुलास सबै लागइ सुन्दर ॥६॥

(बिजनौर)

आम में बौर लगे हैं; क्या कारण है ? हे आम ! तुमको माली ने सींचा है, इस कारण से बौर लगा है ? या तुम अपने ही प्रभाव से बौरे हो ? ॥१॥

न माली के सींचने से और न अपने ही प्रभाव से मुझमे बौर लगा है। आकाश से जो रिमझिम करके वृष्टि हुई है, उसी की बूँदें पड़ने से बौर लगा है ॥२॥

हे बहू ! होरिल (शिशु) बड़ा सुन्दर है, क्या कारण है ? हे मेरी बहू ! तुमने नारंगी खाई थी,उसके प्रभाव से ? या तुम्हारी कोख से सुन्दर बालक पैदा होता ही है ? ॥३॥

मैंने नारंगी नही खाई थी, और न मेरी कोख के कारण ही ऐसा सुन्दर बालक पैदा हुआ है; बल्कि मैंने सासुजी के पैर छुए थे, उन्हीं के धर्म के प्रभाव से ऐसा सुन्दर बालक पैदा हुआ है ॥४॥

हे बहू ! चौक बड़ा सुन्दर है । तुम्हारी नाइन (जिसने चौक पूरा था) बड़ी चतुर है ? या आँगन सुन्दर है ? जिससे चौक भी सुन्दर लगता है । ॥५॥

न तो मेरी नाइन ही चतुर है, और न आँगन ही सुन्दर है; बल्कि मेरे स्वामी ने बहुत तप-व्रत किया था (जिसके प्रभाव से यह पुत्र हुआ है); उन्ही के धर्म से यह चौक सुन्दर लगता है । और एक कारण यह भी है कि आज सब के हृदयों में आनन्द भर गया है, इससे सभी चीजें सुन्दर लग रही हैं ॥६॥

इस गीत से बहुओं को दो शिक्षाएँ मिलती हैं, एक तो सासु के साथ नम्रतापूर्वक व्यवहार करने की और दूसरे पति यदि तप और व्रत करे तो उसके प्रभाव से सुन्दर पुत्र की उत्पत्ति होती है ।

अंत की कड़ी मे कैसी मनोहर और मनोविज्ञान की बात कही गई है, कि यदि हृदय प्रसन्न है तो संसार की सभी चीज़ें प्रिय लगती हैं ।

[७]

नजर कई मतल बढ़इया पलँगरीआ ढीली सालइ
पलँगारी ढीली सालई रे ॥
हे हो निंदिआ कै मतल बहुरिया ओबरिआ लै बिछावई
ओंवरिया लै बीछावइ रे ॥१॥

सोने के खरऊआँ कवन रामा मथवन मनि बरइ
मथवन मनि बरई रे ।
राजा निहुरी निहुरी झाँकइ ओबरी
निंदरिया नाही आवई ॥२॥

राजा न हो मोरे राजा तुम्हीं मोरे राजा ।
राजा, रस देई के बेनिया डोलावा निदरिआ मोरे आवई ॥३॥

रानी न हो मोरी रानी तुम्हीं मोरी रानी हो ।
रानी एक तौ बाबा के दुलरुआ त मैया के पियारवा रे ।
रानी तीसरे कचेहरी कै जोति, मै कैसे बेनिया हाँकउँ
चेरीअआ बेनिया हाँकई हो ॥४॥

राजा न हो मोरे राजा तुम्ही मोरे राजाउ रे ।
राजा एकऊ हारिल जो जनमिहै, तो तुम्ही बेनिया हँकबेउ
तुम्ही से हँकाउब हो ॥५॥

(बाराबकी)

आँखों का मतवाला बढई पलँग ढीली सालता है। नींद की मतवाली बहू उसे ओबरी (ज़च्चा-घर) में लेजाकर बिछाती है ॥१॥

असुक राम, जिनके माथे पर मणि जल रही है, सोने के खड़ाऊँ

पर चढ़े हुए झुक-झुककर ओबरी झाँकते हैं; उन्हें नींद नहीं आती ॥२॥

हे मेरे राजा ! तुम्हीं मेरे राजा हो; ज़रा प्रेम से पंखी हाँक दो, तो मुझे नींद आ जाय ॥३॥

हे मेरी रानी ! तुम्हीं मेरी रानी हो। एक तो मैं अपने बाप का दुलारा; दूसरे माँ का प्यारा; तीसरे कचहरी की ज्योति; भला मैं कैसे पंखी हाँकूँ ? पंखी दासी हाँकेगी ॥४॥

हे मेरे राजा ! तुम्हीं मेरे राजा हो। एक भी पुत्र मेरे जन्मा तो तुम्हीं पंखी हाँकोगे। मैं तुम्हीं से हँकाऊँगी ॥५॥

इस गीत में पति-पत्नी का चुहल वर्णित है।

---

[८]

पावों में पैजनियाँ लाला ठुमुक ठुमुक खेलोगे ॥१॥
अच्छी शुभ घड़ी वादिन जानूँगो
जादिन लाला मेरो दादा-दादी बोलोगे ॥२॥
कै झूलें मेरे पालनों, कै दादी की गोद।
अदन चदन को पालनो कै रेशम की डोर ॥३॥
कृष्ण को पालनों बनवाऊँ;
दादी ने गाढ़ो पालनो दादा ने बँटा दई डोर ॥४॥
कै झूले मेरो पालनो कै बाबा की गोद ॥५॥
(मुरादाबाद)

हे मेरे लाल ! तुम्हारे पैरों में पैंजनियाँ हैं। अब तुम ठुमुक-ठुमुककर खेलोगे ॥१॥

हे मेरे लाल ! मैं उसी को शुभ घड़ी जानूँगी, जिस दिन तुम दादा-दादी बोलोगे ॥२॥

या तो मेरे पालने में झूलो, या दादी की गोद में झूलो ॥३॥

चंदन के पालने में रेशम की डोर लगी है ॥४॥

मैं अपने कृष्ण के लिये पालने बनवाऊँगी। दादी ने उसे गढ़ाया है और दादा ने उसके लिये रेशम की डोर बट दी है ॥४॥

या तो तुम मेरे पालने में झूलो, या दादा की गोद में रहो ॥५॥

---

[९]

चैतहि कै तिथि नवमी तौ नौबति बाजइ हो।
बाजइ दसरथ राज दुआर कौसिल्ला रानी मदिर हो ॥१॥

मिलहु न सखिया सहेलरी मिलिजुलि चालित हो।
जहाँ राजा के जनमे हैं राम करिय नेवछावरि हो ॥२॥

केउ नावै बाजू औ बन्द केउ कजरावट हो।
केउ नावैं दखिनवाँ क चीर करहिं नेवछावरि हो ॥३॥

भितराँ से निकरीं कौसिल्ला अँगनवहिं ठाढ़ी भईं हो।
रानी घइ घइ हिरदै लगावै करै नेवछावरि हो ॥४॥

राम नयन रतनारे कजर भल सोहै हो।
दीन्हों रचि रचि फुआ सुभद्रा तउ पतरी अँगुरियन हो ॥५॥

राम के मथवा लुटुरिया बहुत निक लागै हो।
जैसे फूलन के बिचवा कलिया बहुत निक लागै ॥६॥

राम के गोड़वा घुघुरुआ बहुत निक लागै हो।
नान्हे गोड़वन चलत बकैयाँ देखत राजा दसरथ ॥७॥

जो पै मगल गावै गाय सुनावै हो।
सो तौ तुलसी जगत तरि जाय अमर पद पावै हो ॥८॥

(फैजाबाद)

चैत महीने की नवमी तिथि है, नौबत बज रही है। नौबत राजा दशरथ के द्वार पर और कौशल्या रानी के महल मे बज रही है ॥१॥

हे सखियो! आओ, सब मिलजुल कर चले। राजा के राम जन्मे हैं, उनकी न्योछावर कर आये ॥२॥

किसी ने बाजूबंद, किसी ने कजरौटा और किसी ने दक्खिनी चीर न्यौछावर किया ॥३॥

कौशल्या रानी भीतर से निकलीं और आँगन मे खडी हुईं। वह सब को पकड-पकड कर छाती से लगती हैं और न्योछावर करती हैं। अथवा जो न्योछावर करने आई थीं, उनको पकड-पकड कर छाती से लगाती है ॥४॥

राम की रतनारी आँखों में काजल बहुत सुहावना लगता है। फूफी सुभद्रा ने उसे अपनी पतली उँगलियों से बहुत बनाकर लगाया है ॥५॥

राम के माथे पर छोटी-छोटी लटे बहुत खिलती है, जैसे फूलों के बीच में कलियाँ सुन्दर लगती हैं ॥६॥

राम के पैर में घुँघरू बहुत सुन्दर लगते हैं। राम नन्हे-नन्हे

पैरों से 'बकैयाँ' (घुटनों के बल) चलते हैं। राजा दशरथ देख रहे हैं ॥७॥

जो यह मंगल गीत गायेंगे या गाकर सुनायेंगे, तुलसीदास कहते हैं, वे लोग संसार को पार कर जायँगे और अच्छी गति पायेंगे ॥८॥

'राजा दशरथ देख रहे हैं' इस कड़ी में प्रत्येक पुत्रवान् पिता के हृदय का सुख भरा हुआ है।

---

[१०]

राम चले ससुररिया सीतल देइ के नैहर।
उमड़े जनकपुर के लोग राम के देखन ॥१॥

मचियहि बैठी कौसिल्ला रानी सिहासन राजा दसरथ।
राम बहुत दिन लागे निनरिया न लागै ॥२॥

हँसि हँसि चिठिया पठायेन बिहँसि ओरहन दीहेनि।
मोरे राम, के तोहैं राखेन बेलम्हाई निनरिया न लागै ॥३॥

हँसि हँसि चिठिया क बाँचेन बिहँसि ओरहन लिहेन।
राम भोरे बिदा होइ जाव आरहन अब पावा ॥४॥

साँझेनि घोड़वा मलायेन रथ तैयारेन।
राम निहुरि निहुरि माथ नवायेन घरे हम जावइ ॥५॥

लागि झरोखवाँ सीतल रानी नैनन अँसुवा झारै।
राम मोह माया सब छोड़ौ घरहिं सिधारौ ॥६॥

अगिली के रथ पर राम पिछली पर लछिमन।
बिचली प सीतल रानी तीनिउ घर आयेन ॥७॥

राम ससुराल को चले, जहाँ सीतादेवी का नैहर है। राम को देखने के लिये जनकपुर के लोग उमड पड़े ॥१॥

मचिये पर कौशल्या रानी और सिंहासन पर राजा दशरथ बैठे हैं। कौशल्या ने कहा—हे राजा ! राम ने ससुराल में बहुत दिन लगाया, नींद नहीं आती ॥२॥

राजा ने हँसकर चिट्ठी भेजी और मुसकुराकर उलहना भेजा कि हे मेरे राम ! किसने तुमको बिलमा रक्खा है ? तुम्हारे बिना हमें नींद नहीं आती ॥३॥

राम ने हँसकर चिट्ठी पढ़ी और मुसकुराकर उलहना लिया। उन्होंने निश्चय किया कि सवेरे बिदा हो जायँगे; क्योंकि उलहना मिला है ॥४॥

राम ने शाम को घोड़ा मलाया, और रथ तैयार कराया। राम ने सब को झुक-झुककर सिर नवाया और कहा—हम अब घर जायँगे ॥५॥

सीता-रानी झरोखे पर खड़ी हैं। उनकी आँखों से आँसू झड़ रहे हैं। वह कहने लगीं—हे राम ! अब यहाँ का मोह छोड़ो और घर चलो ॥६॥

आगे के रथ पर राम हैं, पीछे के रथ पर लछमण और बीच के रथ पर सीता रानी हैं ॥७॥

ससुराल में जाकर और सास-ससुर और नैहर में मौजूद पत्नी के स्नेह का सुख पाकर पति का अपने घर को भूल जाना स्वाभा-

विक है। पर माता-पिता का प्रेम-पूर्ण उलहना पाकर वह घर लौटने की जो उतावली करता है, उसमें माता-पिता के लिये उसके हृदय का प्रेम और आदर-भाव भी दर्शनीय है।

---

[११]

अरे रे कारी कोइलिया अँगन मोरे आवहु।
कोइलरि! आज मोर पहिलो चौकिया नेवति देइ आवउ॥१॥

नेउतिउ अरिगन परिगन औ ननिआउर
एक जिन नेउतेव बीरन भइया जिनसे हम रूठी॥२॥

आई गे अरिगन परिगन और ननिआउर।
एक नहिं आये बीरन भइया जिनसे हम रूठी॥३॥

सासु भेंटै आपन भइया ननदि आपन देवर।
कोइलरि छतिया उठी घहराय मैं केही उठि भेंटौ॥४॥

अरे रे माया के सखिया गीत जनि गावहु।
मोरे जियरा भये हैं बिरोग बीरन नहिं आये॥५॥

अरे रे बाबा जी क चेरिया त हमरी लौंड़िया।
देखि आवहु भइया क डगरिया कतिक दूरि आये॥६॥

आगे आगे आवै कँवरिया त पियरी गहागह।
लीले घोड़े भइया असवार औ डँड़िया भउज मोर॥७॥

कहवाँ उतारौ कँवरिया त पियरी गहागह।
सासु कहवाँ बैठावहुँ बीरन भइया
त कहवाँ भउज आपन॥८॥

मड़ये उतारौ कँवरी त पियरी गहागह।
बहुआ सभवाँ बैठावहु बीरन भइया,
त कोहबर भउज आपन ॥९॥

हरे रे मड़ये क सखिया गीत भल गावहु।
मोरे जियरा भय हैं हुलास बीरन मोर आये ॥१०॥

अरे रे सासु गोसाइन करहिया चढ़ावहु।
मोरे जियरा भये हैं हुलास बीरन मोर आये ॥११॥

अस जिन जानौ बहिनी भइया दुखित अहैं।
बेचतौं मैं फाँड़े कै कटरिया चौक लै अउतेउँ
पियरिया लै अउतेउँ ॥१२॥

अस जिन जानो ननदी की भौजी दुखित अहै।
बेचत्यौं मैं नाके कै बेसरिया पियरिया लै के अउतेउँ ॥१३॥

लहँगा लै आयें अतलस कै पियरी कुसुम कै।
अँगिया लै आयें फुलझरिया चौक पर कै चूँदरि॥१४॥

पहिरिन ओढ़िन सुरजा मनाइन।
बढ़इ बबइया तोर बेल त मान मोर राखेउ ॥१५॥

अरी काली कोयल! ज़रा मेरे आँगन में तो आओ। हे कोयल! आज मेरी पहली चौक है, जाकर न्योता दे आओ ॥१॥

मित्र-शत्रु सब (अरिगन = आर्यगण; परिगन = परिजन) को न्योता देना; ननिहाल को न्योता देना; सिर्फ़ भाई को न्योता नहीं देना, जिनसे मैं रूठी हूँ ॥२॥

शत्रु-मित्र सब आ गये। ननिहाल के लोग भी आ गये। सिर्फ भाई नहीं आया, जिससे मैं रूठी हूँ ॥३॥

सास अपने भाई को मिल रही हैं। ननद अपने देवर को मिल रही हैं। हे कोयल! मेरी छाती फट रही है, मै उठकर किसको मिलूँ? ॥४॥

अरी सास की सखियो! गीत मत गाओ। मेरे जी में बड़ी ग्लानि हो रही है, मेरा भाई नहीं आया ॥५॥

हे ससुर की दासियो! और मेरी नौकरानियो! भाई का रास्ता देखकर आओ; अभी वह कितनी दूर पर है ॥६॥

आगे-आगे काँवर (बहँगी) और गहरे रंग की पीली साड़ी आ रही है। मेरा भाई नीले घोड़े पर सवार है और पालकी में मेरी भावज है ॥७॥

मैं बहँगी को कहाँ उतारूँ? और गहरे पीले रंग की साड़ी को कहाँ रखाऊँ? हे सासजी! भाई को कहाँ बैठाऊँ? और अपनी भावज को कहाँ? ॥८॥

हे बहू! काँवर और गहरे पीले रंग की साडी को माँड़ौ में उतरवाओ। भाई को सभा में और अपनी भावज को कोहबर में बैठाओ ॥९॥

हे माँड़ौ की सखियो! अब ख़ूब मन लगाकर गीत गाओ। मेरे जी में बड़ा हर्ष हो रहा है, मेरा भाई आ गया है ॥११॥

हे घर की मालकिन सासजी! कढ़ाई चढ़ाओ। मेरे मन में बड़ा हर्ष हो रहा है। मेरा भाई आया है ॥११॥

हे बहन! ऐसा न समझना कि तुम्हारा भाई अर्थ-कष्ट में है। मैं अपने कमर की कटार बेचकर भी चौक लेकर आता ॥१२॥

हे ननद! ऐसा न समझना कि भावज कष्ट में है। मैं अपने नाक की बेसर बेचकर भी पीली साड़ी लेकर आती ॥१३॥

भैया अतलस का लँहगा, कुसुम्भी रंग की साड़ी, बेलबूटे वाली अँगिया (चोली) और चौक के लिये चूनरी लाये हैं ॥१४॥

बहू ने पहन-ओढकर सूर्य को मनाया—हे पिताजी! तुम्हारी लता खूब फैले; तुमने मेरा मान रक्खा ॥१५॥

इस गीत में बहू के हृदय का बड़ा सरस उतार चढाव दिखाया गया है। बहू के भाई और भावज का प्रेम-पूर्ण कथन भी बड़ा मार्मिक है।

---

[१२]

छापक पेड़ छिउलिया तौ पतवन गहबर।
अरे रामा तिहि तर ठाढ़ी हरिनियाँ
त मन अति अनमनि हो ॥१॥

चरतइ चरत हरिनवाँ तौ हरिनी से पूँछइ हो।
हरिनी की तोर चरहा झुरान
कि पानी बिन मुरझिउ हो ॥२॥

नाहीं मोर चरहा झुरान न पानी बिन मुरझिउँ हो।
हरिना आजु राजाजी के छट्ठी
तुम्हैं मारि डरिहइँ हो ॥३॥

मचिये बैठी कौसिल्ला रानी हरिनी अरज करइ हो।
रानी मसुवा तौ सिझही रसोइयाँ
खलरिया हमैं देतिउ ॥४॥

पेड़वा से टँगबइ खलरिया त मन समुझाउब हो।
रानी हेरि फेरि देखबइ खलरिया
जनुक हरिना जीतइ हो ॥५॥

जाहु हरिनी घर अपने खलरिया नाहीं देबइ हो।
हरिनी! खलरी क खँजड़ी मिढ़उबइ
त राम मोर खेलिहइँ हो ॥६॥

जब जब बाजइ खँजड़िया सबद सुनि अनकइ हो।
हरिनी ठाढ़ि ढकुलिया के नीचे
हरिन क बिसूरइ हो ॥७॥

(सुलतानपुर)

ढाक का एक छोटा-सा, घने पत्तोंवाला पेड़ है, जो खूब लह-लहा रहा है। उसके नीचे हरिनी खड़ी है। उसका मन बहुत बेचैन है ॥१॥

चरते-चरते हरिन ने हरिनी से पूछा—हे हरिनी! तू उदास क्यों है? क्या तेरा चरागाह सूख गया है? या तेरा मन पानी की कमी से मुरझा गया है? ॥२॥

हरिनी ने कहा—हे प्रियतम! न मेरा चरागाह ही सूखा है और न पानी ही की कमी है। बात यह है कि आज राजा के पुत्र की छट्ठी है। आज तुम मारे जाओगे ॥३॥

रानी कौशल्या मचिये पर बैठी हैं। हरिनी ने उनसे विनती की—हे रानी! हरिन का मांस तो आपकी रसोई में सीझ रहा है, हरिन की खाल आप मुझे दिलवा दीजिये ॥४॥

मैं खाल को पेड़ से टाँग दूँगी। बार-बार मैं उसे देखूँगी और मन को समझाऊँगी, मानो हरिन जीता ही है ॥५॥

कौशल्या ने कहा—हरिनी ! तुम घर लौट जाओ। खाल नहीं मिलेगी। इस खाल की तो खँजड़ी बनेगी और मेरे राम उसे बजायेंगे ॥६॥

जब-जब खँजड़ी बजती थी, तब-तब हरिनी उसके शब्द को कान लगाकर सुनती और उसी ढाक के पेड़ के नीचे खड़ी होकर अपने हरिन को बिसूरा करती थी ॥७॥

जिस स्त्री ने इस गीत की रचना की है, उसका हृदय प्रेम के मर्म से अच्छी तरह परिचित जान पड़ता है। पशुओं में भी वह उसी प्रेम का अनुभव करती है।

'बिसूरइ' शब्द की मिठास देहातवाले ही समझ सकेंगे।

---

[१३]

सोभवाँ बईठल सीरीकृष्ण दूतीश्र ।लईया लावेले हो।
राजा, रउरे महल दुई नारी झगरा नाही सूनीले हो ॥१॥

सोभवाँ से उठे सीरीकृष्ण त।राधा के महल गईली हो।
रानी कवन करेलु तकसीर रुकुमीनी गरीआवेली हो ॥२॥

एतना बचन राधे सुनलीं त सुन ही न पवेली हो।
सखीया श्राव चली ओनकी महलीयाँ,
ओरहन देई आईय हो ॥३॥

अँगना बटोरति चेरीया त अवरो लऊँड़ोया न हो।
रानी अवती बाटी राधा सवतिया,
त रउरे महल बीच हो ॥४॥

कोने से कदम पलँगीया, राधा के बईठावहु हो।
चेरीया झापा से काढ़ि चुनरीया राधा पहिरावहु हो ॥५॥

नउजीके काढ़ पलॅगिया त हम नाहीं बइठब हो।
सखीया नउजीके काढ़ चुनरिया त हम नाही पहिरब हो।
सखीया का हो करेलु तकसीर हमही गरीआवेली हो ॥६॥

कवन दुतीआ लईया लावेले झगड़ा मचावेले हो।
बहीनी ऊनकर नावं जो बतवतू
लाते लतीआईब झोटा झोंटीलाईब हो ॥७॥

कृष्ण दुती लईया लावैले झगड़ा मचावेलें हो।
वहिनी उनहीं कै नाम सुनि पवलुँ
लाते लतीआव, चुरुकीया उखारहु हो ॥८॥

अहीरा ही के रे बिटिया, त बछरू चरावेलु हो,
राधा कृष्ण करै भॅड़ुवइया त बोलेलु बरावर हो ॥९॥

भोखम के री बीटीया, त बोलेलु बरावर हो।
बार कुवारे ले अइले सिरीकृष्ण त बोलेलु बराबर हो ॥१०

(ग़ाज़ीपुर)

श्रीकृष्ण सभा में बैठे हैं। दूती ने कहा—हे राजा! आपके महल मे दो स्त्रियाँ हैं, लेकिन उनमें झगड़ा होते नहीं सुना ॥१॥

सभा से उठकर श्रीकृष्ण ने राधा के महल में जाकर कहा —

हे रानी ! तुमसे क्या अपराध होगया ? रुक्मिणी गाली दे रही हैं ॥२॥

इतना सुनते ही, अच्छी तरह सुने बिना ही, राधा ने सखियों से कहा—सखियो ! ज़रा चलो तो, 'उनके' महल में उलहना दे आयें ॥३॥

दासी आँगन बुहार रही थी। उसने कहा—हे रानी रुक्मिणी ! राधा सौत आपके महल में आ रही हैं ॥४॥

रानी रुक्मिणी ने कहा—हे दासी ! कोने से कदम्ब की लकड़ी का बना हुआ पलँग उठा लाओ। राधा रानी को बैठाओ। पेटारे में से चूनरी निकाल लाओ और राधा रानी को पहनाओ॥५॥

राधा ने कहा—हे सखी ! पलँग न निकलवाओ; मैं बैठूँगी नहीं। और चूनरी भी न मँगाओ; मैं पहनूँगी नहीं। हे सखी ! मैं ने क्या क़ुसूर किया ? मुझे गाली क्यों देती हो ? ॥६॥

रुक्मिणी ने कहा—किस कुटनी ने यह झगड़ा लगाया है ? हे बहन ! उसका नाम तो बताओ। मैं उसे लात से लतियाऊँगी और झोंटा पकड़कर झोंटियाऊँगी ॥७॥

राधा ने कहा—श्रीकृष्ण ही इधर की उधर लगाते हैं। उन्हीं का नाम सुनती हूँ। अब उन्हें चाहे लतियाओ, चाहे उनकी चोटी उखाड़ लो ॥८॥

रुक्मिणी ने कहा—अहीर की बिटिया हो, बछड़े चराया करती थी, इसी से अक्ल कम है। भला, कहीं श्रीकृष्ण चुगुली खा सकते हैं ? और तुम मेरे मुँहपर बोल रही हो ? ॥९॥

राधा ने कहा—तुम भी तो भीष्म की बेटी हो। कुँवारी थी,

तभी तुम्हे श्रीकृष्ण उड़ा लाये। तुम मेरी बराबरी क्या करती हो ? ॥ १० ॥

रुक्मिणी ने राधा का स्वागत करने में हृदय की स्वच्छता तो बहुत दिखलाई, पर अंत में दोनों मे झगड़ा होकर ही रहा। इसी तरह कुटुम्ब की स्त्रियों में केवल शक पर कलह होता रहता है और यह गीत उसका एक रोचक उदाहरण है। श्रीकृष्ण का नाम आ जाने से गीत में रोचकता बढ़ गई है।

---

[१४]

सुतल रहली अटरिया, सपन एक देखीले हो।
सासु सपन देखीले अजगूत सपन बड़ सुन्दर हो ॥१॥
धनवाँ त देखीले टुँड़ारल मनवाँ ढेमारल हो।
सासु गजहाथी ठाढीं दुअरवाँ, चढ़ल राजा दसरथ हो ॥२॥
गगा त देखीले हलोरत सरजू उफोरत हो।
सासु तिरबेनी पईठी नहालो त कोरवाँ गजाधर हो ॥३॥
धनवाँ त हवै तोर धनवा मनवाँ सतती तोर हो।
बहुवरि गजहाथी ठाढ़ दुअरवाँ चढ़ल परमेसर हो ॥४॥
गङ्गा त हइ तोरी माता त सरजू बहीनी तोरी हो।
तिरबेनी भउजी तोहारी त कोरवाँ भतीज ले ले हो ॥५॥

(गोरखपुर)

अटा पर सोई हुई थी, कि मैंने एक सपना देखा। बड़ा अद्भुत सपना था और बड़ा ही सुन्दर था ॥१॥

मैंने धान में ढूँढ निकला हुआ देखा, कपास मे ढोंढियाँ लगी

हुई देखीं ! दरवाज़े पर हाथी खड़ा देखा, जिसपर राजा दशरथ सवार थे ॥१॥

गंगाजी में लहरें उठ रही थीं, सरजू मे बाढ आई थी, त्रिवेणी पैठकर नहा रही थीं, उनकी गोद मे गजाधर थे ॥२॥

हे बहू ! धान तो तुम्हारा धन है। कपास तुम्हारी संतति है। हाथी पर सवार भगवान हैं। गंगा तुम्हारी माँ, सरजू तुम्हारी बहन और त्रिवेणी तुम्हारी भावज है। वह गोद में तुम्हारे भतीजे को लिये हुये है ॥४॥

अर्थात् बहू के भाई के पुत्र होनेवाला है।

---

[१५]

कोपभवन राजा दसरथ सुरज मनावैं आदित मनावैन हो।
आदित आजु तु भोर मति होहु त राम मोर न जागैं,
त राम भोर जागै न हो ॥१॥

जो आदित भोर होइहै अवर राम जगि हैं न हो।
सुरुजु राम बने चली जईहै त हम कैसे जीअब हो ॥२॥

सारी रात राम राम रटलें त राम के बीरह मे न हो।
ललना भोर भईल भीनुसार त मोरुग बना बोलैला हो ॥३॥

ई सब हाल राम सुनले अउर राम सुनलेन हो।
राम ठाढ़े हैं राजा के सामने त माता से पुछैले हो।
माता पिता वेदन मोही बताव कवने तरह कर हो ॥४॥

पीता बेदन बाबु ईहै तु बन बीच बीचरहु
बन बीच बीचरहु हो।
बाबू भरथ के राजसीगासन ईहवै बेदन हवै हो ॥५॥
बलकल बसन लपेटी त साथ सीता लछिमन हो।
राम माता चरन धरैं माथ त बन क सीधारैंलै हो ॥६॥
ईन्द्र छोड़ै ईन्द्रासन ब्रह्मा छोड़ै आसन हो।
माता बाप क बचन न छूटइ बचन हम राखब हो ॥७॥
(बनारस)

कोप-भवन में राजा दशरथ सूर्य को मना रहे हैं। हे सूर्य! आज सबेरा मत करो, मेरे राम जागने न पाये ॥१॥

हे आदित्य! सबेरा हो जायगा, राम जग जायँगे और बन को चले जायँगे, तो मैं कैसे जीऊँगा? ॥२॥

राम के विरह मे राजा दशरथ रातभर राम-राम रटते रहे। सबेरा हुआ और मुर्ग़ा बोला ॥३॥

राम ने सब हाल सुना। वे राजा के सामने आये। माता से उन्होंने पूछा—हे माता! पिता को किस तरह का कष्ट है? मुझे बताओ ॥४॥

हे बेटा! तुम्हारे पिता को यह कष्ट है कि तुम तो वन मे जाकर रहो और भरत राज-सिंहासन पर बैठेंगे ॥५॥

राम ने वल्कल वस्त्र पहन लिया और सीता और लक्ष्मण को साथ ले लिया। माता के चरणों पर सिर नवाकर वे वन को चले गये ॥६॥

राम ने कहा—इन्द्र अपना इन्द्रासन छोड दें और ब्रह्मा अपना

अह्मासन, लेकिन पिता का वचन न छूटे; मैं पिता का वचन रक्खूँगा ॥३॥

पुत्र के लिये हिंदू-समाज में राम का आदर्श अद्वितीय है। घर घर में राम-जैसे पितृ-भक्त पुत्र हों, हरएक गृहस्थ यही चाहता है। गीत में यही भाव प्रकट किया गया है।

---

[१६]

पिया बइठन के मचिया गढ़ावहु हो;
पिया पौढ़न के रंगपलँग से देह भरुआइल हो ॥१॥

पिया हुन हुन आवैले पीर त केहिके जगाइब हो।
सासु त सूतैं अटरिया ननद पटसरिया हो;
सइयाँ आप सुतैं रंगमहलिया मैं केहिके जगाइब हो ॥२॥

सासु उठैं बारैं त दियना ननद लेवै हँसिया हो;
प्रभु आपु चले धगरिन बोलावन
से होरिला जनम लेहले हो ॥३॥

सासू पिपरे क झार अकसाइन अरु भकसाइन हो।
सासू हम न पिअब पिपरिया,
पिपरिया भकसावै हो ॥४॥

इतना बचन राजा सुनलै सुन्हु न पवलै हो।
राजा धाइ भइलें घोड़े असवार
सवति हम आनब हो ॥५॥

सइयाँ पिपर क झार हम सहबै सवति नाहीं सहबै हो।
सइयाँ जनि लावहु सवति छाती ऊपर
पीपरि पीअब हो ॥६॥

(बस्ती)

हे प्रियतम ! बैठने के लिये मचिया गढाओ, और पौढ़ने के लिये रंगीन पलँग बनवाओ, देह भारी होने लगी ॥१॥

हे प्रियतम ! रह-रहकर पीर उठती है; किसको जगाऊँगी ? सास तो अटा पर सोती हैं; ननद पटसार में सोती है; आप रंग-महल में सोते हैं, मैं किसको जगाऊँगी ? ॥२॥

सास उठीं, दिया जलाया । ननद ने हँसिया ली । स्वामी चमरिन बुलाने चले । होरिल ने जन्म लिया है ॥३॥

हे सास ! पीपल (औषधि) की झार बड़ी कड़वी लगती है । मैं पीपल नहीं पीऊँगी ॥४॥

राजा (पति) ने इतना सुना । अच्छी तरह वे सुन भी नहीं पाये कि झटपट घोड़े पर सवार होगये और बोले कि हम सौत लायेंगे ॥५॥

हे स्वामी ! मैं पीपल की झार सह लूँगी; सौत मुझसे न सही जायगी। मेरी छाती पर सौत मत लाओ, मैं पीपल पी लूँगी ॥६॥

जच्चा को पहले-पहल कैसी-कैसी चिन्तायें होती हैं और वह कितना ठनगन करती है, इस गीत में उसीका चित्र है । साथ ही सौत से उसे घृणा भी कितनी है कि सौत के बदले वह पीपल की झार का कष्ट सहने को तैयार हो जाती है ।

बच्चा होने के बाद पीपल, सोंठ आदि कुछ दवायें ज़च्चा को दी जाती हैं।

---

[१७]

हनि हनि काटिन खम्भा औ करतुलिया बाँस।
जाइ हिंडोलवा गड़ाइन गगा जमुन बालू रेत।
एक पर राधा रुकमिनि एक पर झूले कृष्ण अकेल ॥१॥

पान खाइन पिच डारिन पर गइ चदरिया मे दाग।
चलहु न सखिया सहेलरि चिरवा धोवन हम जायँ ॥२॥

चीर धोइ भुइयाँ डारिन लै गये कृष्ण उठाय।
कृष्ण दे डालो चीर हम जल माँझ उघारि ॥३॥

ह्वै जावै जल माछरि जलवा डराइ हम लेब।
जो तू जलबा डरैबो तो हम बन कोइल होब ॥४॥

तो तुम होबो बन कोइल लसवा लगाइ हम देब।
जो तू लसवा लगैबो तो हम बन घुँघची होब ॥५॥

जो तुम होबो बन घुँघची अगिया लगाय हम देब।
जब तुम अगिया लगैबो आधा जरब आधा लाल ॥६॥

(लखनऊ)

खंभा और करतुलिया (?) बाँस काट-काटकर गंगा और यमुना की रेती पर हिंडोले गाड़े गये। एक हिंडोले पर राधा और रुक्मिणी झूलने लगीं, और दूसरे पर श्रीकृष्ण अकेले ॥१॥

श्रीकृष्ण ने पान खाकर पीक कर दिया, जिससे उनकी चादरों पर दाग़ पड़ गये ॥२॥

हे सखी-सहेलियो ! चलो न, हम चीर धोने जायँगी ॥३॥

चीर धोकर उन्होंने ज़मीन पर फैला दिया। श्रीकृष्ण उठा ले गये। हे कृष्ण ! चीर दे दो, जल मे हम उघाड़ी खड़ी है ॥४॥

हम जल मे मछली हो जायँगी। श्रीकृष्ण ने कहा—तो हम जाल डलवाकर पकड़ लेंगे। उन्होंने कहा—तुम जाल डलवाओगे, तो हम वन की कोयल हो जायँगी ॥४॥

तुम कोयल हो जाओगी, तो मैं लासा लगाकर पकड़ लूँगा।

तुम लासा लगाओगे तो हम घुँघची बन जायँगी ॥५॥

तुम घुँघची बन जाओगी, तो हम बन में आग लगा देंगे।

तुम आग लगा दोगे, तो हम आधी जलकर आधी लाल हो जायँगी ॥६॥

इस गीत में प्रेमी-प्रेमिका का परस्पर हास-परिहास है। घुँघची बनना बताकर प्रेमिका ने यह भाव प्रकट किया है कि आधे में वह श्रीकृष्ण का श्याम रूप रक्खेगी और आधे मे अपना अरुण वर्ण।

---

[१८]

अँगना चदन बड़ा रूख, चम्पे की है डार,

मोर गढाओ पालकी।

घुँघरू गढ़ लाव मेरे लाल को बाजनी ॥१॥

मिचवन हो पिय भँवर सलोने सैया भँवर घमाओ।

पाटिन चमके आरसी ॥२॥

भरी तो हो पिय रेशम, सलोने सैया, रेशम बान,

अदवाइन पखटून की, डाँसी अहो फूलन भरी सेज ॥३॥

आलंसाई है गेंदुवा, वा पर पौढ़े हैं रजवा,
डोलै सुहागिन बीजनी ॥४॥

बिजनी डुलत हँस बूझी, काहे की धना साधली ॥
मोहिं खिचड़ी की बलम खिचड़ी की है साध,
औसर खिचड़ी चाहिये ॥५॥

खिचड़ी तो अपने बबुल पर, अपने बिरन पर माँग,
हम पर मेवा माँग ले ॥६॥

बबुल बसै परदेस और रजन के देस,
बोरन बारे बेदने ॥७॥

घुँघरू गढ़ लाव मेरे लाल को बाजनी ॥८॥

भौज तो हमरी पूरब की, खिचरी को मरम न जाने।
पानी वही जमुना को और गंगाजल लाव,
चरुआ छैल कुम्हार को ॥९॥

गुड़ तो गँड़ेरी ऊपजे, सोंठ वही सतुआ की
बलम सतुआ लाव ॥१०॥

पीपरामूर गठीली, अजवाइन हो अजपुर की।
जीरो किरैथन ऊपजै, हल्दी हरदोई से लाव ॥११॥

बायबिरंगे ढुरढुरी, पीपर हो सुख पीपर लाव।
सुपारी वही रूठा की लाव, खैर ले आओ पापरी।
पान वही महुबे के चूना लाव मोतीचूर के,
चावल वही झिनवा के, दाल हरी हरी मूँग की।
घी तो वही कपिला को लाव ॥१२॥

एक पियरो, दूजे मँहगनो तेल वही सरसों को
एक पियरो दूजे चरपरो ॥१३॥

सोने को पिय करहा मँगाव, रतन जड़ाऊ करछुली।
परसौ वही सोने के थार, रूपे के कटोरा मे घी धरौ॥१४॥

सोने को पिय कठुला गढ़ाव रतन जड़ाऊ
कि पैंजना ॥१५॥

बारह मन की खीर भराव, तेरह मन को गेंदुआ
होरिल को पिय धाय लगाव ॥१६॥

हम तुम कलजुग मानिये, ऊँचे से पिय ढोल धराव,
जो रे सुनै मेरो मायको ॥१७॥

जो सुनि है मेरी माय, बैलन खिचरी भराय,
बकचन पियरी भराय।
ऊपर गागर घिरत की, ऊपर लड्डू सोठ के, ॥
कुरता टोपी रेशमी, रतन जडाऊ कि पैजना ॥१८॥

बैठो है तख्त बिछाय, पछ आओ है नंगा बाप को।
पिछवारे हो पिय हौद खुदाव, बैरी दुश्मन गिर पड़े,
जाहि न सुहाय सोई गिर पड़े।
घुँघरू गढ लाव मेरे लाल को बाजनी ॥१९॥

(अलीगढ़)

आँगन में चंदन का पेड़ है; चंपे की डाल है; पलँग गढ़ाओ।
मेरे लाल के लिये बजनेवाले घुँघरू गढ़ लाओ ॥१॥

जिसके पाये सुन्दर काले-काले हों, जिसकी पाटी दर्पण की तरह चमकती हो ॥२॥

जो रेशम के बाध से बुनी हो; जिसमें मखतूल की उरदावन लगी हो और उस पर फूलों की सेज बिछी हो ॥३॥

उस पर तकिये पड़े हों, राजा (पति) उस पर लेटे हों; सुहागिन पंखा झल रही हो ॥४॥

पति ने पंखा झलते समय पूछा—हे धन ! तुमको किस चीज़ की साध है ? हे प्रियतम ! मुझे खिचड़ी खाने की साध है, अभी खिचड़ी चाहिये ॥५॥

खिचड़ी तो अपने पिता और भाई से माँग; मुझसे तो मेवा माँग ले ॥६॥

पिता तो परदेश में, राजा के देश में बसते हैं; भाई बहुत छोटे हैं ॥७॥

भावज पूर्व की है; खिचड़ी का मर्म जानती ही नहीं। मेरे लाल के लिये घुँघरू गढ़ लाओ ॥८॥

जमना का पानी और गंगा का जल लाओ। और कुम्हार का घड़ा ॥९॥

गुड़ तो गन्ने से पैदा होता है, और सोंठ और सतुआ लाओ ॥१०॥

गाँठदार पीपरामूल, अजपुर की अजवाइन तथा जीरा जो क्यारियों में पैदा होता है और हरदोई की हल्दी लाओ ॥११॥

दुरछुरी बायभिडंग और सुख देनेवाली पीपल लाओ। सुपारी, खैर, महोबे का पान, मोती का चूना, झीने चावल, हरी मूँग की दाल और कपिला गाय का घी लाओ ॥१२॥

सरसों का पीला, महँगा और चरपरा तेल लाओ ॥१३॥

प्रियतम ! सोने की कड़ाही और रत्न जड़ी कलछुल मँगाओ। सोने के थाल मे भोजन परसो और चाँदी के कटोरे मे घी रक्खो ॥१५॥

हे प्रियतम ! सोने का कंठा और रत्न-जड़ी पैंजनी गढ़ाओ। बारह मन का गद्दा और तेरह मन का तकिया भराओ। होरिल के लिये धाय लगाओ ॥१६॥

हम तुम आनन्द मनायें। ऊँचे से ढोल बजवाओ, जिससे मेरे नैहरवाले सुनें ॥१७॥

मेरी माँ सुनेगी तो बैलों पर खिचड़ी भरकर, बकुचा-भर पियरी, उस पर घी का गागर, उस पर सोंठ के लड्डू, रेशमी कुरते-टोपी और रत्न-जड़े पैंजना भेजेगी ॥१८॥

बहू तख्त बिछाकर बैठी है। बाप का भेजा हुआ पछ (सामान, जो बच्चा पैदा होने पर नैहर से आता है) आया है। हे प्रियतम ! पिछवाड़े कुंड खुदा दो, जिसमें बैरी गिर पड़े और मेरा सुख जिसे न सुहाये, वह गिर पड़े।

मेरे लाल के लिए बजनेवाले घुँघरू गढ़ लाओ ॥१९॥

बच्चा पैदा होने पर घर-गिरस्ती मे पति-पत्नी के बीच बड़ी चहल-पहल पैदा हो जाती है। इस गीत में ज़च्चा के लिये स्वास्थ्यकर खाने-पीने की चीज़ों के नाम गिनाये गये हैं और बच्चों को सजाने के लिये उसकी माँ की उत्सुकता बताई गई है।

---

[१९]

के मोरे नौरँगीया लगावै तो थल्हवा वन्हावै।
के रे नौरगी रखवार त के मोरे चोरी करै ॥१॥

बाबा मोरा थल्हवा बन्हावैं नौरंगीया लगावै।
सखी भईया मोरा बैठे रखवार तो सैंयाँ मोरा चोरी करैं ॥२॥

बोलीया हो एक राजा बोलौंहुँ जौ बोल मानौ हो।
राजा मोरे नौरंगोया कै साधि नौरंगीया लेही आवौ ॥३॥

बोलीयहु तो धन बोलिहु बोल तो सोहावन।
धन नौरगीया बैठल रखवार नौरगी कैसे पावौं ॥४॥

कुकुरा के देबै पिया दूध भात पहरू के तिलवा।
पीया हालो बेगी डरीया ओनायौ रुमाल भरी तोरयो हो ॥५॥

हाली बेगी डरीया वोनौलें रुमाल भरी तोरेलें हो।
सखी जागी परल रखवार पेड़े घई बान्हल ॥६॥

सासू तो बोलही क रहेलां ननँद उठि बोलै हो।
भौजो जिभीया तु रखतिउ नोवार भईया मोरा बान्हल ॥७॥

खिरकी से बोललीं जच्चारानी अपनेउ भैया संग।
भैया चोरवा अलफ सुकुवार ढोलही बान्हा बान्हौ ॥८॥

जौ मै जनतौं ऐ बहीनी ये घर ही कै चोरवा।
बहीनी सोनवा कै हरवा गढ़वतौं बहनोइया गड़े डलतों ॥९॥

आवहु मोरे बहनोईया पलँग चढ़ि बैठौ।
बगीचा कै लेहु रखवारी नौरगी फल चाखो ॥१०॥

(गोंड़ा)

किसने नारंगी का पेड़ लगाया है? किसने थाला बँधाया है? कौन रखवाला है? और कौन नारंगी चुराता है? ॥१॥

बाबा (बाप) ने नारंगी का पेड़ लगाया, और थाला बँधाया।

हे सखी ! मेरा भाई रखवाली पर बैठा है और बहनोई नारंगी की चोरी करता है ॥२॥

हे राजा ! एक बात कहती हूँ, जो तुम मानो। मेरा जी नारंगी खाने को ललचाया है; कहीं से नारंगी ला दो ॥३॥

हे रानी ! तुम्हारी बात मुझे बड़ी सुहावनी लगती है। लेकिन नारंगी पर रखवाला बैठा है; नारंगी कैसे मिलेगी ? ॥४॥

हे प्रियतम ! कुत्ते को मैं दूध-भात और पहरेदार को तिलवा (तिल का लड्डू) दूँगी। जल्दी डाल झुकाकर, रुमाल भरकर नारंगी तोड़ लेना ॥५॥

पति ने जल्दी डाल झुकाकर, रुमाल भरकर नारंगी तोड़ ली। हे सखी ! इतने में रखवाला जग पड़ा और उसने चोर को पकड़कर पेड़ से बाँध दिया ॥६॥

सास तो बोलने भी न पाई कि ननद उठकर कहने लगी—हे भौजी ! जीभ को काबू में रक्खो न ? मेरा भाई बाँधा गया है ॥७॥

खिड़की खोलकर जच्चा-रानी ने अपने भाई से कहा—हे भैया ! चोर अभी छोटी उम्र का सुकुमार है, कसकर न बाँधना ॥८॥

हे बहन ! जो मैं जानता कि घर ही का चोर है, तो सोने का हार गढ़वाकर बहनोई के गले मे डालता ॥९॥

हे मेरे बहनोई ! आओ; पलँग पर चढ़कर बैठो। अब तुम बाग़ की रखवाली लो और नारंगी का फल चखो ॥१०॥

इस गीत में एक मनोहर रूपक है। नारंगी से अभिप्राय विवाह-योग्य कन्या से है। बहनोई उसे प्राप्त करने जाता है।

कन्या का भाई उसे विवाह के बंधन में बाँधकर नारंगी का बाग़ ही उसे सौंप देता है। कन्या का मज़ाक भी बड़ा सरस है।

इसमें यह भी बताया गया है कि किस प्रकार जच्चा की इच्छा की पूर्ति के लिए पति को उत्सुकता होती है।

---

[२०]

काहे रे अमवा हरिअर ना जानौ कौने गुना।
ललना ना जानौ मलिया के सींचे त ना जानौ खेत गुना ॥१॥

ना यह मलिया के सींचे त ना यह खेत गुना।
ललना रिमिकि भिमिकि दैवा बरिसै त उनही के बूँद गुना ॥२॥

होरिल तौ बड़ सुन्दर ना जानौं कौने गुना।
है हो, ना जानौं अम्मा के सँवारे त ना जानौ कोखी गुना ॥३॥

ना यह अम्मा के सँवारे तौ ना यह कोखी गुना।
ललना मोर पिया तप व्रत कीन त उनहीं के धरम गुना ॥४॥

बारह बरिस बन सेवले त गुरू घर से अवले हो।
ललना तब घर बबुआ जनमले सोहर अब सूनब हो ॥५॥

मचियहिं बैठी हैं सासु त बहुआ से पूँछइँ हो।
बहुआ कवन कवन फल खायू होरिल बड़ सुन्दर हो ॥६॥

फल तो खायूँ नौरँगिया त आम छोहारौ हो।
सासू नरियर दाख बदाम नाहीं रे जानौं वहि गुन हो ॥७॥

सभवहिं बैठे हैं ससुरु त बहुआ से पूँछइँ हो।
बहुआ कवन कवन तप किहिउ होरिल बड़ सुन्दर हो ॥८॥

सासु क बचन न टारेउँ न ननद.तुकारेउँ हो ।
ससुरुकबहुँ न लाईलूकी लायउँ नाहीं रे जानौ वहिगुन हो॥९॥

सुपेली खेलत कै ननदिया त भौजी से पूँछइ हो ।
भौजी कवन कवन व्रत कोहिउ होरिल बड़ सुन्दर हो ॥१०॥

स्वामी के मानेउँ हुकुमवा देवर क दुलारेउँ हो ।
ननदा! सब कर लिहेउँ असीस त ना जानौं वहि रे गुना ॥११॥

(इलाहाबाद)

यह आम का वृक्ष हरा क्यों है ? मालूम नहीं; माली के सींचने से यह हरा है, या खेत के प्रभाव से ? ॥१॥

न यह माली के सींचने से हरा है, न खेत के प्रभाव से । रिमझिम करके जो बादल बरसते हैं, उन्हीकी बूँदों के प्रभाव से यह हरा है ॥२॥

यह बालक बहुत सुन्दर है । इतना सुन्दर यह क्यों है ? नहीं जानता । इसकी माँ ने इसको ऐसा सुन्दर सँवार रक्खा है ? या उसकी कोख का ऐसा प्रभाव ही है ? ॥३॥

नहीं, नही; न तो यह माँ के सँवारने से इतना सुन्दर है और न कोख ही का प्रभाव है । मेरे पति ने बहुत तप-व्रत किया था । उन्ही के धर्म के प्रभाव से यह इतना सुन्दर है ॥४॥

हे सखी ! मेरे पति बारह वर्ष तक वन में, गुरु के घर में, रहकर विद्या पढते रहे । फिर घर आये । तब इस बालक का जन्म हुआ । अब सोहर सुनूँगी ॥५॥

मचिये पर बैठकर सास बहू से पूछती है—बहू ! तुमने क्या-क्या फल खाया ? जो तुम्हारा पुत्र इतना सुन्दर है ॥६॥

बहू ने कहा—मैंने नारंगी, आम, छोहारा, नारियल, दाख

और बादाम खाया था। शायद उन्हीं के प्रभाव से बालक सुन्दर हुआ हो ॥७॥

सभा में बैठे हुए ससुर बहू से पूछते हैं—हे बहू! तुमने कौन-सा तप किया है? जो तुम्हारा बच्चा बड़ा सुन्दर है ॥८॥

बहू ने कहा—हे ससुरजी! मैंने कभी सासजी की बात नहीं टाली; न ननद का तिरस्कार किया; न कभी इधर की बात उधर लगाई; शायद इसी के गुण से बच्चा इतना सुन्दर हुआ हो ॥९॥

सुपेली (छोटा सूप) खेलती हुई ननद ने पूछा—हे भौजी! तुमने कौन-सा व्रत किया था? जिससे तुम्हारा बालक इतना सुन्दर है ॥१०॥

बहू ने कहा—हे ननद! मैंने सदा स्वामी की आज्ञा का पालन किया; देवर को प्यार किया, और सबका आशीर्वाद लिया। शायद इसी से मेरा बालक सुन्दर हुआ है ॥११॥

यह गीत क्या है, एक आदर्श-बहू का सुन्दर चित्र है। बालक सुन्दर क्यों हुआ है? इसके लिये उसके पिता का तपोनिष्ठ और धर्मिष्ठ होना आवश्यक है। साथ ही उसकी माँ भी ऐसी हो, जो गृहस्थी में अपना कर्तव्य-पालन करती हुई, घर के सब छोटे-बड़ों को सुख देकर, उनसे आशीर्वाद प्राप्त करे। उत्तम चरित्रवाले माँ-बाप का पुत्र सुन्दर क्यों न होगा?

---

[२१]

राजा काहें तोरा मुहवा उदासल से हमसे बतावहु ना।
राजा केही सोच देह दुबराइल मुँह भइल पीअर ना॥
राजा सासु ननद कुछ कहलीं की केहू से कुछ अनबन हो ॥१॥

रानी माई बहिन ना कुछ कहलों न केहू से अनबन हो।
रानी मोगल बजाज क रुपयवा त उहवै माँगै ना ॥२॥
झमकि के रानी उठी बोलै त काहे तू उदासल हो।
अंग का गहना उतारि पेटारी काढ़ि फेंकै ना ॥३॥
राजा लइ जाहु देई देहु मोगल बजजवा रुपयवा ना।
रानी यही सोच हम तौ उदासल
कइसे तोहीं नंगी राखउँ ना ॥४॥
राजा गहना कपड़ा नाहीं साधि न एकौ मोहीं भावै हो।
राजा तोहार मुँह रही हरीअर त बिन गहनै सोभब हो ॥५॥
(बनारस)

हे राजा! तुम्हारा मुँह उदास क्यों है? मुझे बताओ न? हे राजा! कौन-सी चिंता है, जिससे तुम्हारी देह दुर्बल होगई और मुँह पीला पड़ गया है? हे राजा! सास-ननद ने कुछ कहा है? या किसीसे अनबन होगई है? ॥१॥

हे रानी! न माँ ने कुछ कहा, न बहन ने; और न किसीसे अनबन ही हुई। हे रानी! मुग़ल बजाज अपना रुपया माँगता है ॥२॥

रानी उठ खड़ी हुईं और बोलीं—तो तुम उदास क्यों हो? उसने शरीर पर से उतारकर और पेटारी से निकालकर गहने उसके सामने फेंक दिये ॥३॥

हे राजा! ले जाओ, मुग़ल बजाज को रुपया दे दो।

हे रानी! मैं तो इसी सोच से उदास था कि तुमको नंगी कैसे रक्खूँगा? ॥४॥

हे राजा ! गहने और कपड़े की मुझे साध नहीं है। तुम्हारा मुँह प्रफुल्लित रहे, तो मैं बिना गहने ही के सुन्दर लगूँगी ॥४॥

पत्नी ने अपने पति की चिंता में हिस्सा लेकर गृहस्थों के सामने बड़ा सुंदर आदर्श रक्खा है। पति-पत्नी के इसी तरह के परस्पर के सहयोग से गृहस्थी में सुख और समृद्धि की वृद्धि होती है।

---

[२२]

घोरे घोरे बैठ ननद भवज मुख घोवैहीं ॥
भवज जो जाओ नदलाल कँगनवा मै तो लै लऊंगी ॥१॥

साँझ हुई भय फाटी ओ हो ! भय फाटी।
अजी हाय पड़े नदलाल कँगनवा मै तो लै लऊँगी ॥२॥

यह तो मेरे बीर ने घड़वाया मेरे बाबल ने घड़ाया
मेरी मैया ने पिन्हाया कँगनवा कैसे दै दऊँगी ॥३॥

कचहरी बैठे ससुरे वह आँगन मैं ठाढ़े पुकारैं,
बहुवल देदो हाथो के कंगनवा धीयल परदेसन ये ॥४॥

जूआ खिलन्ते राजा आँगन में ठाढ़े।
घना दे दो हाथो के कँगनवा बहन परदेसन ये ॥५॥

कहाँ तुमने हाथों गड़ाये कहाँ मोल लिवाये।
परदेसी वीरन के कँगनवा मैं कैसे दै दऊँगी ॥६॥

ला मेरे मैले से कपड़े मैले से कपड़े।
अजुध्या मे माँगूँगा भीख कँगनवा गढ़वाय दऊँगा ॥७॥

ला मेरी सोने की सराई, मेरी सोने की सराई,
काटूँगी कँगनवा की कील फेर न बुलाऊँगी ॥८॥

(बुलन्दशहर)

पास-पास बैठकर ननद और भावज मुँह धो रही हैं। हे भावज ! तुम्हारे पुत्र होगा, तो मै कंगन ले लूँगी ॥१॥

शाम हुई। रात बीती। पौ फटी। ओहो! पौ फटी। वाह वा ! पुत्र हुआ। मैं तुम्हारा कंगन ले लूँगी ॥२॥

इसे तो मेरे भाई ने गढवाया था, पिता ने गढाया था, और माँ ने पहनाया था; मैं कंगन कैसे दे दूँगी ? ॥३॥

कचहरी में बैठे हुए ससुर आँगन में आकर खड़े होकर कहने लगे—हे बहू ! हाथ का कंगन दे दो; बेटी परदेसिन है ॥४॥

जुआ खेलते हुए राजा (पति) आँगन में आकर कहने लगे—हे बहू ! कंगन दे दो, बहन परदेसिन है ॥५॥

पत्नी ने कहा—तुम अपने हाथों से गढाये हो ? या ख़रीदकर लाये हो ? परदेश गये हुए भाई का दिया हुआ कंगन मैं कैसे दे दूँ ॥६॥

पति ने कहा—ला, मेरे मैले-कुचैले कपड़े तो ला। मैं अयोध्या में जाकर भीख माँगूँगा और कंगन गढवा दूँगा ॥७॥

बहू ने कहा—ला, मेरी सोने की सलाई तो ला ; कंगन की कील निकालूँ। मै ननद को फिर न बुलाऊँगी ॥८।

यह सोहर चमार के घर का है। चमारिनें बड़ा रस ले-लेकर इसे गाती हैं।

---

[२३]

अलबेली जच्चारानी खूब बनी।
अपने पिया कै सुहागिन खूब बनी।
जैसे रेशम कै लारछा जच्चारानी केश बनी।
जैसे चन्दन कै होरसा जच्चारानी माथ बनी।
अलबेली जच्चा०॥१॥

जैसे आम केर फाँकिया जच्चारानी नैन बनी।
अपने पिया कै दुलारी जच्चारानी खूब बनी।
मतवाली जच्चारानी खूब बनी।
जैसे सुग्गा कै ठोरवा जच्चारानी नाक बनी।
अलबेली जच्चा० ॥२॥

जैसे अनार कै दाना जच्चारानी दाँत बनी।
अपने पिया कै सोहागिन जच्चारानी खूब बनी।
जैसे अनार कै कलियाँ जच्चारानी होठ बनी।
मतवाली जच्चारानी खूब बनी।
अलबेली जच्चा० ॥३॥

जैसे केरा केर खँभिया जच्चारानी जाँघ बनी।
अपने पिया कै सुहागिन जच्चारानी खूब बनी।
जैसे केरा केर छीमिया जच्चारानी अँगुली बनी।
मतवाली जच्चारानी खूब बनी।
अलबेली जच्चा० ॥४॥

(बरेली)

अलबेली जच्चारानी खूब सुन्दर लगती हैं। अपने पति की प्यारी सुहागिन जच्चारानी बहुत सुन्दर लगती हैं। जच्चारानी के केश ऐसे सुन्दर हैं, जैसे रेशम के लच्छे। जच्चारानी का माथा ऐसा सुन्दर है, जैसे चन्दन घिसने का होरसा (गोल शकल का पत्थर, जिसपर चन्दन घिसा जाता है।) ॥१॥

जच्चारानी के नेत्र ऐसे सुन्दर हैं, जैसे आम की फाँकी। अपने पति की प्यारी, रूपगर्विता, जच्चारानी बड़ी ही सुन्दर लगती हैं। जच्चारानी की नाक ऐसी सुन्दर है, जैसे तोते की चोंच ॥२॥

जच्चारानी के दाँत ऐसे सुन्दर हैं, जैसे अनार के दाने। अपने पति की सुहागिन जच्चारानी बड़ी सुन्दर हैं। जच्चारानी के ओंठ ऐसे लाल हैं, जैसे अनार की कली। मतवाली जच्चारानी खूब अच्छी लगती हैं ॥३॥

जच्चारानी की जाँघ ऐसी है, जैसे केले का खंभा। सुहागिन जच्चारानी बड़ी सुन्दर हैं। जच्चारानी की उङ्गलियाँ ऐसी सुन्दर हैं, जैसे केले की फलियाँ। मतवाली जच्चारानी बड़ी सुन्दर हैं ॥४॥

---

[२४]

जेठ बैसाखवा क दिनवा त ग़रमी बहुत होला हो।
राजा बाहर कोठवा उठवतो दुनोही जाना रहतीन हो॥१॥

बोलिया त बोलल्रू ये घन बोलही न जानेलू हो।
घना हम जइबो पुरबी बनिजिया कैसे रहबी अकसर हो॥२॥

राजा बारी देवो चौमुख दियना त रतिया कटीत होइहें हो।
राजा रउरे मयरिया लेई सोइबों त
रतिया बिरतन्त होई हो ॥३॥

'राजा बुतीं गइलें चौमुख दियना त
रतिया पहार भइलें हो।
राजा सोई गइलीं रउरी मयरिया त
रतिया भयावनि हो ॥४॥

कोठवा ऊपर कोठरिया झरोखवा से चितईला हो।
राजा रउरे सरीखे क सीपहिया कतहूँ नाहीं देखोला हो ॥५॥
(वलिया)

जेठ-बैसाख के दिन हैं। गरमी बहुत पड़ रही है। हे राजा! बाहर कोठा छवाते तो दोनों जन सोते ॥१॥

हे धन! कहा तो तुमने ठीक, लेकिन समझ-बूझकर नहीं कहा। मैं तो व्यापार करने पूरब जाऊँगा, तब तुम अकेली कैसे रहोगी? ॥२॥

हे राजा! चारोंओर दिये जला लूँगी, रात कट जायगी। आपकी माँ के साथ सोऊँगी, रात बीत जायगी ॥३॥

हाय! चारोंओर के दिये बुझ गये। रात पहाड़ हो गई। आपकी माँ सो गई, रात भयानक लग रही है ॥४॥

कोठे पर कोठरी है। उसके झरोखे से देखती हूँ, आप-सरीखा कोई सिपाही कहीं नहीं देखती हूँ ॥५॥

इस गीत में एक विरहिणी स्त्री की मनोवेदना चित्रित है।

अन्न-प्राशन का गीत

जिस दिन बच्चे को पहले-पहल अन्न खाने को दिया जाता है, उस दिन जो उत्सव होता है, उसे अन्न-प्राशन कहते हैं। यह उत्सव अब सम्पन्न और पुरानी परिपाटी पर चलनेवाले घरों ही में मनाया जाता है; साधारण गृहस्थों मे अब इसका महत्व नहीं रह गया है। गाँवों में इस उत्सव के भी बहुत से गीत प्रचलित हैं। उनमें से एक यहाँ दिया जाता है।—

[१]

आजु मोरे लीपन पोतन, औ अन्नप्रासन हो ॥१॥
सासु अरगन नेवतहु परगन, नैहर सासुर,
औ अजियाउर औ ननियाउर रे ॥२॥
अरगन आयनि परगन, और ननिआउर
औ अजियाउर हो।
सासू एक नहिं आये बिरन भैया, कैसे जियरा बोधौं रे ॥३॥
सासु भेंटहिं आपन भैया, ननद आपन देवर हो।
सासू छतिया जे मोरी घहरानी, मैं केहि उठि भेंटौं रे ॥४॥
झमकि के चढ़ल्यूँ अंटरिया, खिरिकियन झाँक्यों हो।
ननदी जनु भैया आवैं पहुनैया, पगड़िया फहरावै रे ॥५॥
दुअराई घोड़ा हिहियाने, पथर घहराने हो।
बहुआ मिलि लेहु भैया बेदनैता,
सोहर अब सुनो सगुन पर बैठौ रे ॥६॥
(फतहपुर)

आज मेरे घर में लीपने-पोतने का काम हो रहा है। आज अन्न-प्राशन है ॥१॥

हे सासजी! अरगन-परगन (आर्यगण और प्रजागण अथवा अपने और पराये सब), नैहर, सासुर, अजियाउर और ननियाउर सबको न्यौता भेज दो ॥२॥

अरगन-परगन वाले आये, ननिआउर और अजियाउर के लोग आये। हे सास! मेरा भाई नहीं आया, मैं जी को कैसे धैर्य दूँ? ॥३॥

सासजी अपने भाई को भेंट रही हैं। ननद अपने देवर को भेंट रही है। हे सासजी! मेरी छाती मे आग धधक रही है, मैं उठकर किसे भेंटूँ? ॥४॥

मैं झमककर अटारी पर चढ़ी। खिड़की से झाँका। हे ननद! जान पड़ता है, भैया पहुनाई करने आ रहे हैं। पगड़ी फहरा रही है ॥५॥

दरवाज़े पर घोड़ा हिनहिनाया; मानो पत्थर थहराया। हे बहू! अब अपने वेदनावाले भाई को मिल लो, सोहर सुनो और सगुन पर बैठो ॥६॥

इस गीत की पहली ही कड़ी में अन्न-प्राशन की चर्चा है; नहीं तो यह गीत प्रायः प्रत्येक उत्सव में, जिसमें सगे-संबंधी न्यौते जाते हैं, गाया जा सकता है। इसमें भाई के लिये बहन के हृदय की वेदना का बड़ा मार्मिक वर्णन है।

मुण्डन के गीत

जन्म के तीसरे, पाँचवें या सातवें वर्ष में पहले-पहल जब बच्चे के सिर के बाल उतारे जाते हैं, उसे मुण्डन कहते हैं। हिन्दू-समाज के सोलह संस्कारों में यह एक संस्कार है।

पहले ज्योतिषी से मुण्डन का दिन और समय नियत किया जाता है। फिर नियत दिन पर देव-पूजन, हवन और ब्राह्मणों और मित्रों को भोजन कराया जाता है और ब्राह्मणों को दक्षिणा दी जाती है।

मुण्डन हो जाने के बाद बच्चों की बहन को, और अगर बहन न हुई तो उसकी फूफी को, जो बाल बटोरती है, तथा मुण्डन करनेवाले नाई को नेग चुकाये जाते हैं और उन्हें ख़ुश किया जाता है। बहन को नेग में नक़द रुपये, बरतन या गाय या बछिया-बछड़े दिये जाते हैं। नाई को नक़द रुपये-पैसे, कोई एक बरतन या कपड़े दिये जाते हैं। नेग गृहस्थ के घर की माली हालत पर निर्भर है। ग़रीब गृहस्थ के घर में कुछ पैसों ही से बच्चे की बहन और नाई को संतोष करना पड़ता है।

घर की स्त्रियाँ टोले-महल्ले की स्त्रियों को जमाकर, सब के साथ गा-बजाकर मुण्डन-संस्कार को एक सुखमय उत्सव का रूप दे देती हैं। इस प्रसंग के बहुत-से गीत उनमें प्रचलित हैं, जिनमें निकट सम्बन्धियों के परस्पर के प्रेम-भाव और मुण्डन की क्रियाओं का भी वर्णन होता है।

यहाँ मुण्डन के अवसर पर गाया जानेवाले कुछ गीत दिये जाते हैं :—

[१]

सभवहिं बैठे सिर साहब, बोलैं जच्चारानी रे।
साहेब मोरे नैहर लोचना पठावो,
पियरिया भैया भेजैं, होरिलवा के मूँड़न ॥१॥

तोहरा नैहरवा धन दूरि बसै, कोसवन को गनै हो।
रानी, घर ही में रँगहु पियरिया, चौक पर बैठहु,
होरिलवा के मूँड़न रे ॥२॥

तोहर पियरिया राजा नित के, निति उठि पहिरब हो।
राजा, हमरे भैया के पियरिया सगुन के,
चउक पर बैठब हो, होरिलवाँ के मूँड़न हो ॥३॥

हँकरहु नगर के नौवा बेगहिं चलि आवहु रे।
नौवा रगि रगि पीसहु हरदिया, रोचन पहुँचावहु,
होरिलवा के मूँड़न रे ॥४॥

सभवहिं बैठे हैं बीरन भैया, नौवा से पूँछइँ रे।
नावा केकरे भयन नन्दलाल, रोचन कहाँ पायो हो ॥५॥

बड़हर कै हम नौवा, सुजन घरवाँ आये हो।
तोहरी बहिनी के भये नन्दलाल,
लोचन लैके आये हो ॥६॥

हरखि के उठेनि बीरन भैया, धन जी से पूँछैं हो।
रानी, बहिनी के भये नन्दलाल, लोचन हमको आवा हो,
पियरिया लैके जावै रे ॥७॥

येहि पेटरवा के कुंजिया ना जानो कहाँ गिरि गई हो।

राजा नाहीं रे बजजवा यहि गाँव,
पियरिया कहाँ पौव्यो रे ॥८॥
बेंचबै मैं ढाली तरवरिया, अरे फाँड़े कै कटरिया रे।
रानी, सौ साठि पियरी रँगौबे, चौक पर पहुँचब हो ॥९॥

घर के मालिक सभा मे बैठे हैं। जच्चारानी ने उनसे कहा—हे स्वामी! मेरे नैहर को रोचन भेजो, ताकि मेरे भैया पियरी (पीली धोती) भेजें। बच्चे का मुंडन है ॥१॥

हे धन! तुम्हारा नैहर बड़ी दूर है। कितने कोस है? कौन गिनती करे। हे रानी! घर ही मे पियरी रँग डालो, और उसे पहनकर चौक पर बैठो। बच्चे का मुंडन है ॥२॥

हे राजा! तुम्हारी दी हुई पियरी तो हमेशा की है। सदा उठकर पहनूँगी। हे राजा! मेरे भैया की सगुन की पियरी है। उसी को पहनक ढूँगी। बच्चे का मुंडन है ॥३॥

नगर के नाई को बुलाओ। जल्दी आये। हे नाई! खूब घिस-घिसकर हल्दी पीसो और रोचन ले जाओ। बच्चे का मुंडन है ॥४॥

भैया सभा में बैठे है। नाई से पूछते हैं—हे नाई! किसके पुत्र हुआ है? रोचन कहाँ पाया? ॥५॥'

मैं बडहर (गाँव का नाम) का नाई हूँ। आप सज्जन के घर आया हूँ। आपकी बहन के पुत्र हुआ है। उसी का रोचन लेकर आया हूँ ॥६॥

भैया प्रसन्न होकर उठे। उन्होंने अपनी स्त्री से पूछा—हे रानी! बहन के पुत्र हुआ है। रोचन आया है। मैं पियरी लेकर जाऊँगा ॥७॥

स्त्री ने कहा—पेटारे की कुंजी तो न जाने कहाँ गिर गई। हे राजा! इस गाँव में बजाज भी तो नहीं है, पियरी कहाँ पाओगे? ॥८॥

मैं ढाल-तलवार बेच दूँगा, कमर की कटारी बेंच दूँगा। हे रानी! सैकड़ों पियरियाँ रँगाकर और लेकर चौक पर पहुँचूँगा ॥९॥

इस गीत में भाई और बहन के प्रेम का सरस वर्णन है। साथ ही स्त्री-स्वभाव की भी झलक है। भाई की स्त्री की इच्छा नहीं थी कि उसकी ननद को पियरी भेजी जाय।

यह गीत उस ज़माने का है, जब हमारे घरों में ढाल-तलवार और कमर की कटारी थी।

---

[२]

ना बाबा बजना बजायो न सुजना बुलायो।
बड़ेरे कलप कै लफरिया तौ चोरिया मुँड़ायो ॥ १ ॥

हम नाती बजना बजैबे, और सुजना बुलैबे।
बड़ेरे कलप कै लफरिया, मै हरषि मुड़ैबे ॥ २ ॥

सोने के खड़ौवाँ भैया साहेब, बहिनि बहिनि करैं।
कहाँ गइउ बहिनि, हमारि, तौ लोइया बटोरैं ॥ ३ ॥

भितराँ से निकरीं है बहिनि तौ हाथ भरि लोइया लिहे।
देव भैया नेग हमार, तौ लोइया बटोरउँ ॥ ४ ॥

देबै गले कै तिलरिया दूनौ काने बिरिया।
देबै बहिनी सोरहौ सिँगार, बिहँसि घर जायो ॥ ५ ॥

(प्रतापगढ़)

हे बाबा ! न तुमने बाजा बजवाया, न सुजनों (भले आदमियों) को बुलाया। बड़े लटों की लफरी (लट) को चुपके-से मुँड़ाया ॥ १ ॥

हे नाती ! हम बाजा बजवायेंगे, सुजनों को बुलायेंगे, बड़ी लटों को बड़े हर्ष से मुँड़वायेंगे ॥ २ ॥

भाई सोने के खड़ाऊँ पर चढ़कर बहन, बहन पुकार रहा है। हे मेरी बहन ! कहाँ हो ? लटें बटोरो ॥ ३ ॥

बहन भीतर से निकली। हाथों में भरकर लटें लिये है। हे भाई ! मेरा नेग दो तो लटें बटोरूँ ॥ ४ ॥

भाई ने कहा—मैं तुम्हारे गले के लिये तिलरी और कानों के लिये बिरिया (कान का एक गहना) दूँगा। हे बहन ! मैं सोलहो शृङ्गार का सामान दूँगा, तुम प्रसन्न होकर घर जाना ॥ ५ ॥

---

[३]

हाथी चढ़ो बाबा हाथी चढ़ो, बाबा कवन रामा हो।
तुमरे नतिया कै लगन समीप, तौ लफरी मुँड़ाओ हो ॥१॥

हाथी चढ़ो दादा हो हाथी चढ़ो, दादा कवन रामा हो।
तुमरे दुलरू कै लगन समीप, तौ लफरी मुँड़ावउ हो ॥ २ ॥

नौआ गा हइ काशी, तौ बाँभनु बनारस हो।
मोरी धिया गई है ससुरारि, तौ कैसे मुँड़ावउँ हो ॥ ३ ॥

असी कोस कै ननदिया बधोवा लैकै आईं हो।
मोरी भौजी ने हना है केवँड़िया, इहाँ कहाँ आइउ हो ॥४॥

-की भौजी होब जागिनि, की होब भाँटिनि हो।

की होब जंगल पतुरिया, दुवारे तुम्हरे नाचौं हो ॥ ५ ॥
नाहीं ननदी मोर जागिनि, नाहीं होब भौंटिनि हो ।
ननदा, बड़े रे छ्यल कै बहिनियाँ, आदर बिन आइउ हो ॥६॥
(इटावा)

हे बाबा ! हाथी पर चढ़ो, हाथी पर चढो; तुम्हारे नाती के मुण्डन की साइत समीप है, मुण्डन करा दो ॥ १ ॥

हे दादा ! हाथी पर चढ़ो, हाथी पर चढ़ो; तुम्हारे दुलारे की साइत समीप है, मुण्डन करा दो ॥ २ ॥

नाई तो काशी गया है, पंडित बनारस गये हैं, मेरी बेटी ससुराल गई है, मुण्डन कैसे कराऊँ ? ॥ ३ ॥

अस्सी कोस पर ब्याही हुई ननद बधावा लेकर आई है । भावज ने केवाड़े बन्द कर लिये और कहा—यहाँ कहाँ आई हो ? ॥ ४ ॥

ननद ने कहा—अब या तो मैं जागिन होकर या भौंटिन या जंगल की पतुरिया (नाचनेवाली) होकर तुम्हारे द्वार पर नाचूँगी ॥ ५ ॥

भावज ने कहा—हे मेरी ननद ! न जागिन हो, न भौंटिन हो । हे ननद ! तुम बड़े छैला (उसके पति) की बहन हो, बिना सूचना दिये आई हो ॥ ६ ॥

ननद ने अपने भाई की सामाजिक मान-मर्यादा का ध्यान नहीं रक्खा और वह बिना सूचना दिये आगई, इससे उसका उचित स्वागत-सत्कार नहीं हो सका । इससे गाँव में ननद के भाई की हँसी हुई होगी । स्त्रियों को अपने कुटुम्ब की इज़्ज़त का कितना ध्यान रहता है !

जनेऊ के गीत

यज्ञोपवीत को जनेऊ कहते है। यज्ञोपवीत एक संस्कार है, जिसे व्रत-बंध भी कहते हैं। ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य यज्ञोपवीत पहनने के अधिकारी माने गए हैं। पर ज़्यादातर ब्राह्मणों और क्षत्रियों ही मे इसका प्रचार शेष रह गया है।

यज्ञोपवीत-संस्कार बच्चों की ८ वर्ष की आयु से लेकर १५ वर्ष की आयु तक कर दिया जाता है। किसी कारण-वश जिनका नहीं हुआ रहता, उनका विवाह के पहले कर दिया जाता है।

जन्म और विवाह के बीच का यह सबसे बड़ा उत्सव है। इस प्रसंग के बड़े रोचक गीत स्त्री-समाज मे प्रचलित हैं। उनमें से नमूने के तौर पर कुछ यहाँ दिये जाते हैं :—

[१]

ऐ कनउजवा के ब्राह्मन हमरेहूँ आएहु।
पोथिया पतरवा लैके आएहु हमरे बरत-बन्ध ॥१॥
कैसे क तोहरे आइब घरवा नहिं चीन्हौ,
नाम न जानौ ॥२॥
आँगन मोरे माँड़व ओसरवाँ मोरे कोहबर।
हरदीक घेवरल कवन लाल कवन लाल द्वारे आएहु ॥३॥
ऐ जवने बन सीकिया न डोलै भवँरा न गुञ्जरइ।
ऐ तवने बन पैठत कवन राम परास डण्डा तोरैं ॥४॥
ऐ काहे की टाँगिया तुहुँ कटबेउ केथुआ सिहुरबेउ।
ऐ केकरे मण्डप बोठँघउबेउ केकर बरत-बन्ध ॥५॥

ऐ सोनवाँ की टँगिया हम कटवई रुपवा सिहुरवई।
राजा दसरथ मण्डप वोठँधउवै राजा रामचन्द्र क,
वरत-बन्ध ॥६॥

(फतहगढ़)

हे कन्नौज के ब्राह्मण ! हमारे यहाँ भी आना। पोथी-पत्रा लेकर आना। हमारे यहाँ व्रतबन्ध-संस्कार है ॥१॥

मैं तुम्हारे यहाँ कैसे आऊँगा ? मैं घर तो पहचानता ही नहीं, और नाम भी नहीं जानता ॥२॥

मेरे आँगन में माँड़ो छाया है। ओसारे में कोहबर है। हल्दी लपेटे हुए अमुक लाल (बालक का नाम) खड़े होंगे। अमुक लाल (पिता का नाम) के द्वार पर आना ॥३॥

जिस बन में सींक नहीं डोलती, भौंरा भी गुञ्जार नहीं करता, उस सघन बन में अमुक राम (पिता का नाम) पैठकर ढाक का डंडा तोड़ रहे हैं ॥४॥

किस चीज़ की बनी हुई कुल्हाड़ी से डंडे को काटोगे ? किससे छीलोगे ? किसके मंडप में सीधा खड़ा करोगे ? और किसका व्रत बन्ध है ॥५॥

सोने की कुल्हाड़ी से काटूँगा। रूपे की कुल्हाड़ी से छीलूँगा। राजा दशरथ के मंडप में उसे खड़ा करूँगा। राजा रामचन्द्र का व्रत-बन्ध है ॥६॥

[२]

बँसवन धोतिया सुखत होइहैं बरुवा जेंवत होइहैं
बेद उठे कवने रामा अँगना ॥१॥

अंगना ढोल घमाकै पंडित वेद बाँचैं वेद उठै झनकार
मोरे आजा के अँगना ॥२॥

बाँसन धोतिया सुखत होइहैं बरुवा जेंवत होइहैं
बेद उठे झनकार कवाने रामा अँगना ॥३॥

अँगना ढोल घमाकै पंडित बेद बाँचै बेद उठै
झनकार मोरे दादा के अँगना ॥४॥

बाँसन धोतिया सुखत होइहैं बरुवा जेवत होइहैं
बेद उठे झनकार कवाने रामा अँगना ॥५॥

अँगना ढोल घमाकै पंडित बेद बाँचै वेद उठै झनकार
मोरे काका के अँगना ॥६॥

(हमीरपुर)

बाँस पर धोती सूखती होगी, ब्रह्मचारी भोजन कर रहे होंगे, किस के आँगन में वेदध्वनि हो रही होगी ? ॥१॥

आँगन में ढोल बज रहा है। पंडित वेद बाँच रहे हैं। वेद-ध्वनि से मेरे आजा (पितामह) का आँगन गूँज रहा है ॥२॥

इसी तरह दादा और काका आदि के नाम ले-लेकर गीत गाया जाता है।

इस गीत में देहात के ब्राह्मण के घर का वास्तविक चित्र खींचा गया है।

[३]

चैतहिं बरुआ तेज चले, बइसाख मे पहुँचेन हो ॥१॥
मैं तोहसे पूँछहुँ ए बरुआ, तुहुँ जावेउ कवने घर हो ॥२॥
जावेउँ जावेउँ मैं वोही घराँ, जहाँ दाता बसै सब लोग ॥३॥
जो मैं जनतेउँ ए बरुआ, हमरे घर अउबेउ हो ॥४॥
बलुहर खेत जोतवतेउँ, घन मोतिया बोअवतेउँ हो ॥५॥
मोतियन थार भरवतेउँ, भिखिया उठि देतेउँ हो ॥६॥

(जौनपुर)

बरुआ (ब्रह्मचारी) चैत में चलकर बैसाख मे पहुँचे ॥१॥

हे बरुआ ! मैं तुमसे पूछता हूँ कि तुम किस घर को जाओगे ? ॥२॥

मैं उस घर को जाऊँगा, जहाँ के सब लोग दाता हों ॥३॥

हे बरुआ ! यदि मैं जानता कि तुम मेरे घर आओगे ॥४॥

मैं बलुआ खेत जोतवा कर उसमें घनी मोती बोवा देता और मोतियों से थाल भरकर तुमको उठकर भीख देता ।

प्राचीन काल में ब्रह्मचारियों को भिक्षा देना एक गृह-धर्म समझा जाता था । गृहस्थों मे ब्रह्मचारियों को भिक्षा देने की कैसी उत्सुकता रहती थी, इस गीत मे उसका आभास मिलता है ।

---

[४]

सभवाँ बइसल तोहे बाबा अमुक बाबा
करि घालू हमर जनेव।
बिना रे जनेउआ बाबा न सोभे कान्हा
नहिं रउरो जतिया के जोग ॥१॥
जाँघ नहिं जोड़ थ भइया रे अमुक भइया,
जिनि भइया दाहिन बाँह।
खाली जनेउआ बरुआ न सोभे कान्हा,
न होयब जतिया के जोग ॥२॥
नित उठि अरे बाबू गंगा नहायब,
सुरुज अरघ हम देब हे।
साँझ सबेरे बाबू गायत्री सुमिरब
तब होयब जतिया के जोग हे।
जाँघ भला जोड़िहैं भइया अमुक भइया,
जिन भइया दाहिन बाँह ॥३॥

(बलिया)

सभा मे बैठे हुये हे बाबा (बाप का नाम)! मेरा जनेऊ कर डालो। हे बाबा! जनेऊ बिना कन्धा सुन्दर नहीं लगता और न मैं आपकी जाति-पाँति में बैठ सकता हूँ ॥१॥

मेरे भाई (भाई का नाम), जो मेरी दाहिनी भुजा हैं, (भोजन के समय) जाँघ नहीं जोड़ते। जनेऊ बिना ब्रह्मचारी सुन्दर नहीं लगता, और न स्वजाति मे बैठने योग्य होता है ॥२॥

हे बाबू! नित्य उठकर गंगा नहाऊँगा, रोज़ सूर्य को अर्घ्य दूँगा

और प्रातःकाल और संध्या को गायत्री का जप करूँगा, तब जाति के योग्य होऊँगा। तब भाई (नाम लेकर) जाँघ जोड़ेंगे, जो मेरी दाहिनी भुजा हैं ॥३॥

इस गीत में जनेऊ के लिये बालक की स्वाभाविक उत्सुकता प्रकट की गई है।

[५]

काहे को हरुला काहे की है माछ।
सोने को हरुला, रूपे की है माछ।
राम लछमन दोनो जोतै खेत ॥ १ ॥

काहे की डलिया काहे की है ढाँक।
राइयो रुक्मिन बीज लै जायँ।
राम लछमन दोनों बोवैं कपास ॥ २ ॥

एक पत्ता, दो पत्ता, तीसरे कपास।
काहे की चरखी, काहे की है डंडी।
चन्दन चरखी, सोने की है डंडी।
राइयो रुक्मिन ओटैं कपास ॥ ३ ॥

काहे की धुनइयाँ काहे की है ताँत।
सोने की धुनइयाँ रेसम की है ताँत।
राइयो रुक्मिन धुनैं कपास ॥ ४ ॥

काहे को रँहटा, काहे की है माल।
चन्दन रँहटा, रेसम की है माल।
राइयो रुक्मिन, कातै सूत ॥ ५ ॥

एक तगा, दो तगा, तीसरे जनेऊ।
तीन तगा, चार तगा, पाँचवे जनेऊ।
पाँच तगा, छः तगा, साँतवे जनेऊ।
सात तगा, आठ ताग, नौवे जनेऊ॥ ६॥

पहिलो जनेऊ गनेसजी को देव।
दूसरो जनेऊ ब्रह्माजी को देव।
तीसरो जनेऊ महादेवजी को देव।
चौथो जनेऊ विष्णुजी को देव।
पाँचवें जनेऊ सब देवतन देव।
छठवें जनेऊ सब पुरखन देव।
सातवें जनेऊ बरूआ को देव।
अहिर गड़रिया, बम्हन कर लेव॥ ७॥

(इटावा)

किस चीज़ का हल है ? और किस चीज़ की माछ ? सोने का हल है, रूपे की माछ। राम और लछमण दोनों खेत जोत रहे हैं॥१॥

किस चीज़ की डलिया है ? किस चीज़ का ढक्कन ? रानी रुक्मिणी बीज लेकर जा रही है। राम और लछमण दोनों कपास बो रहे हैं॥२॥

एक पत्ता निकला, दो पत्ते निकले, तीसरे पत्ते के बाद कपास तैयार हुआ। किस चीज़ की चरखी है ? किस चीज़ की डाँडी है ? चन्दन की चरखी है और सोने की डाँड़ी है। रानी रुक्मिणी कपास ओट रही हैं॥३॥

किस चीज़ का धनुष है ? किस चीज़ की ताँत ? सोने का धनुष है। रेशम की ताँत। रानी रुक्मिणी कपास धुन रही हैं ॥४॥

किस चीज़ का चरखा है ? किस चीज़ की माल है ? चंदन का चरखा है और रेशम की माल है। रानी रुक्मिणी सूत कात रही हैं ॥५॥

पहला, दूसरा, तीसरा, चौथा, पाँचवाँ, छठा और सातवाँ, जनेऊ क्रमशः गणेशजी, ब्रह्माजी, महादेवजी, विष्णुजी, देवता-गण पितर-गण और बरुआ को दो और अहीर गड़रिया को ब्राह्मण बना लो ॥७॥

इस गीत में कपास बोने से लेकर सूत बनने और सूत से फिर जनेऊ बनने तक का क्रम वर्णित है। अंत में कहा गया है कि इसी सूत के प्रभाव से अहीर गडरिये भी ब्राह्मण हो सकते हैं।

इस गीत से यह भी अभिप्राय निकलता है कि हरएक द्विज को स्वयं हल चलाना, कपास बोना, ओटना, धुनना, चरखा चलाना, सूत कातना और सूत से जनेऊ बनाना जानना चाहिये। घर-घर में चरखे की रक्षा के लिये ही तो पूर्वकाल में कहीं यह नियम नहीं बनाया गया था ?

---

[६]

गंगा किनारे बरुआ फिरैं केऊ पार उतारइ हो।
पठई दे आजा नवरिया बरुआ चढ़ि आवइ हो ॥
न मेरे नाव न नवरिया नाहीं घर केवट हो।
जेकरे जनेऊ कै साध पवँरि दइ आवइ हो ॥

गंगा किनारे बरुआ फिरैं केऊ पार उतारहु हो।
पठई दो पिताजी नवरिया बरुआ चढ़ि आवइ हो ॥

न मोरे नाव न नवरिया नाहीं घर केवट हो।
जेकरे जनेउआ क साध पवँरि दह आवइ हो ॥

गंगा किनारे बरुआ फिरै केऊ पार उतारहु हो।
पठई दे भइया राम नवरिया बरुआ चढ़ि आवइ हो।

न मोरे नाव न नेवरिया नाहीं घर केवट हो।
जेकरे जनेउआ के साध पवँरि दह आवइ हो ॥

(बनारस)

गंगा के किनारे ब्रह्मचारी फिर रहा है कि मुझे पार उतार दो। हे पितामह! नाव भेज दो तो ब्रह्मचारी उस पर चढ़कर इस पार आ जाय।

पितामह ने कहा—न मेरे नाव है, न केवट। जिसको जनेऊ की लालसा हो, वह दह तैरकर इधर आ जाय।

इसी प्रकार ब्रह्मचारी अपने पिता और भाई से भी प्रार्थना करता है और वही उत्तर पाता है जो पितामह ने दिया था।

पूर्वकाल में यज्ञोपवीत होने से पहले ब्रह्मचारी को तैरना जानना आवश्यक समझा जाता था। देश में नदी-नालों की अधिकता और पुलों की कमी से तैरना जानना शिक्षा का एक अंग माना जाता था।

नहछू

नहछू विवाह के पहले और कहीं कही पीछे भी होता है। यहाँ एक गीत दिया जाता है, जिसमे इसका वर्णन कुछ विस्तार के साथ आ गया है।—

[१]

घर घर घुमहि नउनिया तौ गोतिनी बुलावै।
राम लछुन कै नहछु सभै कोई आयो ॥१॥

पाँच पाट कै जाजिम भारि बिछाओ।
जेकरे जहाँ मनु होय तहाँ ते बैठो ॥२॥

केई दीना चुटकी मुँदरिया केई दीना रूप।
केई दीना रतन जड़ाऊ ता भरिगा है सूप ॥३॥

केकई ने चुटकी मुँदरिया कौशिल्या रानी रूप।
सुमित्रा रानी रतन जड़ाऊ तौ भरिगा है सूप ॥४॥

पातर पातर अगुली तौ नाउनि गोरि।
करत राम जीव कै नहछु तौ घूँघुट खोलि ॥५॥

नौआजे झगरै नउनिया से यह सब थोर।
राम लछुन जी कै नहछु लेबौं मैं घोड़ ॥६॥

जनि झगरौ नौआ रे जनि झगरौ यह सब थोर।
राम ब्याहि घर लौटें तौ देबो मै घोड़ ॥७॥

(एटा)

नाइन घर-घर घूम रही है, गोतिनों को बुला रही है, आज राम और लछमण का नहछू है, सब कोई आना ॥१॥

पाँच पाट का जाजिम झाड़कर बिछाया हुआ है, जिसका जहाँ मन हो, वह वहाँ बैठ जाओ ॥२॥

किसने सूप में अँगूठी की चुटकी डाली ? किसने रूप की ? और किसने रत्न-जड़े गहने की ? जिनसे सूप भर गया है ॥३॥

कैकेयी ने अँगूठी की चुटकी डाली। कौशल्या रानी ने रूप की और सुमित्रा रानी से रत्न-जड़े गहने की; जिनसे सूप भर गया है ॥४॥

गोरी नाइन की अँगुलियाँ पतली-पतली है। वह घूँघट खोल कर रामजी का नहछू कर रही है ॥५॥

नाई नाइन से झगड़ा कर रहा है कि जो तुमने पाया है, वह बहुत थोड़ा है। राम-लक्ष्मण का नहछू है , मैं घोड़ा लूँगा ॥६॥

हे नाई और नाइन ! झगड़ा न करो। यह सब थोड़ा ज़रूर है। राम विवाह करके घर लौट आयेंगे तो घोड़ा दूँगी ॥७॥

बच्चों के गीत

गाँववालों ने अपने छोटे बच्चों के लिये भी गीत बना रक्खे हैं। गोद के बच्चों के लिये लोरियाँ और खेलने-कूदनेवाले बच्चों के लिये खेल के अनगिनत गीत हैं।

जब बच्चे कुछ सयाने हो जाते हैं, और घर के आसपास की चीज़ों और जंगल के जानवरों से परिचित हो जाते हैं, तब उनके लिए कहानियाँ और गीत तैयार मिलते हैं। उन कहानियों और गीतों में मनोरञ्जन के सिवा समय की सूझ, उदारता, साहस, कष्ट सहना, दया और सच बोलने के लाभ आदि की बातें भी होती हैं, जिनका बच्चों के जीवन पर स्थायी प्रभाव पड़ता है।

बच्चों के खेल के गीतों के वाक्य छोटे-छोटे होते हैं, जिनसे उनके नन्हें-नन्हें फेफड़ों पर बोझ नहीं पड़ता और एक कड़ी एक ही साँस में पूरी हो जाती है।

बच्चों की कहानियाँ बहुत सरल होती हैं। और उनके कहने के ढंग और उनकी भाषा में कुछ ऐसा निरालापन होता है, जिससे बच्चों को उनके समझने में ज़रा भर भी बाधा नहीं पड़ती। साथ ही वे दिलचस्प इतनी होती हैं कि बच्चे अपनी दादी, नानी या घर की दूसरी बुढ़ियों या बुड्ढों को घेरकर उन्हें सुनते रहते हैं।

अक्सर रात में, सोते समय बच्चे कहानियाँ सुनना बहुत पसंद करते है। कहानियाँ सुनते-सुनते सो जाना उन्हें बहुत प्रिय लगता है।

यहाँ कुछ कहानियाँ और गीत नमूने के तौर पर दिये जाते हैं:—

[१]

किह्नी के भाइ दुइ मिह्नी, बसायेन तीन गाँव।
दुइ उजड़े फुजड़े एक बसवै न कीन ॥१॥
जौन बसवै न कीन, तौने मे बसे तीन कोंहार।
दुइ लूला लूला एक के हथवै न ॥२॥
जौने के हथवै न तौन गढ़ेसि तीन हाँड़ी।
दुइ फूटी फूटी, एक के पेंदियै न ॥३॥
जाने के पेंदियै न तौने में चुरा तीन चाउर।
दुइ कच्चा कच्चा एक चुरवै न कीन ॥४॥
जौन चुरबै न कीन, तौने क खायेनि तीन बाह्मन।
दुइ मरा मरा एक के जिअरै न ॥५॥
जौने के जिअरै न तौन खनायेसि तीन तलाव।
दुइ झूर झूर एक मे पनिऔ न ॥६॥
जौने में पनिऔ न तौने मे लोटैं तीन सियार।
दुइ बाँड़ा बाँड़ा एक के पुँछियै न ॥७॥
(सीतापुर)

किह्नी के भाई दो मिह्नी; उन्होंने तीन गाँव बसाये। दो उजड़े-उजड़े थे और एक बसा ही नहीं ॥१॥

जो बसा ही नहीं, उसमें तीन कुम्हार बसे। दो लूले-लूले थे और एक के हाथ ही न था ॥२॥

जिसके हाथ ही न थे, उसने तीन हँडियाँ गढी। दो फूटी-फूटी थीं, एक के पेंदी ही न थी ॥३॥

जिसमें पेंदी नहीं थी, उसमें तीन चावल चुरे। दो कच्चे रह गये, एक चुरा ही नहीं ॥४॥

जो चुरा ही नहीं, उसे तीन ब्राह्मणों ने खाया। दो मरे-मरे थे, एक के जी ही न था ॥५॥

जिसके जी ही न था, उसने तीन तालाब खुदवाये। दो सूखे-सूखे थे, तीसरे में पानी ही न था ॥६॥

जिसमें पानी नहीं था, उसमें तीन सियार लोटते थे। दो बाँडे थे, एक के पूँछ ही न थी ॥७॥

---

[२]

ऊपर मेह झमाझम बरसै हूँ हूँ रे सहेलरी!
ठाढ़ी गोरिया अँगना भीजै हूँ हूँ रे सहेलरी ॥

हम सखि मिलि जुलि पाक बनाइब हूँ हूँ रे सहेलरी।
गुड़िया खवाय के अपुना खावै हूँ हूँ रे सहेलरी ॥

ओहि गुड़िया कै ब्याह कराइब हूँ हूँ रे सहेलरी।
ऊपर मेह झमाझम बरसै हूँ हूँ रे सहेलरी ॥

गोटी खेलब झलुआ झूलब हूँ हूँ रे सहेलरी।
गुड़िया के लागि भूख,
गुड़िया गै कोहाय।
दूध-भात की खीर बनाओ,
गुड़िया लेव मनाय ॥

ऊपर मेह झमाझम बरसै हूँ हूँ रे सहेलरी।
गुड़िया के अब सेज सोआउब हूँ हूँ रे सहेलरी॥

(बहराइच)

अर्थ स्पष्ट है। कई लड़कियाँ मिलकर यह गीत गुड़िया खेलते वक्त गाती हैं।

---

[३]

छोटी-मोटी गइया क डूँड़ी-डूँडी सीग।
चरै चोथै जाइ गइया जमुना के तीर॥१॥

चरि चोंथि गइया रे पानी पिअइ जाइ।
बघवा भुखान घाट छेकेसि आइ॥२॥

छोड़ छोड़ बघवा रे मोर पनिघट।
हम है पियासी पानी पिअइ दे॥३॥

घर से हम आउब बछरू पिआइ।
तब तूँ हमकाँ लीहेउ खाइ॥४॥

जौ तूँ औबे गइया बछरू पिआइ।
हमका दिहे जा सखिया गवाह॥५॥

चाँद सुरुज दूनौ सखिया गवाह।
बछरू पिआइ हम आउब जरूर॥६॥

आउरे बाछा दूध पिअउ डभकोरि।
बिहनै जाब हम नैहर की ओर॥७॥

रोज त आवा मैया होंकरत चोंकरत ।
आजु काहें तोर मन घूमिल ॥८॥

आजु काहे मैया तोर ढवइल दूध ।
आजु काहें दुधवा न जोर ॥९॥

घाम घमाइल ए बेटा ढवइल दूध ।
जेठ की भुभुरिया रे मन घूमिल ॥१०॥

आजु राति बच्छा रहवै तोहरे पास ।
होत बिहान होवै बाघे क अहार ॥११॥

काहें क होबिउ मैया बाघे क अहार ।
जाबिउ न तो काउ करे बाघ ।
केकरे भरोसे हमका छोड़बिउ ॥१२॥

कैसे क छोड़ी बेटा धरम कै बात ।
चाँद सुरुज दूनौं सखिया गवाह ।
तोहँका जिअैहैं भगवान ॥१३॥

जौ तु जाबिउ मैया बाघे के पास ।
हमहुँ के लिहेउ गोहनवाँ लगाय ॥१४॥

आगे आगे बछरू कुलाँचत जाय ।
पीछे पीछे गैया विष मातलि जाय ॥१५॥

जाय के पहुँचा बाछा बाघे के पास ।
नजरि मिलाय कहेसि—मामा सलाम ॥१६॥

आउरे मामा पहिले मोहिं भच्छि लेउ ।
पीछे भच्छेउ आपनि बहीनि ॥१७॥

गैया मोरि बहिनी बछौवा मोर भैने।
निखुटुक वाछा चरो केदरी के बन में ॥१८॥

सत कै गइया धरम कै बछरू।
एक भरि गइलिन दुइ भरि अइलिन ॥१९॥

(बनारस)

छोटी-मोटी गाय, जिसकी डूँड़ी-डूँड़ी सींग; गाय जमना नदी के किनारे चरने जाया करती थी ॥१॥

चर-चौंथकर गाय पानी पीने गई। भूखा बाघ आया और उसने घाट छेंक लिया ॥२॥

गाय ने कहा—हे बाघ! मेरा पनघट छोड़ दो। पानी पीने दो। मै प्यासी हूँ ॥३॥

घर से बछड़े को दूध पिलाकर आऊँगी तब तुम मुझे खा लेना॥ ४ ॥

बाघ ने कहा—तुम बछड़े को दूध पिलाकर आओगी, लेकिन कोई साखी-गवाह दिये जाओ ॥५॥

गाय ने कहा—चाँद और सूर्य मेरे दो साखी और गवाह हैं। बछड़े को दूध पिलाकर मैं ज़रूर लौट आऊँगी ॥६॥

घर आकर गाय ने बछड़े से कहा—हे बेटा! आ, ख़ूब जी-भरकर दूध पी ले; कल मैं नैहर की तरफ़ जाऊँगी ॥७॥

बछड़े ने कहा—हे माँ! पहले तो तुम रोज हुँकरती-चुँकरती आती थी। आज तुम्हारा मन धूमिल क्यों है? ॥८॥

हे मेरी माँ! आज दूध मे ताज़ापन क्यों नहीं है? और आज दूध मे ज़ोर क्यों नहीं है? ॥९॥

गाय ने कहा—घाम से मैं घमा गई हूँ, इससे दूध फीका हो गया होगा। और जेठ की लू लगने से मन उदास हो गया है ॥१०॥

हे बेटा ! आज की रात मैं तेरे पास रहूँगी। कल तो मैं बाघ का आहार हो जाऊँगी ॥११॥

बछड़े ने कहा—हे माँ ! बाघ का आहार क्यों बनोगी ? न जाओगी, तो बाघ तुम्हारा क्या कर लेगा ? और तुम मुझे किसके भरोसे छोड़ोगी ? ॥१२॥

गाय ने कहा—हे बेटा ! धर्म की बात कैसे छोड़ूँ ? चाँद और सूर्य दोनों गवाह हैं। तुमको भगवान जिलायेंगे ॥१३॥

बछड़े ने कहा—हे माँ ! कल तुम बाघ के पास जाओगी; तो मुझे भी साथ ले चलना ॥१४॥

बछड़ा गाय के आगे-आगे कुलाँचता हुआ जा रहा है। उसके पीछे-पीछे गाय विष खाकर मतवाली हुई-सी जा रही है ॥१५॥

बाघ के पास पहुँचकर बछड़े ने बाघ से नज़र मिलाई और कहा—हे मामा ! सलाम। ॥१६॥

हे मामा ! आओ, पहले तुम मुझे खा लो, फिर अपनी बहन को खाना ॥१७॥

बाघ ने कहा—गाय मेरी बहन है, बछड़ा मेरा भान्जा है। हे बछड़ा ! तुम इस कजली-वन में बेखटके चरो ॥१८॥

सत्य की रक्षा गाय ने की और धर्म की रक्षा बछड़े ने। गाय सत्य को लेकर गई और सत्य-पालन की ख़ुशी और उसके परिणाम का सुख लेकर लौटी ॥१९॥

यह गीत बच्चों को सत्य की रक्षा और धर्म-पालन की शिक्षा

देता है। गाय ने वचन का त्याग नहीं किया। बछड़े ने माता की रक्षा के लिये बाघ को अपना शरीर अर्पण कर दिया। सत्य और धर्म के पालन से बाघ जैसे क्रूर प्राणी पर भी विजय प्राप्त हो सकती है।

इस गीत मे एक इशारा यह भी है कि मन की प्रसन्नता और उदासी का प्रभाव माता के दूध पर कैसा पड़ता है। बछड़े ने पहली ही घूँट मे ताड़ लिया कि माँ का मन स्वस्थ नहीं है।

---

[४]

एक था सुआ, वह कमाने के लिये परदेश चला।

रास्ते मे खाने-पीने का सामान तो साथ मे होना ही चाहिये।

उसे घूरे पर पड़ा हुआ एक चना मिला। वह बहुत खुश हुआ। उस चने को लेजाकर उसने चक्की में डाल दिया। उसमे से एक दाल निकल आई। एक दाल चक्की के खूँटे मे अँटक गई।

सुआ बहुत परेशान हुआ और बढई के पास गया और बोला—बढई! बढई! खूँटा चीर। खुँटवा में दालि बा। का खाँव, का पिऊँ, का लेकर परदेश जाँव?

बढई बोला—हँः; इनकी एक दाल के लिये मैं खूँटा चीरूँ?

सुआ राजा के पास गया—राजा! राजा! बढई डाँड। बढई न खूँटा चीरै। खुँटवा न दाल देय। का खावँ, का पिऊँ? का लेकर परदेश जावँ?

राजा ने कहा—हँः; इनकी एक दाल के लिये हम बढई को दंड दे?

सुआ रानी के पास गया—रानी! रानी! राजा छोड़। रजवा न बढ़ई डाँड़ै। बढ़ई न खूँटा चीरै। खुँटवा न दाल देय। का खावँ, का पिऊँ? का लेकर परदेश जावँ

रानी बोली—हूँ:; इनकी एक दाल के लिये मैं राजा को छोड़ूँ?

सुआ साँप के पास गया—साँप! साँप! रानी डन्स। रनिया न राजा छोड़ै। रजवा न बढ़ई डाँड़ै। बढ़ई न खूँटा चीरै। खुँटवा न दाल बा। का खावँ, का पिऊँ? का लेकर परदेश जावँ?

साँप बोला—हूँ:; इनकी एक दाल के लिये मैं रानी को डन्सूँ?

सुआ लाठी के पास गया—लाठी! लाठी! साँप मार। सँपवा न रानी डन्सै। रनिया न राजा छोड़ै। रजवा न बढ़ई डाँड़ै। बढ़ई न खूँटा चीरै। खुँटवा न दाल देइ। का खावँ, का पिऊँ? का लेकर परदेश जावँ?

लाठी बोली—हूँ:; इनकी एक दुल्ली के लिये मैं साँप मारने जाऊँ?

सुआ भाड़ के पास गया—भाड़! भाड़! लाठी जार। लठिया न साँप मारै। सँपवा न रानी डन्सै। रनिया न राजा छोड़ै। रजवा न बढ़ई डाँड़ै। बढ़ई न खूँटा चीरै। खुँटवा न दाल देय। का खावँ, का पिऊँ? का लेकर परदेश जावँ?

भाड़ बोला—चल उधर; इनकी एक दाल के लिये मैं अपना ईंधन जलाऊँ?

सुआ समुद्र के पास गया—समुदर! समुदर! भाड़ बुता। भड़वा न लाठी जारै। लठिया न साँप मारै। सँपवा न रानी

डन्सै। रनिया न राजा छोड़ै। रजवा न बढई डाँडै। बढ़ई न खूंटा चीरै। खुंटवा में दालि बा। का खावॅ, का पिऊँ? का लेकर परदेश जावॅ?

समुद्र ने कहा—हॅः; इनकी एक दाल लिये मैं भाड़ बुताने जाऊॅ?

सुआ हाथी के पास गया। हाथी! हाथी! समुद्र सोख, समुद्र न भाड़ बुतावै। भड़वा न लाठी जारै। लठिया न साँप मारै। सँपवा न रानी डन्सै। रनिया न राजा छोड़ै। रजवा न बढई डाँडे। बढई न खूँटा चीरै। खुँटवा न दाल देय। का खाँव का पिऊॅ? का लेकर परदेश जाॅव?

हाथी ने कहा—जा, भाग जा; नहीं तो अभी पाँव से रगड़ कर तुझे चटनी कर डालूॅगा।

सुआ चींटी के पास गया। चीटी! चींटी! सूॅड समा। हथिया न समुद्र सोखै। समुद्र न भाड़ बुतावै। भड़वा न लाठी जारै। लठिया न साॅप मारै। सॅपवा न रानी डन्सै। रनिया न राजा छोड़ै। रजवा न बढई डाँडै। बढई न खूॅटा चीरै। खुॅटवा में दाल बा। का खाॅव, का पिऔ? का लेकर परदेश जावॅ?

चींटी ने हॅसकर कहा—इनकी एक दाल के लिये मैं हाथी की सूँड़ में समाने जाऊॅ?

सुआ गौरैया के पास गया—गौरैया बहन! चींटी मार। चिंटिया न सूॅड़ समाय। हथिया न समुद्र सोखै। समुद्र न भाड़ बुतावै। भड़वा न लाठी जारै। लठिया न साॅप मारै। सॅपवा न रानी डन्सै। रनिआ न राजा छोड़ै। रजवा न बढई डाँडै। बढ़ई

न खूँटा चीरै। खुँटवा न दाल देय। का खाँव, का पिऊँ? का लेकर परदेश जाँव?

गौरैया ने कहा—कहाँ है चींटी?

गौरैया की घुड़की सुनकर चींटी डरी।

चींटी—हमको मारो वारो मत कोई।
हम सूँड़ समाउब लोई॥

हाथी—हमरे सूँड़ समाओ न कोई।
हम समुद्र सोखब लोई॥

समुद्र—हमको सोखो-ओखो मत कोई।
हम भार बुताउब लोई॥

भाड़—हमको बुताओ-उताओ मत कोई।
हम लाठी जारब लोई॥

लाठी—हमको जारो-वारो मत कोई।
हम सरप ठेठाउब लोई॥

साँप—हमको ठेठाओ-ओठाओ मत कोई।
हम रानी डन्सब लोई॥

रानी—हमको डन्सो-ओन्सो मत कोई।
हम राजा छाड़ब लोई॥

राजा—हमको छोड़ो-ओड़ो मत कोई।
हम बढ़ई डाँड़ब लोई॥

बढ़ई—हमको डाँड़ो ओंड़ो मत कोई।
हम खूँटा चीरब लोई॥

खूँटा—हमको चीरो-ऊरो मत कोई।
हम दाल देइब लोई॥

खूँटे ने दाल दे दी। सुआ अपनी राह लगा।

इस कहानी में सफलता होने तक उद्योग करते रहने की महिमा दिखाई गई है। साथ ही बच्चों को कई वस्तुओं के नामों और अनेक कामों के शब्दों का ज्ञान भी होता चलता है।

बेटे के विवाह के गीत

बेटा और बेटी, दोनों के विवाहों में प्रायः एक ही-से गीत गाये जाते हैं। थोड़े ही गीत ऐसे हैं जो बेटे ही के घर गाये जाने के उपयुक्त हैं। ज़्यादा गीत बेटी ही के घर गाये जाते हैं। वास्तव में बेटे की अपेक्षा बेटी के घर में विवाह की हलचल ज्यादा होती भी है।

हिन्दुओं के विवाह का अभिप्राय मुसलमानों की शादी और अंग्रेजों के मैरिज (Marriage) से बिलकुल भिन्न है। शादी और मैरिज के शाब्दिक अर्थ 'ख़ुशी' हैं। लेकिन विवाह का शाब्दिक अर्थ 'निर्वाह करना' है। हिन्दुओं के वर और कन्या एक दूसरे के धर्म का निर्वाह करने के लिये ही विवाह करते हैं, शारीरिक सुख-भोग ही उनको अभीष्ट नहीं होता। अतएव गीतों मे निर्वाह करने के भाव ही की पुष्टि की गई है, मनोरंजन गौण विषय माना गया है।

यहाँ कुछ गीत, जिनका संबंध मुख्यतः वर से है, दिये जाते हैं:—

[१]

केहि केरा पूत तपसिया आँगन मोरे तप करै रे।
एजी केहि केरी बेटी कुँवारि सुन्दर बर माँगै रे ॥१॥

बाप क पूत तपसिया आँगन मोरे तप करे रे।
एजी बाप की बेटी कुवाँरि सुन्दर बर माँगै रे ॥२॥

भितरा से निकसीं सासजी थार भर मोती लिहे रे।
एजी लेहु तपसी आपनि भिच्छा,
आँगन मोर छोड़उ रे ॥३॥

मोतिया तौ अपनी घरहैं धरौ अपनी सैंती धरौ,
रे सासू तुमघर कन्या कुँवारि तपस्या मोर पुरवहु रे ॥४॥

(महमूदाबाद)

किसका तपस्वी. पुत्र मेरे आँगन में तप कर रहा है ? और किसकी क्वारी कन्या सुन्दर वर चाहती है ? ॥१॥

बाप (नाम) का तपस्वी पुत्र मेरे आँगन में तप कर रहा है। और बाप (नाम) की क्वारी कन्या सुन्दर वर चाहती है ॥२॥

घर के भीतर से सास थाल भरकर मोती लिये निकलीं। सास ने कहा—हे तपस्वी ! अपनी भीख लो और मेरा आँगन छोड़ो ॥३॥

तपस्वी ने कहा—हे सासजी ! अपने मोती अपने घर रख छोड़ो। अपनी भीख बटोर रक्खो। तुम्हारे घर में जो क्वारी कन्या है, उसे देकर मेरी तपस्या सफल करो ॥४॥

इस गीत में उस ज़माने की झलक है, जब वर कन्या की खोज में घूमता फिरता था, और जिसकी कन्या को विवाह-योग्य पाता था, उससे उसके साथ अपने विवाह का प्रस्ताव करता था। आंशिक रूप में ऐसी प्रथा आजकल योरप में है। पहले यहाँ भी रही होगी। आजकल कन्या का पिता वर खोजता फिरता है।

---

[२]

मोरे पिछ्वरवाँ बाँस बसेरी कोइली लीन्ह बसेर।
छोड़उ न कोइली मोरा पिछ्वरवा जाव नंदन बन लेउ ॥१॥

मँड़वन मँड़वन घूमै दूलहे राम बाप कोइल हम लेब।
कोइली बेटे न माटी की मिलिहैं ना चढ़ि हाट बिकायँ ॥२॥
कोइली तौ होइहैं समधीजी के मँड़यें जिन घर कन्या कुवाँरि।
गलियन गलियन घूमै दुलहे राम कौन है ससुर दुवार।
सोने के कलस पर दियना जरत है वह देखो ससुर दुवार॥३॥
मॅड़वे की थूनी लागे ठाढ़ि दुलहिन देई दुलहे जो पूछत बात।
तुम्हरे दादुलिजी के सोने धौराहर हमहूँ का देव बसेर॥४॥

(मुरादाबाद)

मेरे पिछवाड़े बँसवारी है, जिसमें कोयल ने बसेरा लिया है। हे कोयल ! तुम मेरा पिछवाड़ा छोड़कर जाकर नंदनवन में बसेरा लो न ? ॥१॥

अमुक राम (वर का नाम) माँड़ौ माँड़ौ घूम रहे हैं। हे बाप ! मैं कोयल लूँगा। बेटा ! कोयल न मिट्टी की बनती है, न बाज़ार में बिकती है। कोयल तो समधीजी के माँड़ौ के नीचे मिलेगी, जिनके घर में कन्या कुमारी है ॥२॥

दूल्हाराम गली-गली में घूम रहे हैं, और पूछ रहे हैं कि ससुर-जी का द्वार कौन है ?

सोने के मुँडेर पर दिया जल रहा है, वही ससुरजी का द्वार है ॥३॥

माँड़ौ की थून से लगकर दुलहिन खड़ी है। दूल्हे ने कहा—तुम्हारे पिता के घर का धौराहर सोने का है, उसमें मुझे भी बसेरा लेने दो ॥४॥

इस गीत में दूल्हा दुलहिन स्वयं अपनी जोड़ी चुन रहे हैं।

---

[३]

कोइली जो बोलै अमवा केरा बगिया,
भौरा बोलले कचनार जी ।
बोलै दुलरइता दुलहा ससुरजी के बगिया,
हाथे गुलेल मुख पान जी ॥१॥

काहे लोभ गैलो बबुआ अमवा की बगिया,
काहे लोभ गैलो ससुरार जी ।
अमवाँ लोभे गैलूँ अम्मा अमवा की बगिया,
धनी लोभे गैलूँ ससुरार जी ॥२॥

का का खैलो बाबू अमवा की बगिया,
का का खैलो ससुरार जी ।
अमवाँ फलल खैलूँ अमवा की बगिया,
खाँड़ दूध खैलूँ ससुरार जी ॥३॥

नवईं महीना तोंहि बाबू कोखिया रखलूँ,
अवरू दस दुधवा पिलाय जी ।
दूध पानी बाबू एको न दिहले,
कैसे चिन्हल ससुरार जी ॥४॥

दूध पानी अम्मा जबे हम दीहब,
जबौ धनी लैबो लिआय जी ।
हमहूँ जे होइबों अम्मा बाबू जी सेवकिया,
धनी होइब दासी तोहार जी ॥५॥

(गोरखपुर)

कोयल आम के बाग में बोल रही है; भौंरा कचनार पर गूँज रहा है। प्यारा दूल्हा ससुर के बाग में बोल रहा है, जिसके हाथ में गुलेल है और मुँह में पान ॥१॥

हे बेटा! तुम किसके लोभ से आम के बाग में गये और किसके लोभ से ससुराल गये?

हे माँ! आम के लोभ से मैं बाग में गया और स्त्री के लोभ से ससुराल गया ॥२॥

हे बेटा! तुमने आम के बाग में क्या क्या खाया? और ससुराल में क्या-क्या खाया?

हे माँ! बाग़ में आम खाया और ससुराल में खाँड़ और दूध ॥३॥

हे बेटा! मैं ने तुमको नौ महीने कोख में रक्खा और दस महीने दूध पिलाया। न तुमने मुझे दूध ही दिया, न पानी ही। ससुराल तुमने कैसे पहचान ली? ॥४॥

हे माँ! दूध और पानी मैं तभी दे सकूँगा, जब अपनी स्त्री को लिवा लाऊँगा। हे माँ! मैं पिताजी की सेवा करूँगा और मेरी स्त्री तुम्हारी दासी होकर रहेगी ॥५॥

माँ और पुत्र के संवाद-द्वारा इस गीत में सेवा-भाव की स्वाभाविक भावना व्यक्त की गई है।

---

[४]

कनक दियट दियना बरै; दियना बरा है आकास।
आहो दूलह दूलही गज चौकी।
दूलह के चीरा सोनहूला जैसे सभा पलास कै टेसू,
अहो रँगहु न बाबुल खिचड़िया ॥१॥

ससुर मनावन वै चले बाबुल लेहु न गजवा पचास
से हाथ उठावहू न।
गज धरि राखउ गजसार में हमरे गज हैं अनेक
बाबा नाहीं भूखल हाथी हुन्द के ॥२॥
सार मनावन वै चले जीजा लेहु न तुरङ्ग पचास
आहो हाथ उठावहू भई देर से।
धरि राखउ घोड़ घोडसार में हमरे घोड़े हैं अनेक
वावू भूखे नहीं हम घोड़े जीन को ॥३॥
सासु मनावन वै चली बाबुल लेहु न मानिक मुँदरिया
से हथवा उठावहु न।
धरि राखउ होरा मोती सासु जी हीरन भरा है अमार
आहो नहीं भूखे मुँदरी माल के ॥४॥
सरहज मनावन वै चली बाबुल लेहु न हथना बिजायट
से हाथ उठावहु न।
धरि राखउ अपना बिजायट, गहनन भरी है सदूक
बीबो नाहीं बिजायट साध है ॥५॥
सारी मनावन वै चली जीजा हमरे न फुटही कउड़िया
का तोहरे भेट दे।
जीजा आपन याद देइ जाहू आहो जीजा अपने परेम
भेट देऊँ से हथवा उठावहु न ॥६॥
इतना वचन नौसे सुनलै आहो सुनहु न पवलै
से चौको बइठ जेवना से जेवलै से पान लेइ द्वारे गये ॥७॥

(पीलीभीत)

सोने की दीयटि पर दिया जल रहा है। दिया आकाश में जल रहा है। अहो! दूल्हा-दुलहिन गज-चौकी पर हैं।

दूल्हे के सिर का चीरा सुनहले रंग का है, जैसे शाम के वक्त ढाक का फूल। हे पिता! उसे खिचड़ी रङ्ग से रङ्ग दो न? ॥१॥

ससुर मनाने चले। हे बेटा! पचास हाथी लेलो और हाथ उठा लो।

हे बाबा! हाथी को हाथी-शाला में रख छोड़ो। मैं हाथी और हौदे का भूखा नहीं हूँ।

साला मनाने आये। हे जीजा! पचास घोड़े लो और हाथ उठाओ। बड़ी देर हो रही है।

हे बाबू! अपने घोड़े घोड़ेसाल में रख छोड़ो। हमारे यहाँ बहुत-से घोड़े हैं। मैं घोड़े और जीन का भूखा नहीं हूँ ॥२॥

सास मनाने आई। हे बेटा! मानिक की अँगूठी लो, और हाथ उठाओ।

हे सासजी! अपने हीरा-मोती अपने पास रख छोड़ो। हीरों का तो हमारे यहाँ अम्बार लगा है। मैं अँगूठी और धन-दौलत का भूखा नहीं हूँ ॥४॥

सरहज मनाने आई। हे बाबू! हाथ का बिजायठ लो और हाथ उठाओ।

अपने बिजायठ रख छोड़ो। गहनों से संदूक भरा है। हे बीबी! बिजायठ की मुझे साध नहीं ॥५॥

साली मनाने आई। हे जीजा! हमारे पास फूटी कौड़ी भी

नहीं है। तुमको भेंट क्या दूँ? अपनी याद छोड़ जाओ। अपने प्रेम से जो भेंट हम दें, सो लो और हाथ उठाओ ॥६॥

दुल्हे ने इतना वचन सुना। सुनने भी न पाये कि चौकी पर बैठ गये। भोजन किया और पान खाकर बाहर गये ॥७॥

इस गीत में धन के मुकाबले में प्रेम और नम्रता का महत्व दिखाया गया है।

बेटी के विवाह के गीत

बेटी का विवाह गृहस्थी की एक बड़ी शोभा है। बाप कन्या के लिये अच्छा घर और वर खोजता है; धूमधाम से बरात आती है; गृहस्थ अपनी शक्ति भर समधी और बरातियों की मेहमानी करता है; अधिक से अधिक जो कुछ वह खर्च कर सकता है, करता है और समधी को प्रसन्न करने की कोशिश करता है।

वर और कन्या की गाँठ से दो परिवारों को एक में बाँधने की यह क्रिया बड़ी सरस, बड़ी मनोरंजक और बड़ी करुण भी है। चौदह-पंद्रह वर्षों तक माता-पिता की स्नेह-भरी आँखों में पलकर कन्या जीवन भर के लिये पराई हो जाती है, क्या यह दृश्य करुण नहीं है?

कन्या एक ऐसे परिवार में जाती है, जिससे उसका परिचय किसी से नहीं होता। एक परिवार में अनेक स्वभावों के व्यक्ति होते हैं। कन्या को बिना किसीसे टकराये सब स्वभावों के बीच से चलना होता है, इससे उसके पास टक्कर से बचने की युक्तियों का होना बहुत आवश्यक होता है। उसे घर के गीतों में वैसी युक्तियाँ मिलती हैं। गीतों में पति-पत्नी, सास-पतोहू, ननद-भौजाई देवरानी-जेठानी, देवर-जेठ, अड़ोसी-पड़ोसी तथा भाई-बहन आदि के बीच प्रेम, प्रीति, कलह, विरह, सत्कार, वाद-विवाद, हास-परिहास और सहनशीलता आदि के प्रसंगों की मनोहर कल्पनाएँ करके सुन्दर परिणाम वर्णित होते हैं, जो कन्याओं के लिये बड़े लाभदायक होते हैं।

कन्या के विवाह में स्त्रियों में गीतों का ऐसा नशा चढ़ जाता है कि कभी-कभी तो वे सारी रात गा-बजाकर बिता देती हैं।

वर्तमान काल में दहेज की कुप्रथा के कारण कन्या के पिता के लिये समधी लोग कितने भयंकर होगये हैं, इसका चिन्तनीय वर्णन भी गीतों में मिलता है। बहुओं के प्रति क्रूरतम सास और ननद के दुर्व्यवहार की शिकायत गीतों में बहुत अधिक पाई जाती है। निस्सहाय बहुओं का यह हाहाकार देहात के प्रत्येक घर से सुनाई पड़ता है। आश्चर्य की बात तो यह है कि बहुयें जब सास हो जाती हैं, तब वही शिकायत ख़ुद अपना लेती हैं।

यहाँ बेटी के विवाह के कुछ गीत दिये जाते हैं। —

[१]

मेरी लाडो सोवे अटारियाँ, तले झूमर ऊपर बालियाँ ॥१॥

लाडो सोय-साय जब जागिये,
अपने दादल से बर माँगिये।
दादल एक कहा मेरा मानियो, साँवरा बर मत ढूँढ़ियो ॥२॥

पोती मत करै मन पछतावला,
तेरी दादी गोरी दादा साँवला ॥३॥

बेटी सोय-साय जब जागिये, अपने पीता से बर माँगिये।
पिता एक कहा मेरा मानियो, साँवरला बर मत ढूँढ़ियो ॥४॥

बेटी मत करै मन पछतावला,
तेरी अम्मा गोरी पिता साँवला ॥५॥

बेटी सोय-साय जब जागिये, अपने भाई से बर माँगिये।
भैया एक कहा मेरा मानियो, साँवरला बर मत ढूँढियो ॥६॥

बहन मत करै मन पछतावला,

तेरी भाभी गोरी भैया साँवला ॥७॥

(मुजफ्फरनगर)

मेरी लाड़ली बेटी अटारी पर सोती है। उसके कान में नीचे झूमर लटक रही है, ऊपर बालियाँ हैं ॥१॥

सो-साकर बेटी जगी, तब उसने अपने दादा से वर माँगा। हे दादा! मेरा एक कहना मानना कि साँवला वर न ढूँढ़ना ॥२॥

हे बेटी! मन में पछता न; तेरी दादी गोरी है और दादा साँवला ॥३॥

बेटी सो-साकर जब जगी, तब उसने अपने पिता से वर माँगा। हे पिता! मेरा एक कहना मानना कि साँवला वर न ढूँढ़ना ॥४॥

हे बेटी! मन में पछता न; तेरी माँ गोरी है और पिता साँवला ॥५॥

बेटी सो-साकर जब जगी, तब उसने अपने भाई से वर माँगा। हे भाई! मेरा एक कहना मानना; मेरे लिये साँवला वर न ढूँढ़ना ॥६॥

हे बहन! मन में पछता न; तेरी भावज गोरी है और भैया साँवला ॥७॥

सारा खान्दान ही साँवला था, तब बेटी के साथ सहानुभूति तो किसकी होती? पर इस गीत से कन्या के मन की थाह तो मिल ही जाती है कि कन्या गोरे रंग के वर को विशेष पसन्द करती है।

[२]

पाँच पंडा बोल बाबुल उन घर कन्या न औतरैं।
एक निर्धनि ह जिन देउ बाबुल, रहन देउ कुवाँरी।
निघनो जब तड़प बोलै अनुख मेरे जिय को सहै॥१॥

एक हरजोतिया जिन देउ बाबुल रहन देउ कुवाँरी।
हरजोतिया हर जोत आवै, माँगे नौ दस रोटियाँ।
भरके कठौता छांछ माँगे अनुख मेरे जिय को सहै॥२॥

एक जुआरिहि जिन देउ बाबुल, रहन देउ कुवाँरी।
इन्न हारे द्रव्य हारे कबहूँ की बेरा हमे हारे,
लाज तुम्हे आय है॥३॥

एक पढ़े पंडित देउ बाबुल जासें महा सुख पायहैं।
हाथ घोती बगल पोथी
देखि सब जग सीस नवाय है॥४॥

(इटावा)

हे बाबा ! पाँच पांडवों या पंडों को सुमिरो। उनके घर कन्या नहीं पैदा होती।

हे बाबा ! धनहीन को कन्या न देना; बल्कि क्वाँरी रहने देना। धनहीन जब तड़पकर बोलेगा तब झुँझलाहट कौन सहेगा? ॥१॥

हल जोतनेवाले को भी कन्या न देना; बल्कि कुमारी रहने देना। वह हल जोतकर आयेगा नौ-दस रोटियाँ माँगेगा। कठौता भरकर मट्ठा माँगेगा। झुंझलाहट कौन सहेगा? ॥२॥

जुआरी को भी कन्या न देना; चाहें कुमारी रहने देना। लाज-

शरम हारेगा, धन-दौलत हारेगा, कभी मुझे भी हार देगा, तुमको लज्जा आयेगी ॥३॥

अच्छे पढ़े-लिखे पंडित को देना; जिससे खूब सुख पाऊँगी। जिसके हाथ में धोती और बगल में पोथी होगी, सारा संसार उसे देखकर सिर झुकायेगा ॥४॥

कन्या की इच्छा कितनी सुंदर है!

---

[३]

लाड़ो को अम्मा अरज करे हो मेरा लायक सा,
समधी ढूँडियो, कुलकी मेरी समधिन ढूँडियो।
चन्द्र-बदन से लड़का ढूँडो मेरे कान्हा की उन्हार ॥१॥
जो तुम ढूँडो भोंडी सूरत के बुरैली सूरत के,
मरूँगी जहर विष खाय।
मरूँगी आख धतूरा खाय तोरी सेजो न दूँगी पैर ॥२॥
(मेरठ)

दुलारी बेटी की माँ उसके पिता से विनती करती है कि योग्य समधी ढूँढ़ना। कुलवन्ती समधिन ढूँढ़ना। चंद्रमा के समान मुँह वाला वर ढूँढ़ना, जैसा मेरा कान्ह (कृष्ण या पुत्र) है ॥१॥

यदि तुम भोंडी सूरत-शकल का, भद्दे रूप-रंग का वर ढूँढ़ोगे तो मैं विष खाकर, मदार और धतूरा खाकर मर जाऊँगी और तुम्हारी सेज पर कभी पैर न रक्खूँगी ॥२॥

माता को भी कन्या के वर के बारे में कितनी चिंता रहती है, इस गीत में यह दिखाया गया है। सेज पर पैर न रखने की सज़ा साधारण नहीं है।

[४]

पुरुष पछौहाँ मोरे बाबा कै बखरिया
पड़गै इमलिया कै छाँह।
तेही तर मोरे बाबा सोनवाँ सॅकलपै,
गढ़ै लागे सूघर सोनार ॥१॥
गढ़ौ सोनरा अगन गढ़ सोनरा कगन
टीका गढ़ौ भरि माथ रे।
इतना पहिरि बेटो चौक जो बैठी बेटो कै, मन दलगीर॥२॥
को तेरो बेटो रे दान दहेज थोर,
की रे सूघर वर छोट।
की तेरो बेटो सोना खराब भए,
काहे तेरो मन दलगीर ॥३॥
नाहीं मोर बाबा रे दान दहेज थोर,
नाही सूघर वर छोट।
सुनत हौं मोर बाबा सास दारुनिया,
एही से मन दलगीर ॥४॥
चार दिना बेटी राजा कै रजई चार दिना फौजदारि।
चार दिना बेटी सास है दारुन आखिर राज तुम्हार ॥५॥

(रायबरेली)

मेरे बाबा की बखरी का पिछवाड़ा पूरब ओर है; उस पर इमली की छाया पड़ गई है। उसी के नीचे मेरे बाबा सोना दे रहे हैं। चतुर सुनार गहने गढने लगे ॥१॥

हे सुनार ! कंगन गढ़ो, और कन्या के पूरे माथ पर बैठनेवाला टीका गढ़ो । इतना पहनकर बेटी चौक पर बैठीं । लेकिन बेटी का मन उदास है ॥२॥

हे बेटी ! दान-दहेज थोड़ा है ? या सुन्दर वर छोटा है ? या गहने का सोना खोटा है ? तुम्हारा मन उदास क्यों है ? ॥३॥

हे बाबा ! न दान-दहेज कम है, न सुंदर वर ही छोटा है । सुनती हूँ कि सास बड़ी कर्कशा है । इसी से मन उदास है ॥४॥

हे बेटी ! राजा का राज चार दिन का है, चार ही दिन कर्कशा सास हैं, फिर तो तुम्हारा ही राज है ॥५॥

अभिप्राय यह कि कुटुम्ब के अंदर का सुख-दुःख धैर्य के साथ सहते रहकर गृह-स्वामिनी बनने की तैयारी में रहो ।

[५]

सोवत रहिउँ मैया के कोरवाँ निदिया उचटि गई मोरि ।
केकरे दुआरे मैया बाजन बाजै, केकरे रचा है बियाह ॥१॥
तुहीं बेटी आउरि तुहीं बेटी बाउरि, तुहीं बेटी चतुर सयानि ।
तुमरे दुआरे बेटी बाजन बाजै तुमरै रचो है बियाह ॥२॥
नाहीं सिखेन मैया गुन अवगुनवा
नाहीं सिखेन राम रसोंय ॥
सासु ननदिं मोर मैया गरियावै, मोरे बूते सहि नहिं जाय॥३॥
सिखि लेव बेटी गुन अवगुनवाँ सिखि लेव राम रसोय ॥
सासु ननद तोरि मैया गरियावैं लै लिहौ अँचरा पसारि ॥४॥

(मिर्जापुर)

मैं माँ की गोद में सो रही थी कि मेरी नींद उचट गई। हे माँ! किसके दरवाज़े पर बाजा बज रहा है? किसका विवाह होने वाला है? ॥१॥

हे बेटी! तू बावली की तरह पूछ रही है। तू तो बड़ी चतुर और सयानी है। तुम्हारे ही दरवाज़े पर बाजा बज रहा है और तुम्हारा ही विवाह होने वाला है ॥२॥

हे माँ! मैंने न कोई गुन सीखा, न अवगुन; सास और ननद मेरी माँ को गालियाँ देंगी, तब मुझसे तो नहीं सहा जाएगा ॥३॥

हे बेटी! गुन सीख लो और अवगुन की पहचान भी कर लो; रसोई बनाना भी सीख लो। यदि सास और ननद तुम्हारी माँ को गालियाँ दें, तो आँचल फैलाकर ले लेना ॥४॥

माँ और बेटी का कैसा सुन्दर संवाद है। माँ ने बेटी को ज उपदेश दिया है, वह एक अपरिचित परिवार में जाकर रहनेवाल कन्या के लिये सबसे बड़ा मित्र है।

---

[६]

लील लील घोड़वा कुँवर असवरवा रे,
कुरखेते उठ गइली धूर रे।
चन्द्र झरोखवन ठाढ़ी रे माता नीहारेली,
धीया दस आवर होय रे ॥१॥

हथिया त आवेले अनती से गनती र,
घोड़वा जे आये सौ साठि।
मारे बरतिया के कसमस रहीवो न सूझै,
पावन खेह उधीराय रे ॥२॥

होत विहान परल सोरो सेनुर,
नव लाख दाहेज थोर रे।
भीतरी कै गेडुंवा बहर दै मरली,
सतरू के धीया जनी होइ हो ॥३॥

समधी जे बइठैले लाली पलँगिया हो,
आप प्रभु सथरी विछाइ रे।
समधी जे छाँटै लै लमा लमी बतीया रे,
आप प्रभु सीर नवाइ रे ॥४॥

ई धीअवा मोरी अयेग्नी बयेरनी,
ई धीया, सत्रु हमारि रे।
ई धीअवा मोर नग्र लुटावली,
अवरो हरली मोर गेयान रे ॥५॥

(गाज़ीपुर)

कुँवर (वर) नीले घोड़े पर असवार है। घोड़े की टापों से ऐसी धूल उड़ी, जैसी कुरुक्षेत्र में उड़ी थी। माता चन्द्राकार झरोखे पर खड़ी होकर देख रही है। वह प्रसन्न होकर कहती है कि और भी दस कन्यायें हों ॥१॥

हाथी तो अनगिनती आये। साठ सौ घोड़े आये। बरातियों की कसमस से राह नहीं दिखाई पड़ रही है। उनके पैरों से बहुत धूल उठ रही है ॥२॥

सवेरा होते-होते कन्या की माँग में सिन्दूर पड़ा, तब नौ लाख दहेज भी कम समझा गया। माता ने भीतर का लोटा भी बाहर पटक दिया और कहा—शत्रु के भी कन्या न हो ॥३॥

समधी लाल पलँग पर बैठे हैं। मेरे प्रभु (कन्या के पिता) चटाई बिछाकर बैठे हैं। समधी लम्बी-लम्बी बातें छाँट रहे हैं, मेरे प्रभु सिर नवाये बैठे हैं ॥४॥

यह कन्या मेरी बैरिन है। इसने मेरा नगर लुटवा लिया और मेरी सुध-बुध भी हर ली ॥५॥

विवाह की धूम-धाम और दहेज की कुप्रथा से कन्या की माता के हृदय में जो उतार-चढ़ाव होता है, इस गीत में उसका सच्चा चित्र खींचा गया है।

---

[७]

कहँवै के गढ़ थवई रचि कोठा उठाव रचि महला उठाव।
कहँवै के पतिसहवा गढ़ देखन आय ॥१॥

कन्या नगर गढ़ थवई रचि महल उठा रचि कोठा उठाव।
नौसा नगर पतिसहवा गढ़ देखन आय ॥२॥

बाहर से गढ़ चितवै जैसे कनक ढरै जैसे मनिक वरै।
भीतर से गढ़ चितवै जैसे चित्र उरेह ॥३॥

पहिरिन समधि सिंह धोतिया कांधे सोने के जनेव।
करिना समधिया से मिलना सिर माथ नवाय ॥४॥

राजा नवै बाबू नवै हम कबहीं न नैया।
यक बिटिया के जनमे सिर माथ नवाय ॥५॥

(बुलंदशहर)

कहाँ के राजों ने रचकर कोठा उठाया है, महल उठाया है ? कहाँ के बादशाह गढ देखने आये हैं ? ॥१॥

कन्या के नगर के राजों ने रचकर कोठा उठाया है। महल उठाया है। दूल्हे के नगर के बादशाह गढ़ देखने आये हैं ॥२॥

बाहर से गढ़ ऐसा दिखाई पड़ रहा है, जैसे सोना चमक रहा है, मानिक जल रहा है। भीतर से गढ़ ऐसा जान पडता है, मानो चित्र खींचा हुआ है ॥३॥

समधी सिंह (समधी का नाम) धोती पहनकर, काँधे पर सोने का जनेऊ पहनकर, समधी को सिर नवाकर मिलो न ? ॥४॥

राजा झुकें, बाबू झुकें, पर मैं तो कहीं झुकने वाला नहीं था। एक कन्या के जन्म के कारण माथा झुकाना पडा ॥५॥

कन्या का जन्म उसके पिता को विनय और नम्रता सिखाने के लिये ही होता है।

---

[८]

बाबल तेरा सींको का घरवा रे, बाबल चिड़ियाँ तोड़ गईं।
बेटी और छवाय लूँगा री, लाडो घर जाओ आपने ॥१॥

बावल तेरा चौका जो सूना रे, बाबल तेरी धीय बिना।
बेटी बांमनी लगाय लूँगा री, लाडो घर जाओ आपने ॥२॥

बावल तेरा पानीं जो भिनकै रे, बाबल तेरी धीय बिना।
बेटी कहारी लगा लूँगा री, लाडो घर जाओ आपने ॥३॥

बाबल मेरा डोला जो अटका रे, बाबल तेरे महल में।
बेटी दो ईंट खिंचाय दूँगा री, लाडो घर जाओ आपने ॥४॥

बाबल मेरी गुड़िया जो सूनी रे, पिताजो तुमरी बेटी बिना।
बेटी मेरी पोती जे खेले री; लाडो घर जाओ आपने ॥५॥

(मेरठ)

हे बाबा! तेरा घर सींकों का बना है। उसे चिड़ियाँ तोड़ गईं।
हे बेटी! दूसरा छवा लूँगा, तुम अपने घर जाओ ॥१॥

हे बाबा! तेरी कन्या के बिना तेरी रसोई सूनी है। हे बेटी! ब्राह्मणी लगा लूँगा, तुम अपने घर जाओ ॥२॥

हे बाबा! तेरी कन्या के बिना तेरा पानी-घर भिनक रहा है। हे बेटी! कहारिन लगा लूँगा, तुम अपने घर जाओ ॥३॥

हे बाबा! तेरे महलों में मेरा डोला अटक गया है। हे बेटी! दो ईंटे और जुड़वा लूँगा? तुम अपने घर जाओ ॥४॥

हे पिताजो! तेरी बेटी बिना गुड़ियाँ सूनी हो जायँगी। हे बेटी! मेरी पोती खेलेगी। तुम अपने घर जाओ ॥५॥

कन्या विवाह के बाद पराई हो जाती है। पिता उसे घर में नहीं रख सकता।

---

[९]

हरो हरो गुबरा पीअरो है माटी,
रनीआँ ने महल लीपाओ।
महलन उपर कागा जो बोलै, कागा के बचन सुहाउने ॥१॥
उड़ौ न कागा तुम्है दिहैं धागा,
सोनवा मढ़ईयौ तोरी चोंच।
जो रे बीरन घर आवैईं रे रूपा मढ़इयौ तोरी पाँख ॥२॥

कागा बिचारे जनौं न पाये बीरन ठाढ़े हैं दुआर।
बीरन आये कुछ न लाये सासु ननद मन रूठी ॥३॥

जेठानी नोसोदिन बोला रे बोले बीर मोर चले हैं रिसाय।
हाथन मेंहदी पायेन जेहरी कैसे मनाबै राजा बीर ॥४॥

सासु ननदिआ पैइआं तोरी लागौ,
तुमहीं मनावो राजा बीर।
हाथा की मेहदी घोई तुम डारो पायेन डारो उतार
झपट मनावो राजा बीर ॥५॥

घोड़न की बाघा पकरे बेटी जो रोबै,
बीर मोरे धूपे नवारो।
धूप नेवारौ बहिनी बागा बगोचा, और ददुली केरे देस ॥६॥

ऊँचे चढ़ि चढ़ि माया जो हेरैं आवत बहिन औ भाय।
छूछे डोलीआ छूछे कहरवा, रूठे पूत घर आबै ॥७॥

बैठो न पूत मोरे लाले पलिँग पर, कहो बहिन केरी बात।
बहिनी के रोवे मॅ छतीआ फटत है,बरसत बड़े बड़े मेघ ॥८॥

कैसे उपजे पूत सपूत बहिनी रोवत कैसे छाड़ी।
करो न माया मोरी पूरीआ कचोरीआ,
बहिनी चलन हम जान ॥९॥

करो न भौजा मोरी डबीआ पोटरीया, बहिनी चलन हमजान ॥
उचे चढ़ि चढ़ि बहिनी जो हेरैं, आवत वीर हमार ॥१०॥

वीर आये चीर लाये, सासु ननद हँसि बोलीं।
सासु का हरो ननद का पीअरो, हमका दखिन केरो चीर ॥११॥

मैलो कुचैलो छोरौ न बहिनी, पहिरो दखिन वाली चीर।
ऊँचे पलिग पर जनि वैठो बीर, पूछौ न सजन हमार ॥१२॥

पठवौ न साजन बहिनी हमारी, सामन रहे दिन चार।
सामन सब बेटी झूला जो झूलै, भादों गरुये गंभीर ॥१३॥

कुआँर सबै बेटी नेवरता जो खेलैं, कातिक गौरी सेरामै।
अगहन सबै बेटी गौने जो जहियें,
तब हम बहिन पठामै ॥१४॥

(आगरा)

ताजा गोबर और पीली मिट्टी, दोनों मिलाकर बहू रानी ने महल लिपवाया। महल के ऊपर कौवा बोल रहा है। कौवे के बचन बड़े सुहावने है ॥१॥

हे कौवा! उड़कर जाओ न? तुमको धागा (रेशम का तागा गले में बाँधने के लिये) दूँगी; सोने से तुम्हारी चोंच मढ़ाऊँगी; मेरे भैया घर आयेंगे तो तुम्हारे पंख चाँदी से मढाऊँगी ॥२॥

कौवा अच्छी तरह बोल भी न पाया था कि भाई दरवाज़े पर खड़े हैं। भाई आये, और कुछ नहीं लाये; इससे सास और ननद मन में रूठ गई हैं ॥३॥

निठुर जेठानी ने बोली मारी। मेरे भाई नाराज होकर चले गये। मेरे हाथों में मेंहदी लगी है, पैरों में जेहरी (एक गहना) है, बाहर जा नही सकती। मैं भाई को कैसे मनाऊँ? ॥४॥

हे सासजी और ननदजी! तुम्हारे पैर लगती हूँ, तुम्हीं राजा भाई को मना लो। दोनों ने कहा—हाथों की मेंहदी धो

डालो और जेहरी उतार डालो, झपटकर राजा भाई को मना लो न ? ॥५॥

घोड़े की बाग पकड़कर बहन रोने लगी कि हे भाई ! धूप में न जाओ। भाई ने कहा—हे बहन ! (रास्ते के) बाग-बगीचों में और अपने बाप के देश मे धूप मिटा लूँगा ॥६॥

ऊँचे पर चढ़कर माँ देखने लगी कि बहन और भाई आ रहे हैं। पर उसने देखा कि छूँछी डोली, छूँछे कहार और रूठे पुत्र घर आ रहे हैं ॥७॥

हे पुत्र ! मेरी लाल पलँग पर बैठो और बहन की बात सुनाओ। हे माँ ! बहन का रोना सुनकर तो छाती फटती है, जैसे बड़े-बड़े बादल बरसते हैं ॥८॥

हे पुत्र ! तुम कैसे सपूत उपजे, जो रोती हुई बहन को छोड़ आये ? हे माँ ! पूरी और कचौड़ी बना दो, मैं बहन को लाने जाऊँगा ॥९॥

हे मेरी भावज ! डिबिया और पोटरी (गठरी) तैयार कर दो, मैं बहन को लाने जाऊँगा। ऊँचे पर खड़ी होकर बहन देख रही है कि मेरे भाई आ रहे हैं ॥१०॥

भाई आये, चीर लाये। सास ननँद ने हँसकर बात की। सास को हरे रंग की, ननँद को पीले रंग की साड़ी और मेरे लिए दक्खिनी चीर लाये ॥११॥

हे बहन ! मैला-कुचैला कपड़ा उतार डालो न ? दक्खिनी चीर पहनो। हे भाई ! ऊँची पलँग पर अब चढ़कर न बैठो और मेरी विदाई के लिये मेरे सजन को पूछो ॥१२॥

हे सजन ! मेरी बहन को विदा कर दो। अब सावन के चार

ही दिन रह गये हैं। सावन में सब बेटियाँ झूला झूलती हैं। भादों में बड़ी बरसात होती है ॥१३॥

क्वार में सब बेटियाँ नेवरता (?) खेलती हैं और कातिक में गौरी (गोबर की बनी पार्वती) की मूर्ति सेराती हैं। अगहन में जब सब बेटियाँ गौने जाने लगेंगी, तब मैं बहन को भेज दूँगा ॥१४॥

पहली बार बहन को घर ले जाने के लिये उसका भाई आया था, पर कुछ ले नहीं आया था; इससे बहन की ससुराल में उसकी कुछ क़द्र नहीं हुई। लेकिन दूसरी बार जब साड़ियाँ और कुछ खाने-पीने की चीज़ें लेकर आया, तब उसकी बड़ी आव-भगत हुई।

---

[१०]

एक ही घरवा के बत्तीस दुआर हो,
बत्तीसो दुअरवा पर मरिच के गाँछ।
सेर भर मरिच हो सासू सिलवटा धरी देइ हो
मरिच पीसत हो सासू धूपे आठो अंग हो ॥१॥

जेहूँ तोरा बहुआ रे धूपल आठो अंग हो।
अपना बाबा घर से चेरिया बोलाउ ॥२॥

हमरा बाबाजी के का करबू जोर हो।
नाचेला नचनियाँ रे, भइआ बकसले घोड़ ॥३॥

मोरा पिछुअरवा कहँरवा हित भइया हो।
अइसनी लोलारी बहुअवा नइहर पहुँचाव ॥४॥

झरे झरोखा चढ़ो अम्मा निरेखे हो।
कस देखो बेटी के डडिया झलकत आवे हो ॥५॥
किया बेटी चोरिनी रे, किया बेटी चटनी हो।
किया बेटी दीहलु हो सासू के जवाब ॥६॥
नाहीं बेटी चोरनी हो नाहीं बेटी चटनी हो।
इन बेटी दीहली हो सासू के जवाब ॥७॥
एक भर अइलु हो बेटी दुई भर जाहू हो।
ढॅकले ओहारल बेटी सासुर जाहू ॥८॥

(आजमगढ़)

एक घर के बत्तीस दरवाज़े हैं। बत्तीसों दरवाजों पर मिर्च के पेड़ हैं। सेर भर मिर्च पीसने के लिये सास ने सिल पर रख दिया। हे सासजी! मिर्च पीसते-पीसते आठो अंग बेदम हो जाते हैं ॥१॥

हे बहू! मिर्च पीसने से तुम्हारे आठों अंग थक जाते हैं तो नैहर से दासी बुलाओ ॥२॥

हे सासजी! मेरे पिता पर तुम्हारा क्या ज़ोर है? उनके यहाँ नचनियाँ नाचते है और मेरा भाई उनको घोड़ा इनाम देता है ॥३॥

हे मेरे पिछवाडे बसे हुये कहार भाई! ऐसी लड़ाका बहू को नैहर पहुँचा दो ॥४॥

झॉंझर झरोखे पर से माँ देख रही हैं। बेटी की यह पालकी कैसी झलकती आ रही है ॥५॥

हे बेटी! तुम चोरी करती हो? या चटोरी हो? या तुमने सास को जवाब दिया है? ॥६॥

न बेटी चोर है, न चटोरी। हे माँ! इस बेटी ने सास को जवाब दिया है ॥७॥

हे बेटी! जिस तेज़ी से आई हो, उससे दूनी तेज़ी से वापस जाओ। ओहार खोले बिना ही ससुराल वापस जाओ ॥८॥

इस गीत में यह दिखाया गया है कि कन्या यदि ससुराल से अपने किसी दोष-वश आई हो तो माता उसका आदर नहीं करती।

---

[११]

जुगुति से परसौ जी ज्योनार—करि करि के सतकार। पेड़ा बरफी और अमिरती, खाजे खुरमा घेवर परसौ, गुप-चुप सोहन हलुआ परसौ, कलाकन्द की बरफ़ी परसौ, मक्खन बरा जलेबी परसौ, पेठा और इन्दरसे परसौ, बूँदी और बतासे परसौ, खुर्चन और मलाई परसौ, खोया बालू-साही परसौ, खुरमा लडुआ सब के परसौ, दालमोठ अरु मठरी परसौ, तरे तिकोना सब के परसौ, बूरा मिश्री जल्दी परसौं, रबड़ी दही सबी कै परसौं, सिखरिन दूध लाय के परसौ, पुड़ी कचौड़ी लुचुई परसौ, खरी कचौड़ी सब के परसौं, बेसन बरा पकौड़ी परसौ, हापड़ के तुम पापड़ परसौ; मालपुआ अरु पूआ परसौ, दाल भात सन्नाटो परसौ, मूँग समूची सब के परसौ, कढ़ी करायल रौतो परसौ, खट्टे मिट्ठे बरा परोसौ, सुरभी को घिउ गडुअन परसौ, रसगुल्ला रसदार।

जुगति से परसौ जी ज्योनार ॥१॥

सोया मेथी मरसो परसौं, सरसौ अरु चौरय्या परसौं,

पालक पोय भसूँड़े परसौ, मूरी मिरचै सब के परसौ, हरी-हरी तुम धनियाँ परसौ, कटहर बड़हर लौकी परसौ, कद्दू और करेला परसौ, रायलभेरा भाटा परसौ, भिंडी घिआ तुरैया परसौ, पेठा की तरकारी परसौ, आलू और रतालू परसौ, पृथ्वीकन्द चचेंड़ा परसौ, अदरख की तरकारी परसौ, केला की तरकारी परसौ, धनियाँ की तुम चटनी परसौ, बथुआ की तरकारी परसौ, पोदीना की चटनी परसौ, छिरिका गलका अमरस परसौ, आम अचारी सूखा परसौ, दाख मुरब्बा सब के परसौ, अदरख कमरख सब के परसौ, सबो खटाई सब के परसौ, हा हा करि करि जल्दो परसौ, सत्य भाव से सब के परसौ, करि करि के सतकार।

जुगति से परसो जी ज्योनार ॥२॥

सिलहट की नारंगी परसौ, फरुखाबादी मिठवा परसौ, सेव तूत सहतूत चिरौंजी चिलगोजा अखरोटन परसौ, प्रागराज की सकड़ी परसौ, गरी छुहारे पिस्ता परसौ, नरम मखाने सब के परसौ, खिन्नी और लुकाठन परसौ, अनन्नास अंगूरन परसौ, जल्द चिरौंजी सब के परसौ, मूँगफली भरि दोना परसौ, किसमिस आम टिकारी परसौ, नौघा अरु तरबुजवा परसौ, चपटा और मालदहा परसौ, मोहन भोग बम्बई परसौ, गोला आमुनि जामुनि परसौ, खरबुजवा तुम सब के परसौ, सोया हिंगहा जुगिया परसौ, देसी आम सबी के परसौ, कंचन भरि भरि थार। पुरोहित करि करि के सतकार। परोसौ सब तर बारंबार।

जुगति से परसौ जी जेवनार ॥३॥

गंगा जल जमुना जल परसौ, नदो नरवदा को जलु परसौ,
सरजू का जलु सब कै परसौ, सिंध्र सरसुती को जलु परसौ,
कावेरो कृश्ना जलु परसौ मानसरोवर को जलु परसौ, नदो
गंभीरी को जलु परसौ, फलगू महानदी को परसौ, ठंडे जल
सब ही के परसौ, हा हा करि करि सब के परसौ, बिनती
करि करि भोजन परसौ, हाथ जोरि के सब के परसौ, प्रेम
प्यार करि सब के परसौ, छोटे बड़े सबी के परसौ, आदर
करि करि सब के परसौ, समधी लमधी के ढिग परसौ,
चारो भाइन के ढिग परसौ, गुरु वशिष्ठ तर जल्दी परसौ;
ऋषि मुनियो तर जल्दी परसैा, सबै देवतन के ढिग परसैा,
हाथ धुलाओ पान खवाओ, आभूषण वस्तर पहिरावैा,
जनवासे सब को पहुँचावैा, करि करि बाहन त्यार। गावै
तुलसीदास गँवार, जुगति से परसौ जो ज्योनार ॥४॥

इस गीत में भोजन के चोष्य, चर्व्य, लेह्य, पेय, सब प्रकार के पदार्थों के नाम गिनाये हैं। पता नहीं, इसके रचयिता "तुलसीदास गँवार" वही सुप्रसिद्ध तुलसीदास हैं, या गीत को प्रचलित करने के लिये किसी चतुर ने यह 'गँवारपन' किया है। गीत में जिन पदार्थों के नाम आये हैं, वे ये हैं—

पेड़ा, बरफ़ी, अमिरती, खाजा, खुरमा, घेवर, गुपचुप, सोहन-हलुआ, कलाकन्द, मक्खन, बरा, जलेबी, पेठा, इन्दरसा, बून्दी, बतासा, खुर्चन, मलाई, खोवा, बालूशाही, लड्डू, दालमोट, मठरी, तिकोना (समोसा), बूरा, मिश्री, रबड़ी, दही, सिखरन, दूध, पूरी, कचौड़ी, लुचुई, खस्ता, कचौड़ी, बेसन का बरा, पकौड़ी,

हापड़ के पापड़, मालपुआ, पूआ, दाल, भात, मूँग, कढी, रायता, खट्टे मीठे बरे, गाय का घी, रसगुल्ला, सोआ-मेथी-मरसे का साग, सरसों, चौराई का साग, पालक-पोई का साग, भसींड, मूरी, मिर्च, हरी धनियां, कटहर, बड़हर, लौकी, कद्दू, करेला, भाँटा, भिंडी, घिया-तुरोई, कोहँड़ा, आलू, रतालू, जमींकन्द, चचेंडा, अदरक, केला, बथुआ, पोदीना, अमरस, आम का अचार, दाख का मुरब्बा कमरख, सिलहट की नारंगी फर्रुखाबाद की मिठाई, सेब, शहतूत, चिरौंजी, चिलगोज़ा, अखरोट, प्रयाग की सकदी गरी, छुहारा, पिस्ता, मखाना, खिन्नी, लुकाट, अनन्नास, अंगूर, मूंगफली, किस-मिस, आम, तरबूज, गोल-चपटा-मालदह-मोहनभोग और बम्बई आम, जामुन, खरबूजा, हिंगहा, ? जुगिया, ? गङ्गा, जमना, नर्मदा, सरयू, सिन्धु, सरस्वती, कावेरी, कृष्णा, मानसरोवर, गंभीरी, फलगू, महानदी आदि नदियों का ठंडा जल।

इस गीत में खाने-पीने की प्रायः सभी ख़ास-ख़ास चीज़ों के नाम आ गये हैं। साथ ही हिन्दुस्तान भर की सुप्रसिद्ध नदियों के नाम भी आ गये हैं। गानेवालियों को खाने-पीने की चीज़ों के नाम ही नहीं, बल्कि भूगोल की यह शिक्षा भी गीतों के द्वारा मिलती रहती है।

चक्की के गीत

गाँवों मे स्त्रियाँ प्रायः रात के पिछले पहर में उठकर आटा पीसने में लग जाती हैं। ज़्यादा पीसना होता है तो दो स्त्रियाँ मिलकर पीसती हैं और साथ ही साथ गीत भी गाती रहती हैं। गीतों के मधुर रस में वे ऐसी डूब जाती हैं कि उन्हें चक्की की थकावट मालूम ही नहीं पड़ती।

गाँव के ज़मींदार के घर में चमारिनों और अन्य छोटी जातियों की स्त्रियाँ भी आटा पीसने को बुलाई जाती हैं। वे प्रायः रात के पिछले पहर में आती हैं और तब जमींदार के घर के पिछवाड़े चक्की के 'घर्र-घर्र' के साथ उनके गीत भी सुनाई पड़ने लगते हैं।

चक्की के गीतों में गृहस्थ-जीवन की बड़ी ही मर्म-व्यथाएँ भरी रहती हैं।

नमूने के दो गीत यहाँ दिए जाते हैं :—

[१]

एक दैयाँ अउता भैया हमरेउ के देसवाँ रे ना।
भइया हमरिउ खबरिया लइ जातेउ रे ना ॥१॥

तोहरे के देसवाँ बहिनी ढॉक ढॅकुलिया रे ना।
बहिनी रहिया में बाघ बघिनिया रे ना ॥२॥

हथवाँ मे लेत्या भइया ढाल तरुवरिया रे ना।
भइया काउ करतै बाघ बघिनिया रे ना ॥३॥

आवत देखौं मैं दुइ रे सिपहिया रे ना।
रामा एक रे गोरा एक साँवर रे ना ॥४॥

गोरऊ तो मोरी माई क पुतवा रे ना।
रामा सँवरू ननँदजी क भैया रे ना ॥५॥
मचियै बैठी हैं सासु बढ़ैतिन रे ना।
सासू काव रे बनाई जेवनरवा रे ना ॥६॥
कोठिलहि बहुवा रे सरली कोदइया रे ना।
बहुअरि मेड़वा चँकौड़े क सगवा रे ना ॥७॥
अगिया लगावौ सासू सरली कोदइया रे ना।
सासू बजर परै मेड़वा के सगवा रे ना ॥८॥
हमरे तो आये सासू भैया पहुनवा रे ना।
सासू केथुवा क देई पानी पिनवाँ रे ना ॥९॥
घुटने क देहु बहुवरि फुटही मेलियवा रे ना।
बहुवरि, औरो गड़हिया क पनिया रे ना ॥१०॥
कुँचने क देहु बहुवरि पिपरे क पतवा रे ना।
बहुवरि ओंहि माँ चिरइया क लेड़वा रे ना ॥११॥
सोवने क देहु बहुवरि टुटहा झिलँगवा रे ना।
बहुवरि औरो चुवनि चौपरिया रे ना ॥१२॥
अगिवा लगावौं सासू तोरी पहुनइया रे ना।
मोरे जियरा मे भैया क बसेरवा रे ना ॥१३॥
बहुअरि रीन्हि डारी मुँगिया क दलिया रे ना।
बहुअरि मोती सारो झिनवाँ क भतवा रे ना ॥१४॥
मैदा चालि चालि लुचुई वनाईं रे ना।
बहुवरि खोटि लाईं बथुवा क सगवा रे ना ॥१५॥

सोने की थरिया में जेवना परोस्यों रे ना।
रामा उपरा से घियना कै घरिया रे ना ॥१६॥

रामा जेवन बैठे सार बहनोइया रे ना।
रामा भइया क ढूरै अँसुइया रे ना ॥१७॥

की भइया समझे है माई कल्योना रे ना।
भैया की रे भउजि जूड़ि बोलिया रे ना ॥१८॥

ना हम समझे बहिनी माई कल्योना रे ना।
बहिनी नाहीं बहू कै जूड़ि बोलिया रे ना ॥१९॥

चन्दा सुरुज ऐसी बहिनी सँकल्प्यो रे ना।
रामा जरि जरि भई है कोइलिया रे ना ॥२०॥

बैठौ न मोरे भइया मलिनी ओसरवाँ रे ना।
भैया मोरा दुख कहै मालिन घेरिया रे ना ॥२१॥

कै मन कूटौ भैया कै मन पीसौ रे ना।
भैया कै मन सिझवई रसोइया रे ना ॥२२॥

सबका खिआवौ भैया सबका पिआवौं रे ना।
भैया बचि जाथै पिछली टिकरिया रे ना ॥२३॥

भैया ओहू माँहि ननदी कल्योना रे ना।
भैया ओहू माँहि गोरू चरवहवा रे ना ॥२४॥

भैया ओहू माँहि कुकुरा बिलरिया रे ना।
भैया ओहू माँहि देवरा कल्योना रे ना ॥२५॥

सबका ओढ़ावौं भैया सबका पहिरावौं रे ना।
भैया बचि जाथै फटही लुगरिया रे ना ॥२६॥

भैया ओहू महँि ननदी ओढ़निया रे ना।
भैया ओहू माँहे देवरा कछोटिया रे ना ॥२७॥

सासू खाँची भरि बसना मँजावै रे ना।
सासू पनियाँ पताल से भरावै रे ना ॥२८॥

सासू तो ए भइया बुढ़िया डोकरिया रे ना।
भइया मुँहवाँ मे जहर कै गँठिया रे ना ॥२९॥

ननदी तो ए भइया बन कै कोइलिया रे ना।
ननदी आपनि बागाँ उड़ि जइहै रे ना ॥३०॥

जेठानी तो ए भइया कारी बदरिया रे ना।
भइया छिन बरसै छिन घाम रे ना ॥३१॥

देवरानी ए भइया कोने कै बिलरिया रे ना।
भइया छिन निकरै छिन पैठै रे ना ॥३२॥

मूँड़ देखौ ए भइया मोरा मूँड़ देखौ रे ना।
भइया जैसे कुकुरिया क पुँछिया रे ना ॥३३॥

पीठि देखौ ए भइया मोरी पीठि देखौ रे ना।
भइया जैसे है धोबिया क पटवा रे ना ॥३४॥

कपड़ा तौ देखौ भइया मोर पहिरनवाँ रे ना।
भइया जैसे सवनवाँ कै बदरी रे ना ॥३५॥

लोहवा जरै जैसे लोहरा दुकनियाँ रे ना।
मोरी बहिनी जरै ससुररिया रे ना ॥३६॥

ई दुख जिनि कह्यो भौजी के अगवाँ रे ना।
भौजी दुइ चारि घर बाँटि ऐहैं रे ना ॥३७॥

ई दुख जिनि कह्यो माई के अगवाँ रे ना।
माई छतिया-बिहरि भरि जैहैं रे ना ॥३८॥

ई दुख जिनि कह्यो बाबा के अगवाँ रे ना।
बाबा सभवाँ बइठि पछितैहैं रे ना ॥३९॥

ई दुख जिनि कह्यो बहिनी के अगवाँ रे ना।
बहिनी हलिया सुनि ससुरे न जैहैं रे ना ॥४०॥

ई दुख कह्यो भैया अगुवा के अगवाँ रे ना।
भैया जिन मोरी करी अगुवइया रे ना ॥४१॥

ई दुख कह्यो भैया बभना के अगवाँ रे ना।
भैया जिन मोरी लगन बिचारेउ रे ना ॥४२॥

सब दुख बाँधेउ भैया अपनो मोटरिया रे ना।
भैया जहवाँ खोलेउ तहवाँ रोयेउ रे ना ॥४३॥

(जौनपुर)

बहन कहती है—हे भैया ! एक बार मेरे देश में भी आते और मेरी भी खबर ले जाते ॥१॥

भाई ने कहा—हे बहन ! कैसे आऊँ ? राह में बाघ-बाघिन हैं ॥२॥

बहन ने कहा—हे भैया ! ढाल-तलवार हाथ में ले लेते तो बाघ-बाघिन क्या करते ? ॥३॥

भाई बहन के यहाँ गया। बहू भाई को आता हुआ देखकर कहती है—

मैं दो जनों को आता हुआ देख रही हूँ। एक गोरा है, दूसरा साँवला ॥४॥

गोरा मेरा भाई है और साँवला ननद का भाई अर्थात् मेरा पति है ॥५॥

मनस्विनी सास मचिये पर बैठी हैं। हे सासजी! जेवनार क्या बनाऊँ? ॥६॥

हे बहू! कोठिले में सड़ा हुआ कोदौ है और मेंड़ पर चकौड़ का साग है ॥७॥

हे सासजी! तुम्हारे सड़े हुये कोदौ में आग लगे; और चकौड़ के साग पर बज्र गिरे ॥८॥

हे सासजी! मेरे भाई पाहुने आये हैं। उनको जलपान क्या दूँ? ॥९॥

हे बहू! पीने के लिये फूटी हुई मेटी (मिट्टी की लोटिया) में गढे का पानी दे दो ॥१०॥

फूँचने के लिये पीपल के पत्ते में चिड़िया का बीट भरकर दे दो ॥११॥

सोने के लिये टूटा हुआ झिलँगा, चूती हुई चौपाल दे दो ॥१२॥

हे सासजी! तुम्हारी पहुनई को आग लगे। मेरा भाई मेरे जी में बसा है ॥१३॥

बहू ने मूँग की दाल डाली; और महीन चावल का मोती-ऐसा भात रींधा ॥१४॥

मैदा छानकर उसने लुचुई बनाई और बथुए का साग खोंट लाई ॥१५॥

सोने की थाली मे भोजन परोसकर उसमें ऊपर से घी की धार डाल दी ॥१६॥

साले बहनोई दोनों खाने बैठे। खाते-खाते भाई की आँखों से आँसुओं की धारा बह चली ॥१७॥

हे भाई! क्या तुम्हें माँ के हाथ का कलेवा याद आ रहा है? या भौजी की मीठी-मीठी बातें याद आ रही हैं? ॥१८॥

हे बहन! न तो मुझे माँ के हाथ का कलेवा याद आ रहा है, और न स्त्री की मीठी-मीठी बातें ही ॥१९॥

चाँद और सूर्य की-सी बहन मैंने संकल्पी थी, पर दुःख से जल-जलकर यह कोयल जैसी काली हो गई है ॥२०॥

हे भैया! मालिन के ओसारे में तो एक बार जाकर बैठो। उसकी कन्या तुम से मेरे दुःख का सब हाल कहेगी ॥२१॥

हे भैया! कै मन कूटती हूँ, कै मन पीसती हूँ, कै मन की रसोई बनाती हूँ ॥२२॥

सब को खिलाती हूँ, सब को पिलाती हूँ; अन्त में जो सबसे पीछे वाली टिकरी (छोटी रोटी) बच रहती है ॥२३॥

उसमें से ननद के लिए कलेवा रखना पड़ता है। चरवाहे को देना पड़ता है ॥२४॥

कुत्ते-बिल्ली को टुकड़ा देना पड़ता है और देवर के लिए कलेवा रखना पड़ता है ॥२५॥

सब को ओढ़ाती हूँ, सबको पहनाती हूँ। सबके ओढ़ने और पहनने से जो कटा-फटा कपड़ा बच रहता है ॥२६॥

उसमें से ननद की ओढ़नी और देवर की कछोटी के लिये देना पड़ता है ॥२७॥

सासजी खाँची भर बरतन मुझसे मँजवाती हैं। और पाताल तक गहरे कुँवें से पानी भराती हैं ॥२८॥

हे भाई ! सासजी बुढ़िया डोकरी हैं, लेकिन उनके मुँह में ज़हर की गाँठ है ॥२९॥

हे भाई ! ननँद तो बन की कोयल है। वह अपने बाग़ को उड़ जायगी ॥३०॥

हे भाई ! जेठानी तो काली घटा है। क्षणभर में बरसती है, क्षणभर में घाम हो जाता है ॥३१॥

हे भाई ! देवरानी कोने की बिल्ली है। कभी बाहर निकलती है, कभी भीतर जा बैठती है ॥३२॥

हे भाई ! मेरा सिर तो देखो; लटें कुतिया की पूँछ की तरह हो गई हैं ॥३३॥

हे भाई ! पीठ तो देखो, जैसे धोबी का पाटा ॥३४॥

हे भाई ! मेरा कपड़ा तो देखो, जिसे पहने हूँ; जैसे सावन की बदली ॥३५॥

भाई ने कहा—हाय ! लोहा लोहार की दूकान में जल रहा है और मेरी बहन ससुराल में जल रही है ॥३६॥

बहन कहने लगी—हे भैया ! यह दुःख भौजी के सामने न कहना; नहीं तो वह दो-चार घरों में बाँट आयेगी ॥३७॥

हे भैया ! यह दुःख माँ से भी मत कहना; नहीं तो वह छाती फाड़कर मर जायगी ॥३८॥

हे भैया ! यह दुःख बाबा से भी मत कहना; नहीं तो वे गाँव के लोगों के बीच बैठकर पछतायेंगे ॥३९॥

हे भैया ! यह दुःख बहन के सामने भी न कहना; नहीं तो यहाँ का हाल सुनकर वह ससुराल न जायगी ॥४०॥

हे भैया! यह दुःख अगुवा से कहना, जिसने इस घर में आकर मेरा विवाह कराया ॥४१॥

हे भैया! यह दुःख उस ब्राह्मण से कहना, जिसने लग्न शोध कर विवाह कराया था ॥४२॥

अन्त में बहन कहती है— हे भैया! सब दुःखों को गठरी में बाँध लो (किसीसे न कहना), जहाँ खोलना वहाँ रो देना ॥४३॥

एक नव-विवाहिता वधू का भाई उससे मिलने आया है। बहन ने भाई से अपनी ससुराल की गृहस्थी का जो मार्मिक वर्णन किया है, वही इस गीत में गाया गया है।

इस गीत में कितनी मर्म-व्यथा भरी है! कितनी अन्तर्पीड़ा व्याप्त है! पढ़कर ही आँखों में आँसू आ जाते हैं। लहराती हुई पूर्वा हवा में, धान का खेत निराते समय खेत में और चक्की पीसती हुई स्त्रियों—मुख्य कर चमारिनों—के ऊँचे कण्ठ से यह गीत सुनकर मन की अजीब हालत हो जाती है।

इस गीत में अत्युक्ति का एक भी शब्द नहीं है। गाँवों में कितने ही घरों की ऐसी ही दशा है। कितने ही घरों में बहुओं को वर्णनातीत दुःख है। खाने का कष्ट, पहनने का कष्ट, व्यङ्ग्य और ताने का कष्ट, मार-पीट का कष्ट, कहाँ तक गिनाये जायँ, बहुएँ बेचारी मूक पशु की भाँति सब सहती रहती हैं। पुरुष इतने कष्ट कभी नहीं सह सकते।

इस गीत में कष्टों का जो वर्णन है, उसके सिवा दो बातें विशेष महत्व की हैं। एक तो बहू का अपने मायके के लिए विशेष ध्यान। वह भाई से कहती है कि मेरे कष्टों का हाल मेरी भावज से न कहना, नहीं तो वह दो-चार घरों में बाँट आयेगी। माँ, बहन

और बाबा से भी कुछ कहने को रोकती है। उसकी शिकायत तो अगुवा और ब्राह्मण से है, जिन्होंने इस घर में लाकर उसे दुःख में डाला है।

दूसरे बहू की सहनशीलता। उसे अपने पति के घर के मानापमान का भी ध्यान है। वह भाई से कहती है कि मेरा दुःख किसी से न कहना। मैं अब तो इस घर में बँध ही गई हूँ, जैसे होगा, निबाहूँगी। उसका अन्तिम वाक्य सहन-शीलता की पराकाष्ठा दिखाता है।

यह गीत किसने बनाया? क्या किसी अक्षर और मात्रा गिननेवाले कवि ने? या पिङ्गल और अलङ्कार के किसी उद्भट विद्वान् ने? नहीं, यह प्रकृति की रचना है। यह हाहाकार स्त्री-कण्ठ से आप से आप फूट निकला है। दुखिया बेचारियों की पुकार जब किसी ने न सुनी, तब उनके हृदय की वेदना हलकी करने के लिये, उन पर दया करके, कविता-देवी ने स्वयं यह गान गाया है।

न जाने कितने दिनों से विवाह के स्वार्थी दलालों—अगुवा और ब्राह्मण—के विरुद्ध स्त्रियाँ खेतों-खलियानों, गली-कूचों और मेले-ठेलों में पूरे ज़ोर से चिल्ला रही हैं, पर पुरुषों ने क्या ध्यान दिया? स्त्रियों के इस हाहाकार को किसी ने सुना?

---

[२]

परदेसी पीतम काहे लिखी छूँछी पातिया।
दाना पानी हमको नाहीं, रोइ रोइ काटो रातिया॥
सिगरी रैनि हमैं रोउति गुजरो, भोरु होत उइरी चाकिया॥१॥

मन भरि हमने पीसि बटोरो, ताहूँ दिखावै मोको लाठिया ।
रोके रहत प्रान यहि तन मे पीतम तोरि सुरातिया ॥२॥

(पीलीभीत)

हे परदेसी प्रियतम ! ख़ाली कुशल-चेम लिखकर क्या भेजूँ ? घर में दाना-पानी कुछ नहीं है । रो-रोकर रात काटती हूँ । सारी रात रोते-रोते कटती है । भोर होते ही चक्की पर बैठ जाती हूँ ॥१॥

मनभर पीसकर मैंने तैयार किया, उस पर भी (सास) मुझे लाठी दिखाती हैं । हे प्रियतम ! तुम्हारी याद ही मेरे शरीर में प्राण को रोके रहती है ॥२॥

कर्कशा सास बहू को बहुत दुःख देती है । बहुओं के प्रत्येक गीत में उनकी यह फरियाद सुनाई पड़ती है ।

खेत के गीत

खेत के गीत कई प्रकार के होते हैं। हल चलाते समय, खेत बोते, निराते और काटते समय तरह-तरह के गीत गाये जाते हैं। ज़्यादा गीत खेत निराते समय के होते हैं। क्योंकि एक तो इस काम में बहुत मेहनत पड़ती है, जिसकी थकावट सोखने के लिए गीतों का नशा बहुत ज़रूरी है। दूसरे निरवाही का काम प्रायः स्त्रियों, मुख्य कर चमारिनों से लिया जाता है,जो स्त्री-समाज के दुःखों से व्याप्त होती हैं। उनके गले का स्वर बहुत तेज होता है, इससे उनकी करुण-कथा दूर तक सुनाई पड़ती है।

बरसात में धान और मक्का के खेतों में से घास निकालने का काम महीनों चलता रहता है। उन दिनों गाँव का वायुमंडल अनेक तरह के मधुर स्वरों से गूँज उठता है। बरसाती गीतों में पति-पत्नी, भाई-बहन, सास-बहू, ननद-भौजाई आदि की मनोरंजक जीवन-घटनायें पिरोई रहती हैं।

चक्की पर गाये जाने वाले गीत खेत निराते समय भी गाये जाते हैं।

यहाँ नमूने के कुछ गीत दिये जाते हैं:—

[१]

हमने कही थी लाला गिरी पड़ो रे
वदरा मानस हो धारी देह जी।
अब लों ना खाई थी सटो फूल की अब पड़ै डंडों
की मार रे जी धोरी मेरा चालता चलो ॥१॥

कागज हो तो बाँच लूँ बै तिरिया
करम ना बाँचा जाय जी।
हमारे करम मे डोसी लिखी तुम धन करो अपना
राजरे जी। धोरी मेरा चालता चलो ॥२॥

किसके हैं गृह जौ चना किसके हैं ये कुंवाँ बाग जी।
किसकी है तू कामनी नूओ से बीनै साग जी।
धोरी मेरा चालता चलो ॥३॥

जेठा हमारे के जौ चना ससुर हमारे के कुंवाँ बाग जी।
पिया अपने को हम कामनी नओं से बीनैं साग जी।
धोरी मेरा चालता चलो ॥४॥

खेती खेती कर रहे खेती से ना हेत जी।
मिर्गा ने बालम तुम्हारा सब चुग लिया खेत जी।
धोरो मेरा चालता चलो ॥५॥

(शाहजहाँपुर)

हरवाहा कहता है:—

मैं ने कहा था, हे लाला (बैल) ! तू गिर पड़ेगा। बंदर ने मनुष्य का शरीर पाया है। अबतक तुमने फूल की पंखड़ी खाई थी, अब डंडों की मार पड़ रही है। मेरे बैल ! चलते चलो ॥१॥

काग़ज़ पर लिखा हो तो बाँच सकता हूँ; पर हे स्त्री ! कर्म का लेख नहीं बाँचा जा सकता। मेरे कर्म में मारे-मारे फिरना लिखा है। हे धन ! तुम अपना राज करो। हे मेरे बैल ! चलते चलो ॥२॥

ये जौ और चने किसके हैं ? ये कुँवे और बाग किसके हैं ? और हे कामिनी ! तू किसकी है जो नहों से साग खोंट रही है ? हे मेरे बैल चलते चलो ॥३॥

जौ और चने मेरे जेठ के हैं। कुँवे और बाग मेरे ससुरजी के हैं। मैं अपने प्यारे की कामिनी हूँ। नहों से साग खोंट रही हूँ। हे मेरे बैल ! चलते चलो ॥४॥

खेती-खेती तो बक रहे हो, पर तुमको खेती से प्रेम नहीं है। हे बालम ! तुम्हारा सारा खेत मृग ने चर लिया है। हे मेरे बैल ! चलते चलो ॥५॥

इस गीत में कई रसीले दोहे और भी हैं। गानेवाले बीच-बीच में अपनी रुचि के दोहे और छन्द मिलाकर गाया करते हैं।

यह गीत जौ-गेहूँ के खेत जोतते वक्त हलवाहे गाते हैं।

---

[२]

एहो रतन कुआँ मुख साँकरै अलबेली भरै पनिहार।
तौ अरी अरी कुँअना की पनिहारी
काहे ठाढ़ी बदन मलीन ॥१॥

कै तेरो हार कुँअल गिरौ अरी कै तेरी बिछुरी पनिहार।
तौ न मेरो हार कुँअल गिरौ अरी न बिछुरी पनिहार ॥२॥

तौ मेरो जो बिछुरे रहिया दो जने एक दरजी एक मनिहार।
तौ कहारा तो ल्यावे लरका दरजी कौ
अरे कहारा लिवावै मनिहार ॥३॥

तौ कौन की चोलीया अमाने भई
अरे कौन के ढीलै भए हार।
तौ गोरिया की चोलीया अमाने भई
अरे सम्बरी कै ढीले भए हार।४॥

तेरे पान जो चाबे पिया हौंसिया
अरे चोली मे परि गई पीक।
तौ अरे अरे भइया धोबीया मेरी
चोली के दाग छुटाओ ॥५॥

जो तेरी चोली के दाग छुटैहै
तो हम खैर री कहा तुम देऊ।
तौ देहौं तो हाथ की मुँदरी अरे और हिए की हार ॥६॥

सिल धर फोरहे तेरी मूँदरी
अरी समद बुआऊँ तेरो हार।
लैहों ओ लैहो तेरी चोली अरी लैहों जी पिव को सिंगार ॥७॥

तौ डाढ़ी जो जारो तेरे बाप की
तेरो मूछै तो देऊँ भागार।
जब घर आवे बारे लछमन देवरा
तोहे बरिया से देहौं बँधाय ॥८॥

(झाँसी)

सँकड़े मुँहवाले रल के कुँवें से अलबेली पनिहारिन पानी भर रही है। हे कुँवें की पनिहारिन! तुम्हारा मुँह उदास क्यों है? ॥१॥ तुम्हारा हार कुँवें में गिर पड़ा है? या तुम्हारी पनिहारिन सखी

बिछुड़ गई है ? न मेरा हार कुँवें में गिरा है और न सखी पनिहारिन ही से मेरा बिछोह हुआ है ॥२॥

मेरे दो जन, एक दर्जी और दूसरा मनिहार, राह भूल गये हैं, (यही चिन्ता है)। कहार दरज़ी के लडके को बुला देगा और वही मनिहार को ले आयेगा ॥३॥

किसकी चोली अमाने पर हुई ? और किसके हार ढीले पड़े हैं ? गोरी की चोली अमाने पर हुई है और साँवली के हार ढीले पड़ गये हैं ॥४॥

हौसलेवाले पिया पान खाते हैं। चोली पर पीक पड़ गई है। अरे, धोबी भाई ! मेरी चोली के दाग छुड़ा दे ॥५॥

धोबी ने कहा—तुम्हारी चोली का दाग छुड़ा दूँ तो तुम मुझे क्या दोगी ? मैं तुमको हाथ की अँगूठी और गले का हार दूँगी ॥६॥

तुम्हारी अँगूठी को पत्थर से फोडूँ, और हार समुद्र में फेंक दूँ। मैं तो तुम्हारी चोली लूँगा और तुम्हारे पिया का शृङ्गार लूँगा ॥७॥

मैं तेरे बाप की दाढ़ी जला दूँगी। तुम्हारी मूँछें झुलस दूँगी। मेरा लछमण देवर घर आयेगा, तो तुझे पेड़ से बँधवा दूँगी ॥८॥

इस गीत में पति के प्रति बहू की एकनिष्ठा दिखाई गई है। किसी भी प्रलोभन से उसका मन चलायमान नहीं होता है।

यह गीत फागुन से बैसाख तक चने और गेहूँ के खेत काटते वक्त, गाया जाता है।

कोल्हू के गीत

कोल्हू के गीत बड़े सरस होते हैं। उनके गाने के स्वर भी जुदा होते हैं। कोल्हू प्रायः रात के चौथे पहर में चला करते हैं, जब कि घोर सन्नाटा छाया हुआ होता है। गीत गाने-वाले का ऊँचा स्वर सन्नाटे को चीरता हुआ दूर तक चला जाता है और बड़े सवेरे उठकर राह चलनेवाले मुसाफ़िरों को ख़बर देता है कि गाँव में कोल्हू चल रहा है, साथ ही प्रेम और विरह की युक्तियाँ सुनाकर उनके हृदयों को गुदगुदा भी देता है।

कोल्हू दो प्रकार के होते हैं, एक तेल पेरने का, दूसरा गन्ने का। तेल का कोल्हू केवल तेली चलाता है और वह बारहो महीने चलता रहता है। गन्ने का कोल्हू किसान चलाता है और वह केवल गन्ने की फ़सल में, जाड़े में, चलता है।

तेल का कोल्हू तेली के घर के अंदर चलता है, इससे तेली का गीत उसके घर के अंदर ही गूँजकर रह जाता है। पर गन्ने का कोल्हू किसान के घर के सामने, काफ़ी खुली जगह में, चलता है। इससे उसका गीत बहुत दूर तक के वायुमंडल को अपनी मधुरता से भर देता है।

युक्तप्रान्त में दोनों प्रकार के कोल्हू प्रायः हरएक ज़िले में चलते हैं। इससे उनके गीत भी सर्वत्र मिलते हैं।

नमूने के लिये यहाँ कुछ गीत दिये जाते हैं :—

[१]

पैड़ तेरी सुहाई रै भाई वधिये !
कधी पातर नाचन आई रै—धोरी मेरा चालता चलो ॥१॥

पैड़ तेरी मे गारा रे भाई बधिये !
कधी सावन बरसै सारा रै—धोरी मेरा चालता चलो ॥२॥

साढ़ सावन के खड्ड खाये रे भाई बधिये !
वह बल कहाँ गँवाये रै—धोरी मेरा चालता चलो ॥३॥

कु ड़ी आई फागो रे भाई बधिये !
कधी बाँये बैल के भागों रै—धोरी मेरा चालता चलो ॥४॥

कोठे ऊपर कोंठरी रै, उसमे काला नाग।
काटे से तो बच गई रै, अपने पिया के भाग॥
धोरी मेरा चालता चलो ॥५॥

कोठे ऊपर कोठरी रे, खड़ी सुखाऊँ केस।
सैयाँ दिखाई दे गया रै धरे जोगी का भेस।
मै सैयाँ के सॅग चली, धरि जोगिन का भेस॥
धोरी मेरा चालता चलो ॥६॥

काया की किश्ती बनी रै, माया की हुनियार।
उठा भॅवर गुञ्जार कै रै, नैया घेरी आय॥
धोरी मेरा चालता चलो ॥७॥

राम बढ़ाये सब बढ़ै रे, बल कर बढ़ा न कोय।
बल करके रावण बढ़ा, छिन मे दिये खोय।
धोरी मेरा चालता चलो ॥८॥

गग जमन की रेती रै,
अरे ईख बिना क्या खेती रे—धोरी मेरा चालता चलो ॥९॥

(बिजनौर)

हे बैल ! तेरी 'पैड' (चक्कर) मुझे बड़ी सुहावनी लगती है। ऐसा जान पड़ता है कि पातर (नाचनेवाली वेश्या) नाचने आई है। हे मेरे बैल ! चले चलो ॥१॥

हे बैल भाई ! तुम्हारी पैड़ से रस ऐसा चूता है, जैसे सावन बरस रहा है। हे मेरे बैल ! चले चलो ॥२॥

हे बैल भाई ! असाढ़-सावन के खर तुमने खाये थे, वह बल तुमने कहाँ गँवा दिया ? हे मेरे बैल ! चले चलो ॥३॥

हे बैल भाई ! कुंडी (नाँद, जिसमें रस जमा होता है) में झाग उतरा आया है। क्या बायें बैल के भाग्य से ऐसा हुआ है ? हे मेरे बैल ! चले चलो ॥४॥

कोठे पर कोठरी है, उसमें काला नाग बैठा था। अपने पिया के भाग्य से मैं उसके काटने से बच गई। हे मेरे बैल ! चले चलो ॥५॥

कोठे पर कोठरी है। मैं खड़ी होकर केश सुखा रही थी कि मेरा सैयाँ जोगी के भेस में मुझे दिखाई दे गया। मैं जोगिन का भेस धरकर उसके साथ हो ली। हे मेरे बैल ! चले चलो ॥६॥

काया की नाव में माया की पतवार लगी है। भौंर बड़े वेग से उठा है। उसने मेरी नाव घेर ली है। हे मेरे बैल ! चले चलो ॥७॥

सब राम के बढ़ाने ही से बढ़ते हैं, अपने बल से कोई नहीं बढ़ता। अपने बल पर रावण बढ़ा, उसे राम ने पलभर में नष्ट कर दिया। हे मेरे बैल ! चले चलो ॥८॥

ईख न बोये, तो खेती क्या है ? गंगा और जमुना की रेती है। हे मेरे बैल ! चले चलो ॥९॥

इस गीत में अपने बैलों के लिये 'भाई' का प्यारा सम्बोधन, दायें और बायें दोनों बैलों के लिये कुछ रसीले ताने, पति का अपनी प्यारी पत्नी के लिये जोगी होना, पत्नी का उसके साथ जोगिन होकर चल देना, भव-सागर के तूफान का अनुभव, राम में दृढ़ आस्था और अन्त मे किसान के लिये गन्ने की खेती का महत्व आदि अनेक बातें ध्यान देने की हैं।

---

[२]

अमवा महुलिया घन पेड़ जेही रे बीचे राह परी।
रामा, जेहि बीचे ठाढ़ी एक तिरिया मनै माँ बैराग भरी ॥१॥

पूछै लागे बाट के बटोहिया अकेली घन काहे रे खड़ी।
भैया, चले जाहू बाट के बटोहिया, हमै रे तुहैं काह परी ॥२॥

की रे तुहैं सास ससुर दुख की नैहर दूरि बसै।
भैया, नाहीं हमै सास ससुर दुख नाहीं नैहर दूरि बसै ॥३॥

भैया हमरा बलम परदेस मनै माँ बैराग भरी।
बहिनी तोहरा बलम परदेस तुहैं कुछ कहि न गये ॥४॥

भैया दै गये कुपवन तेल हरपवन सेन्दुर।
भैया दै गये चॅदन चरखवा उठाइ गजओबरि ॥५॥

भैया दै गये अपनी दुहइया सतउ जिनि डोलै।
भैया चुकै लागे कुपवन तेल हरपवन सेन्दुर ॥६॥

भैया घुनै लागे चॅदन चरखवा ढहइ गजओबरि।
भैया चुकै लागी मोरि उमिरिया हरीजी नाहीं आयेन ॥७॥

(लखनऊ)

आम और महुवे के घने पेड़ों के बीच से राह पड़ी है। उस राह के बीच में एक स्त्री खड़ी है, जिसका मन बहुत उदास है ॥१॥

राह चलनेवालों ने उससे पूछा—हे स्त्री! तू यहाँ अकेली क्यों खड़ी है? स्त्री ने कहा—हे राह के चलनेवालो! अपने रास्ते जाओ; मुझसे तुम्हें क्या पड़ी है? ॥२॥

राह चलनेवाले ने नहीं माना। वह पूछने लगा—क्या तुझे सास-ससुर दुःख देते है? या नैहर दूर है? स्त्री ने कहा—न मुझे सास-ससुर दुःख देते हैं, न नैहर ही दूर है ॥३॥

हे भाई! मेरे पति-देवता परदेश गये हैं; उन्हीं की याद में मैं उदास हूँ। पथिक ने कहा—बहन! क्या तेरा पति परदेश जाते समय कुछ कह नहीं गया? ॥४॥

स्त्री ने कहा—भैया! मेरे पति मुझे कुप्पों मे तेल और सिंधौरों में सेन्दुर भर कर दे गये थे। चन्दन का चरखा भी दे गये थे और बैठने के लिये कोठरी बना गये थे ॥५॥

अपनी शपथ दिला गये थे कि सत मत छोड़ना। पर उनको गये इतने दिन बीत गये कि कुप्पों का तेल और सिँधौरे का सेंदुर समाप्त होने चला। चरखा भी घुनने लगा ॥७॥

कोठरी भी ढह रही है। हे भाई! मेरी उम्र भी चुकने लगी, पर मेरे प्राणेश्वर अभी नहीं आये ॥७॥

देखिए, एक विरहिणी का यह कैसा स्वाभाविक वर्णन है। इसमें कवि-कल्पित विरहावस्था का वह वर्णन नहीं है जिसमें विरहिणी आग उगल रही है; या बरफ़ की चद्दर की आड़ करके तब सखियाँ उसके पास खड़ी होकर उसके मिजाज़ का हाल पूछती हैं।

जिन्हें देहात का अनुभव है, उन्हें यह वर्णन बड़ा सरस जान पड़ेगा। घर के पिछवाड़े आम और महुवे के पेड़ लगाने की चाल देहात में है। उन पेड़ों के बीच से जो राह जाती है वह छायादार और बड़े ही एकान्त की होती है। स्त्री का पेड़ों के नीचे खड़ी होकर अपने प्रियतम का बिसूरना कितना करुणाजनक है, इसे सहृदय रसिक-जन ही अनुभव कर सकते हैं। ऐसे गीत उस समय के हैं जब परदा नहीं था, मन में पाप नहीं था। एक अपरिचित पथिक को अपना भाई समझकर कोई भी स्त्री अपनी मनोव्यथा बता सकती थी।

---

[३]

कौनी जुनियाँ तेली घनिया लगावै,
की कौनी जुनिया ना।
कोइलरि सबद सुनावै कि कौनी जुनिया ना ॥१॥
आधी की रात तेली घनिया हो लगावै,
कि पिछली रतिया ना।
कोइलरि सबद सुनावै कि पिछली रतिया ना ॥२॥
कोइलि के बोलतै सँवरिया उठि बैठे,
बढ़निया लैकै ना।
घर अँगना बोहारै हो, बढ़निया लैकै ना ॥३॥
अगना बोहारि साँवरि घुरवा लैं पवारै,
कि घइलना लैकै ना।
सागर पनिया को जायँ हो घइलना लैकै ना ॥४॥

घइला तो भरि साँवरि घरलीं करारवाँ हो,
कि जोहै लागीं ना।
परदेसीजी कै बटिया साँवरि जोहै लागीं ना ॥५॥
(रायबरेली)

तेली किस समय घानी लगाते हैं? कोयल किस समय बोलती है? ॥१॥

आधी रात के समय तेली घानी लगाते हैं और रातके पिछले पहर कोयल बोलती है ॥२॥

कोयल के बोलते ही सुन्दरी उठ बैठती है और फिर झाड़ू लेकर अपना घर और आँगन बुहारती है ॥३॥

आँगन बुहारकर कूड़ा वह घूर पर फेंक आती है और फिर पानी के लिये घड़ा लेकर तालाब पर जाती है ॥४॥

घड़ा भरकर सुन्दरी ने तालाब के कगार पर रख दिया और फिर वह उस राह को देखने लगी, जिससे होकर उसका पति परदेश गया था ॥५॥

इस छोटे-से गीत में कोयल की बोली पर बहू का उठना, घर की सफ़ाई करना और फिर पानी लाने जाना आदि सवेरे के काम बताकर अंत में परदेशी की बाट जोहने वाला करुण दृश्य उपस्थित करके तो गीतकार ने मनुष्य का हृदय ही निकालकर सामने रख दिया है।

वर्षा-ऋतु के गीत

युक्तप्रांत में सावन का महीना बडा सुहावना होता है। वह बरसात का मध्य होता है। घटायें उमड़ती आती हैं; गरजती-बरसती जाती हैं; पूर्वा हवा के लहरे आ-आकर जीवन को तरंगित करते रहते हैं; चारोंओर हरियाली ही हरियाली दिखाई पड़ती है; वृत्त धो उठते हैं; नदी-नाले ताल-तलैयाँ पानी की चादर से ढक जाते हैं। मोर नाचते हैं, कोयल कूकती है। क्या प्रकृति के इस वैभव का प्रभाव मनुष्य के जीवन पर न पड़ता होगा ? बहुत पडताहै।

शायद ही कोई अभागिनी बहू सावन में ससुराल में रहती हो। प्रायः सब नैहर मे आ जाती हैं। घर के पास के घने पेड़की डाल पर हिंडोला पड जाता है। महल्ले की लडकियाँ-लड़के उनपर झूलते हैं; मलार गाते हैं, कजली गाते हैं, हँसते-बोलते और आनंद मनाते हैं।

सावन में कई त्योहार पड़ते हैं। स्त्रियाँ गाती हुई निकलती हैं; रंग-बिरंग के कपडे पहनती हैं; गुड़ियों का विवाह करती हैं और गाँव को स्वर्ग बना देती हैं।

खेती का कोई विशेष काम नहीं होता; क्योंकि पानी बरसता रहता है। किसान लोग किसी चौपाल में बैठकर आल्हा सुनते हैं; रात में रामायण गाते हैं; और अपने जीवन मे वीर पुरुषों और साधु-संतों के कल्याण-कारी चरित्रों की छाप लेते हैं। सावन सचमुच बडे ही आनंद का महीना होता है।

सावन के गीतों में सबसे सुन्दर गीत हिंडोले के होते हैं। हिंडोले पर छोटे भाई के साथ बैठकर कन्यायें गाती हैं, तब उनके

कोमल कंठ से जो स्वर-लहरी निकलती है, उसे सुनकर सचराचर के प्राण स्तंभित हो जाते हैं।

मिर्जापुर में सावन मे कजली का बड़ा उत्सव मनाया जाता है।

यहाँ सावन के कुछ गीत दिये जाते हैं :—

[१]

बिरना नान्ही नान्ही पतिया अमिलि की,
बलैयाँ लेउँ बीरन ॥ १ ॥
बिरना पतरो जोरै बरिया पूत, " ॥ २ ॥
बिरना पतरी जेवै बीरन मोर, " ॥ ३ ॥
बिरना मुँगिया दरिय दरि दालि, " ॥ ४ ॥
बिरना मोतोसारी चउरे क भात, " ॥ ५ ॥
बिरना उपरा घिअन कइ धार, " ॥ ६ ॥
बिरना तेहि पै निवुल रस गार, " ॥ ७ ॥
बिरना माया जे हाँकै बयारि, " ॥ ८ ॥
बिरना भौजी डेहरि धरे ठाढ़ि, " ॥ ९ ॥
बिरना बहिनो खडी बतलाय, " ॥१०॥
बिरना देसवा भये हैं तुरकान, " ॥११॥
बिरना घाटे बाटे मोगल पठान, " ॥१२॥
बिरना धरम बचावै भगवान, " ॥१३॥
बिरना पँडित दुआरे एक नीम, " ॥१४॥
बिरना तेहिपर उतरे हैं साठि, " ॥१५॥
बिरना छोरि लेइहैं बिटिया कुँवारि, " ॥१६॥

बिरना धरम बचावैं भगवान, बलैया लेउँ बोरन ॥१७॥
बिरना सुनतै रकत भइ आँखि, " ॥१८॥
भइया थरिया दिहेनि सरकाय, " ॥१९॥
बिरना लै लिहें ढाल तरुवारि, " ॥२०॥
बिरना मुगुल की ओरी सब साठि, " ॥२१॥
मोरा भइया अकेलवइ ठाढ़, " ॥२२॥
बिरना भौजी बोलै विष बोल, " ॥२३॥
ननदा हमकाँ किहिउ अँधियार, " ॥२४॥
बिरना जूझि मरे मुगुल पठान, " ॥२५॥
मोर भइया समर जीति ठाढ़, " ॥२६॥
बिरना मइया के बहै दूधा-धार, " ॥२७॥
बिरना भउजो के हिरदा हुलास, " ॥२८॥
बिरना कोखिया बखानउँ मयरि कै, " ॥२९॥
जेकर पुतवा समर जीति ठाढ़, " ॥३०॥
बिरना मँगिया बखानउँ भउजि कै, " ॥३१॥
जेकर समिया समर जीति ठाढ़, " ॥३२॥
बिरना भगिया बखानउँ बहिन कै, " ॥३३॥
जेकर भइया समर जीति ठाढ़, " ॥३४॥

(सुलतानपुर)

इमली की नन्हीं नन्हीं पत्तियाँ हैं ॥१॥
बारी का लड़का उनसे पत्तल बना रहा है ॥२॥
उस पत्तल पर मेरा भाई जीम रहा है ॥३॥
मूँग दलकर दाल बनाई है ॥४॥
मोती-सरीखे चावलों का भात है ॥५॥

उस पर घी की धार पड़ी है ॥६॥
उस पर नींबू निचोड़ दिया गया है ॥७॥
माँ पंखा हाँक रही है ॥८॥
भावज देहली पर खड़ी है ॥९॥
बहन बात कर रही है ॥१०॥
हे भाई! सारा देश तुर्कों से भर गया है ॥११॥
रास्ते और घाट सब मुग़लों और पठानों ने घेर लिये हैं ॥१२॥
भगवान् ही अब धर्म की रक्षा करें ॥१३॥
पंडित के दरवाज़े पर नीम का पेड़ है ॥१४॥
उसके नीचे साठ मुग़ल और पठान उतरे हैं ॥१५॥
वे पंडित की क्वारी लड़की को छीन ले जायँगे ॥१६॥
हे भाई! भगवान् ही उसका धर्म बचावें ॥१७॥
यह सुनते ही भाई की आँखें रक्त के समान लाल हो गईं ॥१८॥
भाई ने थाली सरका दी ॥१९॥
दौड़कर उसने ढाल-तलवार ली ॥२०॥
मुग़लों की ओर सब साठ हैं ॥२१॥
मेरा भाई अकेला ही खड़ा है ॥२२॥
भावज ज़हर-ऐसी बात बोल रही है ॥२३॥
हे ननद! तुमने मेरे जीवन को अन्धकारमय कर दिया ॥२४॥
मुग़ल और पठान लड़े और मारे गये ॥२५॥
मेरा भाई युद्ध जीतकर खड़ा है ॥२६॥
माँ की छाती से दूध की धारा बह रही है ॥२७॥
भावज के हृदय में हर्ष उमड़ आया है ॥२८॥

माँ की कोख को धन्य है ॥२९॥
जिसका पुत्र युद्ध जीतकर खडा है ॥३०॥
भावज के सुहाग को धन्य है ॥३१॥
जिसका स्वामी युद्ध जीतकर खडा है ॥३२॥
बहन के भाग्य को धन्य है ॥३३॥
जिसका भाई युद्ध जीतकर खडा है ॥३४॥

यह गीत उस ज़माने की याद दिलाता है, जब मुग़लों के अत्याचार से हिन्दू माता-पिता का हृदय हिल उठा था। क्योंकि युवती और सुन्दरी कन्याओं को मुग़ल जबरदस्ती छीन ले जाते थे। मुग़लों का शासन था; शासकों के पास हिन्दुओं की न पहुँच थी, न सुनवाई थी और न उनसे न्याय की आशा थी। गाँवों में भयंकर आतङ्क छाया रहता था। गीतों में बहुत-सी कन्याओं के आत्म-हत्या कर लेने के प्रमाण मिलते हैं। कन्याओं की रक्षा मे बहुत-से पिताओं और भाइयों के जूझ मरने के भी वर्णन मिलते हैं। उसी समय से हिन्दुओं में कन्याओं को बहुत छोटी उम्र में विवाहिता बना देने की प्रथा चल निकली और परदे की आवश्यकता भी दृढ हो गई।

ऊपर के गीत में जिस दृश्य का चित्रण हुआ है, वह बडा ही मनोमोहक है। कभी हमारे घरों में ऐसे वीर युवक थे, जो साठ-साठ शत्रुओं से लडकर विजयी होते थे। और अपनी भुजाओं के बल पर उनको इतना भरोसा था कि, साठ शत्रु हैं, यह सुनकर भी वे विचलित नहीं होते थे और खाना छोडकर उनसे लडने को निकल पडते थे। भावज की मनोदशा भी ध्यान देने योग्य है। विजयी पुत्र के लिए माता की छाती से दूध की धारा का फूट

निकलना अनहोनी बात नहीं है। अन्त में अपने वीर पुत्र, पति और भाई को देखकर माता, स्त्री और बहन की कोख, सुहाग और भाग्य की सराहना के बहाने बहन ने प्रत्येक भाई को उत्साहित किया है कि वह इसी तरह अपनी बहन के धर्म की रक्षा करे।

---

[२]

टांड़े से मेहदी चलीवर मेहदी के लम्बे लम्बे पात;
मेहदी भीनैलै ॥१॥

लहुरा देवर मेरो लड़िला वारी, ले आयो बैल लदाय;
मेहदी भीनैल ॥२॥

लावहु सील सिलावटी वारी, रगरि रगरि मेहदी पीसहु;
मेहदी भीनैलै ॥३॥

देवरा लगावै कानी आँगुरी वारी भाउज भरि दूनूँ हाथ,
मेहदी भीनैलै ॥४॥

झमकि अँटरिया चढ़ि गईं वारी, केहि देखलाऊँ दूनू हाथ,
मेहदी भीनैलै ॥५॥

लट छूटका मेरे पाटिया वारी है कोउ लसकर जात,
मेहदी भीनैलै ॥६॥

वही लसकरिया मे यो कह्यो तेरी मइया मरी घर जाहु,
मेहदी भीनैल ॥७॥

मइया मरी हैं मरी जान दे वारी गयो है घर का वलाय,
मेहदी भीनैलै ॥८॥

वही लसकरिया में यो कह्यो वारी बहिनी मरी घर जाहु,
मेंहदी भीनैलै ॥९॥
बहिनी मरो मरि जान दे वारी बंचि गया दान दहेज,
मेंहदी भीनैलै ॥१०॥
वोहि लसकरिया मे यो कह्यो तेरी धनियाँ मरी घर जाहु,
मेंहदी भीनैलै ॥११॥
धनियाँ मरी है घरा खोय,गया वारी लड़िकै गए है खराब,
मेंहदी भीनैलै ॥१२॥
कागद फेकै चउतरा मसिहायी दिहिनि ढरकाय,
मेंहदी भीनैलै ॥१३॥
लेहु राजा आपनि चाकरी वारी धनिया मरी घरा खोय,
मेंहदी भीनैलै ॥१४॥
घरा खोय गया, वारो लड़िके गए हैं खराब,
मेंहदी भीनैलै ॥१५॥
मइया के देखै तलाव पर वारी बहिन चने के खेत,
मेंहदी भीनैलै ॥१६॥
लड़िके झूलै लै पालना वारी वोई धना सीझहीं रसोईं,
मेंहदी भीनैलै ॥१७॥
झमकि अटरिया चढ़ि गईं वारी खोलि देखलावै दोउ हाथ,
मेंहदी भीनैलै ॥१८॥
कवन छलहारिन छल किया वारी छल से लिया है बोलाय
मेंहदी भीनैलै ॥१९॥

अइसा काम न कीजीए वारी आई रोजी फिरि जाय,
मेह्दी भीनैलै ॥२०॥

(अलीगढ़)

टाँड़े से मेंहदी चली। उसके पत्ते लम्बे-लम्बे हैं ॥१॥

मेरा छोटा देवर बड़ा लाडला है, वह बैल पर लादकर मेंहदी लाया। मेंहदी भिन रही है ॥२॥

सिल-सिलवट लाओ। रगड़ रगड़कर मेंहदी पीसो ॥३॥

देवर ने छोटी उँगली में लगाया और भावज ने दोनों हाथ भरकर ॥४॥

बहू झमककर अटारी पर चढ़ गई। उसे शौक चर्राया कि हाथ की मेंहदी किसे दिखलाऊँ ॥५॥

वह लट छिटकाकर खड़ी हुई। उसने देखा, कोई लश्कर (फौज) जा रही है ॥६॥

किसी से उसने कहा—हे ! उस लश्कर में (उसके पति को) यों कहना कि तुम्हारी माँ मर गई है, घर जाओ ॥७॥

सुननेवाले ने कहा—माँ मर गई है, मर जाने दे। घर की बला गई ॥८॥

बहू ने कहा—अच्छा, यों कहना कि बहन मर गई, घर जाओ ॥९॥

सुननेवाले ने कहा—ऊँः; बहन मर गई, मर जाने दे। दान-दहेज बचा ॥१०॥

अच्छा, उस लश्कर में यों कहना कि तुम्हारी स्त्री मर गई; घर जाओ ॥११॥

स्त्री मर गई; गृहस्थी चौपट हो गई; लड़के बेसँभाल के हो गये ॥१२॥

यह सुनकर पति ने काग़ज़ चबूतरे पर फेंक दिया और स्याही ढुलका दी ॥१३॥

हे राजा! अपनी नौकरी लो। स्त्री मर गई, घर बिगड़ गया ॥१४॥

घर बिगड़ गया; लड़के खराब गये। पर पति ने (घर आकर) माँ को तालाब पर देखा, और बहन को चने के खेत में ॥१६॥

उसने देखा—लड़के पालने में झूल रहे हैं और बहू रसोई बना रही है ॥१७॥

बहू झमककर अटारी पर चढ़ गई और वहाँ से उसने पति को मेंहदी से लाल हुये अपने दोनों हाथ दिखलाये ॥१८॥

पति ने कहा—किस छल करनेवाली ने छल किया और मुझे छल से बुला लिया ॥१९॥

हे प्यारी! ऐसा काम नहीं करना चाहिये। लगी हुई जीविका इससे चली जाती है ॥२०॥

इस गीत में प्रियतम को एक अल्हड़ नवेली बहू की मेंहदी दिखाने की उत्सुकता और दाम्पत्य-प्रेम की छटा दिखाई गई है।

यह गीत हिंडोले पर गाने का है।

———

[३]

करूँ कौन जतन अरी ए री सखी
मोरे नयनों से बरसे बादरिया ॥१॥
उठी काली घटा बादल गरजै,
चली ठंडी पवन मेरा जिया लरजै ॥
थी पिया मिलन की आस सभी,
परदेस गये मोरे साँवरिया ॥२॥
सब सखियाँ हिंडोले झूल रहीं,
खड़ी भीजूँ पिया तोरे आँगन मे ॥
भर दे रे रँगीले मनमोहन
मेरी खाली पड़ी है गागरिया ॥३॥

(फ़र्रुखाबाद)

हे सखी ! क्या उपाय करूँ ? मेरे नेत्रों से घटा बरस रही है ॥१॥

काली घटा उठी है, बादल गरज रहे हैं, ठंढी हवा चल रही मेरा जी काँप रहा है। प्रियतम के मिलने की आशा थी, वे परदेश चले गये ॥२॥

सब सखियाँ हिंडोला झूल रही हैं। हे प्रियतम ! मैं तुम्हारे आँगन में खड़ी भीग रही हूँ। हे रँगीले मनमोहन ! मेरी गगरी खाली पड़ी है, इसे भर दो ॥३॥

बड़ा भाव-पूर्ण गीत है। यह खेत निराते समय मलार राग में जब गाया जाता है, तब सारी दिशायें मतवाली हुई-सी जान पड़ती हैं।

यह गीत मुझे फर्रुख़ाबाद से मिला है; पर सूबे भर में गाया जाता है।

---

[४]

मोरे पिछवरवाँ लिलहिया कै बखरिया,
तनिक पिया चूनरी रँगउता ॥१॥
चुनरी रँगत मोरे छुटाला पसिनवाँ
तनिक धना बेनिया डोलवतू ॥२॥
बेनिया डोलत मोरी मुरकी कलइया,
तनिक धना बायेदा बोलवता ॥३॥
बयदा तो अइलै पलँग चढ़ि बइठे,
से माँगै लागे साठी हो रूपयवा ॥४॥
कहाँ पावो बयदा हो साठी रुपइया,
मेहरिया भइलीं जीव कै जावलवा ॥५॥
जौ तोरे पियवा हो जीव कै जवलवा
तौ हम चली जावै हो नईहरवा ॥६॥
जौ तुहूँ जावू धना अपने नैहरवा,
हमहुँ चला अउबै हो ससुररिया ॥७॥
जौ तुहूँ पीया मोरे जावा ससुररिया
हमहुँ होवै ताले कै माछरिया ॥८॥
जौ तु घना होबिउ ताले कै मछरिया,
से हम होवै ताले कै बाकुलवा ॥९॥

जौ तु होवेउ पिया ताल़े कै बकुलवा,
से हम होवै बन कै रे चीरइया ॥१०॥

जौ तूँ होबिउ धना बन कै चिरइया,
हमहुँ होवै बन कै रे बाहेलिया ॥११॥

जीतल ए राजा ! तुहईं लड़इया,
से हम धना हारीं हो साजनवा ॥१२॥

(मिर्जापुर)

मेरे पिछवाड़े रँगरेज का घर है। हे प्यारे पति ! एक चूँदड़ी रँगा देते ? ॥१॥

चूँदड़ी रँगने में मेरे पसीना छूटता है। हे प्यारी ! ज़रा बेनिया (बाँस की बनी पंखी) हाँक देती ॥२॥

बेनिया हाँकने से तो मेरी कलाई मुरक गई। वैद्य को बुलाओ ॥३॥

वैद्य आये। पलँग पर चढ़कर बैठे। साठ रुपये माँग रहे हैं ॥४॥

हे वैद्य ! साठ रुपये कहाँ पाऊँ ? स्त्री जी का जवाल हो गई ॥५॥

हे प्रियतम ! मैं तुम्हारे जी का जवाल हूँ, तो मैं नैहर चली जाऊँगी ॥६॥

हे धन ! तुम नैहर चली जाओगी, तो मैं ससुराल चला आऊँगा ॥७॥

हे प्रियतम ! तुम ससुराल चले जाओगे, तो मैं ताल की मछली हो जाऊँगी ॥८॥

हे धन ! तुम ताल की मछली हो जाओगी, तो मैं ताल का बगुला बन जाऊँगा ॥९॥

हे प्रियतम ! तुम ताल के बगुला बन जाओगे, तो मैं बन की चिड़िया होकर उड़ जाऊँगी ॥१०॥

हे धन ! तुम बन की चिड़िया होकर उड़ जाओगी, तो मैं बन का बहेलिया (चिड़िया फँसानेवाला) हो जाऊँगा ॥११॥

हे साजन राजा ! इस लड़ाई में तुम्हीं जीते और मैं हारी ॥१२॥

इस गीत में दम्पत्ति का एक दूसरे के प्रति हार्दिक प्रेम दिखाया गया है।

यह गीत हिंडोले पर गाया जाता है। इसका नाम कजली है। इसके गाने का स्वर वर्षा-ऋतु में बहुत ही मधुर लगता है।

---

[५]

धीरे बहु नदिया तै धीरे बहु,
मोरा पिया उतरइ दे पार ॥१॥
काहेन की तोरी नइया रे, काहे की करुवारि।
कहाँ तोरा नइया खेवइया, के धन उतरई पार ॥२॥
धरमैं कइ मोरी नइया रे, सत कइ लगी करुवारि।
सैयाँ मोरा नइया खेवइयो रे, हम धन उतरब पार ॥३॥

स्त्री कहती है—हे नदी ! तू धीरे-धीरे बह। मेरे पति को पार उतरने दे ॥१॥

नदी ने पूछा—तेरी नाव किस चीज की है? पतवार किस चीज का है? तेरी नाव का खेनेवाला कौन है? और कौन स्त्री पार उतरेगी? ॥२॥

स्त्री उत्तर देती है—मेरी नाव धर्म की है, जिसमें सत का पतवार लगा है। नाव का खेनेवाला मेरा स्वामी है, और मैं स्त्री पार उतरूँगी ॥३॥

यह गीत जिस समय मन्द-मन्द स्वर से, मलार राग में, गाया जाता है, हृदय तरंगित हो उठता है। स्त्री-कवि के रचे हुए इस भावपूर्ण गीत की तुलना हिन्दी के उच्च से उच्च कवि की कविता से की जा सकती है।

---

[६]

टुटही मड़इया बुनिया टपकइ रे,
के सुधि लेवै हमार ॥१॥

जेठा छवावइँ आपन बँगला रे,
देवरा छवावइँ चउपारि।
हमरा मँदिलवा केन छवइहैं रे,
जेकर पियवा बिदेस ॥२॥

स्त्री कहती है—झोपड़ी टूटी हुई है। बूँद-बूँद टपक रही है। मेरी सुध कौन लेगा? ॥१॥

जेठ अपना बँगला छवा रहे हैं और देवर अपनी चौपाल। हा! मेरा घर कौन छवायेगा? जिसका प्रियतम परदेश में है ॥२॥

---

[७]

छोटी मोटी दुहनी दुधे कै
  बिना रे अगिनि बाफ लेइ। बलैयाँ लेउँ बीरन ॥
इहै दूध पियै बीरन मोरा,
  बिरना लड़ै मुगलवा के साथ। ,, ॥

बहन कहती है—छोटी-सी दुहनी (जिस बर्तन मे दूध दुहा जाता है) है, उसमें ऐसा ताजा दूध भरा है कि आग बिना ही उसमें से भाप निकल रही है। अहा! यही दूध मेरा भाई पीता है, जो मुगलों से लड़ता है।

कैसा मर्म-वेधी भाव है। एक समय था, जब हरएक घर में कन्याओं को ज़बरदस्ती छीन ले जानेवाले मुग़लों से लड़ने के लिये बच्चे तैयार किये जाते थे। खाने-पीने के पदार्थों के साथ साहस और शौर्य की कल्पना कैसी मनोहर है!

वसन्त-ऋतु के गीत

वसन्त के गीत वसन्त-पंचमी ही से शुरू हो जाते हैं। गाँव के लोग ज़्यादातर रात के समय महल्ले में किसी पड़ोसी की बैठक में जमा हो जाते हैं और देर तक ढोलक, मजीरा और करताल पर होली, चौताल आदि गाने गाया करते हैं।

फागुन के प्रायः सभी गीत शृंगार-रस के होते है। वसन्त-ऋतु में नवीन रस की वृद्धि होती भी है। अतएव उसका प्रमाण किसानों के गीतों मे मिलना बिलकुल स्वाभाविक है।

वसंत के गीत चैत तक चलते हैं। चैत के गीतों के स्वर फागुन के गीतों के स्वर से भिन्न होते हैं। चैत के गीतों के स्वर में विशेष कोमलता होती है।

यहाँ वसंत-ऋतु के गीतों के कुछ नमूने दिये जाते हैं:—

[१]

पूजन चली गौरि भवानी, जनक सुकुमारी।
फल वो फूल दूब दधि अच्छत धरि कचन की थारी॥
सिया सङ्ग एक सखी सयानी सोइ देखि गई फुलवारी॥१॥
वाही समय सुमन बन देखन गये रहे दोउ भाई।
देखो सखि अतुलित दोउ बालक,
तहाँ काम कोटि छवि छाई॥२॥
भाँति भाँति की पाँत लगी है, रुचिर फुली फुलवारी॥
कोकिल बेनु सुधा सम बोलत,
तहाँ घूमि रहे बनवारी॥३॥

कठिन कठोर पिनाक शम्भु के पिता परन अति भारो।
तुलसिदास बलि आस चरन के हो,
तहाँ कठिन स्वयम्बर ठानी ॥४॥

यह 'चौताल' कहलाता है। अर्थ स्पष्ट है।

---

[२]

काहे फिरत बौरानी हो रामा, सखी नैहर में।
आइ गये तोरे गौने दिनवाँ
बहुत रहत अलसानी हो रामा॥
खेलत खात बरस बहु बीते
सो सब ह्वै हैं कहानी हो रामा॥

---

[३]

कौना मास फूलेला गुलबवा हो रामा,
कि कौना रे मासे॥
बेला फूले चमेली फूले अवरु फूलेला कचनरवा हो रामा॥
गेदवा जो फूले रामा माघ रे फगुनवाँ
चैत मासे फूले गुलबवा हो रामा॥

वीर-गाथा—आल्हा

राह-चलतों के गीत छोटे-छोटे होते हैं, पर चौपाल में गाये जानेवाले गीत बड़े लंबे-लंबे होते हैं। उनको वीर-गाथा कहा जा सकता है।

भारतवर्ष के हरएक प्रांत में वीर-गाथाएँ मिलती हैं। पंजाब में हीर-राँझा, मारवाड़ में ढोला-मारू, युक्तप्रांत में आल्हा, बिहार में लोरिक और छत्तीसगढ़ में ढोला और रसालू बहुत ही लोकप्रिय गाथाएँ हैं।

युक्तप्रांत में आल्हा एक कंठस्थ काव्य है। आल्हा का छंद, उसके गाने का स्वर, साथ के बाजे, सब में निरालापन होता है।

आल्हा वीर-रस-प्रधान काव्य है। यह गाँव की किसी बड़ी चौपाल में,यदि पानी न बरसता हो तो किसी खुले मैदान या बाग में, गवाया जाता है। आल्हा गानेवाले को गाँव के लोग घेरकर बैठ जाते हैं और उसके मुँह की ओर टकटकी लगाकर, उसके मुँह से निकली हुई एक-एक कड़ी का रस पीने लगते हैं।

आल्हा गाना आजकल एक पेशा-सा हो गया है। गानेवाले बरसात शुरू होते ही घर से निकलते हैं। गाँवों में पहुँचकर किसी ज़मींदार या शौकीन सेठ-साहूकार के यहाँ डेरा डालते हैं। उनकी ख़ोराक बँधी हुई है—एक रुपया रोज़ और दोनों वक्त पक्का खाना। गाँववालों को ख़बर हो जाती है और आल्हा की ढोलक की एक ख़ास तरह की पहचानी हुई आवाज़ सुनते ही वे घर के कामकाज छोड़-कर आ जुटते हैं। गानेवाला सुननेवालों से कुछ ऊँचे, खाट पर या

तख्ते पर, बैठकर गाता है। ढोलक वह खुद बजाता है। ढोलक के साथ मजीरा भी कभी-कभी बजाया जाता है। मजीरा बजानेवाला ढोलक से भिड़कर बैठता है।

आल्हा का एक अध्याय 'पँवारा' कहलाता है। यही मराठी में 'पोवाड़े' कहा जाता है।

जितनी भीड़ गाँवों में आल्हा सुनने के लिये होती है, उतनी रामायण, महाभारत और भागवत सुनने के लिये भी नहीं होती। आल्हा को यह लोक-प्रियता उसकी सामयिकता के कारण मिली है। एक तो उसकी भाषा बिलकुल देहात की होती है; दूसरे विषय भी वीर-रस का होता है, जो सालभर तक खेतों में चुपचाप काम करते करते थके हुये किसानों में नया रस भरता है। इससे आल्हा के लिये उनका आकर्षित होना बिलकुल स्वाभाविक है।

कहा जाता है कि पहले-पहल महोबे के राजा परिमाल के राज-कवि जगनिक ने आल्हा बनाया। पर आजतक उसकी कोई प्रति कहीं प्राप्त नहीं हुई। अब तो जितने गानेवाले हैं, सब अपना-अपना आल्हा अलग गाते हैं। इस तरह यह एक चलता-फिरता महाकाव्य बन गया है। और संसार में शायद यह अपने ढंग का एक ही महाकाव्य है भी।

इस महाकाव्य का कोई स्थिर स्वरूप नहीं है। इससे यह कभी मर नहीं सकता। भाषा का चोला बदलता हुआ यह सदियों से समय के साथ चला आ रहा है।

आल्हा में महोबे के राजा परमाल के दो वीर सरदार आल्हा और ऊदल की लड़ाइयों के वर्णन गाये जाते हैं। दोनों भाई बडे

वीर थे और ऐतिहासिक व्यक्ति हैं। उनका ज़िक्र 'पृथ्वीराज रासो' में मिलता है।

आल्हा में यद्यपि बावन लड़ाइयों का हाल गाया जाता है, पर वह कितना बड़ा काव्य है, इसका हद-हिसाब नहीं है। यह महीनों गाया जाता है; तो भी कुछ गाने के लिये रह ही जाता है; क्योंकि गानेवाला होशियार हो तो वह छंद बनाता और गाता चलता है। आल्हा गानेवाले प्रायः अपढ़ होते हैं और यह सचमुच ताज्जुब की बात है कि वे कभी-कभी महाकवियों से ज़्यादा ऊँची उड़ान तक उड़ जाते हैं।

आल्हा यद्यपि उस ज़माने का काव्य है, जब भारत में हिंदुओं का राज्य था। पर आल्हा में कई मुसलमान भी बड़े सच्चे और बहादुर साथियों की तरह अपने मित्रों की सहायता करते हुए गाये गये हैं, इससे हिन्दू-मुसलमान दोनों आल्हा को बड़े चाव से सुनते हैं।

यहाँ 'नदी बेतवै की लड़ाई' का एक अंश नमूने के तौर पर दिया जाता है:—

एकबार दिल्ली के राजा पृथ्वीराज ने बेतवा नदी के घाट पर कनौज के राजा जयचंद के भतीजे लाखन को घेर लिया था। लाखन ऊदल का बड़ा मित्र था और महोबे जा रहा था।

पृथ्वीराज की सेना बड़ी भारी थी। लाखन के साथी कुछ देर तक लड़कर भाग गये और लाखन पृथ्वीराज की सेना में घिर गया। यह ख़बर आल्हा-ऊदल की माता देवलदेवी को मिली, तब उसने अपने दोनों पुत्रों को लाखन की मदद के लिये भेजा। उधर अकेले पड़कर भी लाखन ने बड़ी वीरता दिखलाई।—

सुमिरन 'करके अजैपाल को, लैकै रामचन्द्र को नाम।
खैंचि सिरोही लाखनि राना, समुहे गोल गये समुहाय।
जैसे भिड़हा भेड़न पैठै, जैसे सिंह बिडारै गाय।
तैसेइ लाखनि दल में पैठे, रन मे कठिन करै तरवारि।
पान तमोली जैसे कतरै, जैसे खेती लुनै किसान।
सुआ सोपारी जैसे कतरै, त्यो दल काटि करो खरिहान।
डेढ़ पहर भर चली सिरोही, नदिया बहीं रकत की धार।
देवि शारदा दहिने हुइ गइ, मुर्चा हटो पिथोरा क्यार।
अकिले लाखनिकी डपटिन मे, कोई कुँवर न आड़ो पाँव।
भगे सिपाही दिल्ली वाले, अपने डारि डारि हथियार।
हियाँ की बातै हियनैं छाड़ो, अब आगे की सुनौ हवाल।
घोडा प्यावन रुपना बारी, नदिया बितवै पहुँचो जाय।
पानी लाल देखि नदिया को, तब ऊँचे चढ़ि देखन लाग।
बिजुली चमकै ज्यो बादल मे, तस रन चमकि रही तरवारि।
देखि हाल यह रुपना चलिभै, और डेरन पर पहुँचो जाय।
देवै ठाढ़ी थी तम्बू मे, सो रुपना से पूछन लागि।
काहे अनमने हो रूपन तुम, सो तुम साँची देउ बताय।
बोलो रुपना तब उदास हुइ, माता कछु कहो ना जाय।
मनहि हमारे अस आवत है, मारे गये कनौजो राय।
बिकट लड़ाई भइ नद्दी पर, नदिया बहो रकत की धार।
देवै चलि भइ तब तॅबुआ से, औ ऊदन तै पहुँची जाय।
सूरत देखी जब माता की, ऊदन तुरतै कियो प्रणाम।

बोलो देवै तब ऊदन से, बेटा सुनौ हमारी बात।
साथ तुम्हारे लाखनि आये, सो तुम अकिले दए पठाय।
खबरि लैआओ तुम लाखनि की, नदिया कठिन चलै तरवारि।
रूपना बारो से सुधि मिल गइ, दलमें घिरे कनौजी राय।
जो कहुँ लाखनि मारे जैहैं, तौ जग हुइहै हँसी तुम्हार।
हम समुझायो बहु आल्हाको, उन नहिं मानी बात हमारि।
यह सुनि ज्वाब दओ ऊदन ने, माता समुझि लेउ मन माहिं।
आल्हा पठवै तो जावै हम, जेठो भाई पिता समान।
बिन आज्ञा के हम ना जैहैं, माता बचन करो परमान।
बड़ो बीर हैं लाखनि राना, पाँडव नकुल केर अवतार।
परिहैं असमो जब लाखनि कों, तब वह खबर दिहैं पहुँचाय।
फिरि समझावो रनि देवै ने, बेटा सुनो बात धरि ध्यान।
बारह रानिन को इकलौता, औ सोरह को सर्व सिंगार।
आस लकड़िया है जैचन्द की, सो तुम अकिले दए पठाय।
रानी तिलका औ जैचन्द ने, सौपो तुमहिं मान विश्वास।
सो तुम बैठे हौ सुख से यहँ, ऐसो तुम्हैं मुनासिब नाहिं।
मित्र तुम्हारो मारो जैहैं, तुमको बार बार धिक्कार।
कही न मानत तुम माता की, हे कलजुगहा पुत्र हमार।
हुक्म न मानौ तुम दोनो ने, हमरे जीवन को धिक्कार।
अब हम जानी अपने मनमाँ, दोनौं पुत्र कपूत हमार।
देखौ करनी रामचन्द्र की, जिनको नाम प्रगट जग माहिं।
सौती माता की आज्ञा से, चौदह वर्ष रहे वन माहिं।

होती बिटिया जो मेरे यक, केहु राजा घर देति बियाहि।
कुम्मक लौटी त्यहि राजा की, औ लाखनि को लेति बचाय।
सुनिके ऊदन लज्जित हुइ गए, औ माता से कहो सुनाय।
हमहि बुलाओ नहि लाखनिने, कैसे खबरि लेयँ हम जाय।
यह सुनि देवै उठि ठाढ़ी भइ, औ सुनमाँ पै पहुँची जाय।
हाल सुनाओ सब लाखनिको, औ आल्हा को कहो स्वभाव।
हम समुझाओ दोउ भैयन को, उन नहि मानौ हुक्म हमार।
बात हमारी अब मानौ तुम, औ ऊदन को देउ पठाय।
यह सुनि सुनमाँ बघऊदन को, बाँदिहि भेजि लओ बुलवाय।
तुरत प्रणाम कियो ऊदन ने, सुनमाँ चौकी दई डराय।
बैठे ऊदन जब चौकी पर, तब सुनमाँ ने कहो सुनाय।
माता देवै सी ना मिलिहैं, भाई न मिलै बीर अलिखान।
मित्र कनौजी सो ना मिलिहैं, चाहै धरौ कोटि अवतार।
छाँड़े बैठक जिन जैचन्द की, छाँड़ी गङ्ग केर अस्नान।
छाँड़ा दर्शन फूलमती के, छाँड़ी महल पदमिनी नारि।
सग तुम्हारो उन छाँड़ा ना, आये यहाँ पराये काज।
प्रीति फतिंगा की साँची जस, जो जरि जात दिया के साथ।
प्रीति कनौजी की साँची है, जिन नहिं तजो तुम्हारो साथ।
पूरे च्त्री जो दुनियाँ मे, सो दै देत आपनो प्रान।
लाखनि सकट सहत शीश पर, पै नहिं खबरि देत सकुचाय।
लावौ खबरि जाय नदिया की, जहँ घिर गये कनौजी राय।
नाहि होय इच्छा तुम्हरी जो, तौ तुम सुनो हमारी बात।

भेष जनानो धरि बैठो घर, हमका देउ ढाल तरवारि।
घोड़ा बेंदुला हमको दै देउ, औ सब कपड़ा देउ मँगाय।
अबहीं जैहैं हम नदिया पर, लैहैं खबरि कनौजी क्यार।*

अर्थ स्पष्ट है। आल्हा में वीर और शृङ्गार-रस का अच्छा परिपाक हुआ मिलता है। आल्हा-काव्य के स्त्री-पुरुष, मालिक-नौकर सभी वीर होते हैं।

---

* आल्ह-खंड से उद्धृत।

ग्राम-कथायें

ग्राम-गीतों में गृहस्थ के एक कुटुंब के मन की तरंगों के मिले-जुले चित्र मिलते हैं, और ग्राम-कथाओं में एक-एक व्यक्ति का चरित्र अंकित होता है।

गाँवों मे छोटी और बड़ी अनेक तरह की कथाये प्रचलित हैं। कुछ मे किसी के प्रेम और विरह की और कुछ में सतीत्व-रक्षा, वीरता, शरणागत की रक्षा, वैराग्य और आत्मत्याग की कथायें होती हैं।

कुछ सुप्रसिद्ध प्राचीन कथाओं के भी गीत मिलते हैं। जैसे, सरवन, सीता-वनवास, कृष्ण-सुदामा, गोपीचंद, भरथरी और राजा ढोलन आदि।

गाँव में जब कोई अद्भुत घटना घटती है, तब तत्काल उसके गीत भी बन जाते हैं। शायद ही इस सूबे का कोई पुराना गाँव ऐसा मिले, जहाँ कोई न कोई घटना गीत-बद्ध न हुई हो।

कहीं-कहीं लड़ाइयों के गीत भी मिलते हैं। जैसे, सुलतानपुर जिले में कालाकाँकर के राजा और गोरखों की लड़ाई का गीत, जो १८५७ मे हुई थी, मिलती है।

सती होनेवाली या सत की रक्षा के लिये किसी तरह प्राण दे देनेवाली देवियों के गीत तो इफ़रात मिलते हैं।

ग्राम कथाओं के गीत चक्की पर और खेत निराते समय भी गाये जाते हैं।

यहाँ नमूने के तौर पर कुछ गीत दिये जाते हैंः—

[१]

कहवाँ उपजी पुरइन कहवाँ घोघिला सिँवार।
कहवाँ उपजे खँड़ेरइया उधैभवना के बाप ॥१॥
तलवै उपजी पुरइन नदिया घोघिला सिँवार।
माया कोखी उपजे खँड़ेरइया उधैभवना के बाप ॥२॥
मायाजी पोवा हैं पूरी बहिनी औटा है दूध।
खाइ न लेउ खँड़ेरइया जाइ का है बड़ी दूर ॥३॥
पहिलै कौर उठाइन निकला माछी औ बार।
दूसरै कौर उठाइन तो अहिरै लावा गोहार ॥४॥
छिकतै घोड़वा पलानेनि छिकतै भै असवार ॥५॥
छिँकतै पैठे रन मे ह्वैगे गीध मसान।
गरुहे तो राजा तिलवई ॥६॥
घोड़वा के काटौ चारों खुरी दनवाँ विप देउँ मिलाय।
कहवाँ गवाँये खँड़ेरइया, गरुहे तो राजा तिलवई ॥७॥
काहे कटवे चारो खुरी काहे दनवाँ विप देउ मिलाय।
तोहरे पुतवा चुलवुल पैठै रन धवार,
ह्वैगे गीध मसान। गरुहे तो राजा तिलवई ॥८॥
पइयाँ मै लागौ सासु बड़ैतिन,
तोहरो पैटरिया मे चुंदरी मोहि चुनि पहिराव।
मोहि तो चलें इन्द्रासन तोहरे पुतवा के साथ।
मारि परी जमधरना कै उन्ही तरवार।
गरुहे तो राजा तिलवई ॥९॥

ननद गुसाँइन भौजइया तोहरी लागौं
तोहरी कजरौटी मे काजर, मोरि आँखि भरि देउ।
मोंहि तो चले तोहरे भइया के साथ,
मारि परौं जमघरना कै उबही तरवार।
गरुहे तो राजा तिलवई ॥१०॥

जेठानी गुसाँइन देवरनिया तुमरी इतना जस लेउ।
तोहरी अँगरौटी मे सेंदुर मोरि माँग भरि देउ।
मोंहिं तो चले तोहरे देवरा के साथ।
मारि परौ जमघरना के उबही तरवार।
गरुहे तो राजा तिलवई ॥११॥

रोवै अटहिन पटहिन रोवै कुँइयाँ पनिहारि।
रोवै लछिया तँबोलिन जेकर पनवा सुखान।
गरुहे तो राजा तिलवई ॥१२॥

(रायबरेली)

पुरइन कहाँ उपजी ? घोंघा और सेवार कहाँ उपजे ? और उदयभानु के पिता खांडेराय कहाँ जन्म लिये ? ॥१॥

ताल मे पुरइन उपजी; नदी में घोंघा और सेवार उपजे; और माता की कोख से उदयभानु के पिता खांडेराय ने जन्म लिया ॥२॥

माँ ने पूरी बनाई; बहन ने दूध औटा; हे खाड़ेराय ! खा न लो ? बड़ी दूर जाना है ॥३॥

खाँडेराय ने पहला कौर उठाया। उसमे मक्खी और बाल निकले। दूसरा कौर उठारा, उसी वक्त अहीर ने 'गोहार' (गायों के हरण किये जाने की पुकार) लगाई ॥४॥

घोड़ा पलानते वक्त और घोड़े पर सवार होते वक्त भी छींक हुई। खाँडेराय रण में पैठे, तब भी छींक हुई। वे गीधों और श्मशान के आहार हो गये। हाय! तिलवई के गर्वीले राजा ॥५, ६॥

घोड़ा खाली पीठ रण से भागकर आया। उसे देखकर खाँडे-राय की माँ ने कहा—घोड़े! मैं तुम्हारे चारों सुम कटवा दूँगी और दाने में विष मिलवा दूंगी। तूने तिलवई के गर्वीले राजा खाँडेराय को कहाँ गँवाया? ॥७॥

घोड़े ने कहा—चारों सुम क्यों कटाओगी? और दाने में विष क्यों मिलवाओगी? तुम्हारे पुत्र बड़े चुलबुले हैं। बिना आगा-पीछा देखे भयंकर रण में पिल पड़े थे। हाय! तिलवई के गर्वीले राजा गिद्धों और श्मशान के आहार हो गये ॥८॥

खाँडेराय की स्त्री ने कहा—हे बढ़ैतिन (बड़ा हित करने वाली) सास! तुम्हारी पेटारी में चूँदरी है, चुनकर मुझे पहनाओ। मुझे तो तुम्हारे पुत्र के साथ इन्द्रलोक जाना है। या तो जमध-रना से या खुली तलवार से मारकर अपना अंत कर लूँगी। हाय! तिलवई के गर्वीले राजा ॥९॥

हे ननद! मैं तुम्हारी भौजाई हूँ। अपने कजरौटे का काजल मेरी आँखों में भर-भरकर दे दो। मुझे तुम्हारे भाई के साथ जाना है। या तो जमधरना से या खुली तलवार से मैं अपना अंत करूँगी। हाय! तिलवई के गर्वीले राजा ॥१०॥

हे जेठानी! मैं तुम्हारी देवरानी हूँ। इतना यश लो कि अपनी इंगुरौटी के सिंदूर से मेरी माँग भर दो। मुझे तुम्हारे देवर के साथ जाना है। हाय! तिलवई के गर्वीले राजा ॥११॥

महलवालियों से लेकर पनिहारिन तक रो रही हैं। लछिया

तम्बोलिन भी रो रही है, जिसका पान अब सूख जायगा। हाय! तिलवई के गर्वीले राजा ॥१२॥

जान पड़ता है, खाँड़ेराय की स्त्री सती हो गई। गाय की गोहार लगना पुराने समय के क्षत्रियों का एक ऐसा कर्तव्य माना जाता था, जिसे कोई अच्छे कुल का क्षत्रिय छोड़ नहीं सकता था। खाँडेराय की आलोचना घोड़े ने कर ही दी है। पर घोड़े और गधे यह नहीं समझ सकते कि शत्रुओं से अकेले लड़कर खाँडेराय कहीं विजयी होते तो उनको कितना सुख होता।

---

[२]

राजा अजीतसिंह के भई एक कन्या,
नाम धराइन दौलत देवी हो राम ॥१॥
बारह बरिस राजा पोखरा खोदावैं,
वहिमाँ पानी नाहीं निकरे, हो राम।
धाउ तोहूँ नौवा धाउ तोहूँ बरिया,
काशीजी के पंडित लै आवो हो राम ॥२॥
बैठौ पडित चन्दन चौकिया,
बाँचहु करम की रेख हो राम।
थार भरि मोती सुरुख दुसाले
सोने का टका दछिना देहौं हो राम ॥३॥
लौटि पौटि पडित पोथिया बिचारै,
पोखरा माँगै दौलत बेटी हो राम।

पोथी बाँचत पंडित अँसुवा जो ढारै,
राजा से कहत जीभ दावि हो राम ॥४॥

काह कहौ मैं राजा अजीतसिंह,
पोखरा माँगै दौलत बेटी हो राम।
द्वारे से राजा भीतर गये धीरे धीरे,
बैठें सीस नवाय हो राम ॥५॥

पूँछन लागीं अजीतसिंह रनियाँ,
कौन सकट राजा जियरा हो राम।
काह कहौ मैं रनिया सतवन्ती,
पोखरा माँगइ दौलत बेटी हो राम ॥६॥

दसहि महीना रानी उदर मे राख्यो,
सात सोत दूध पिआयहु हो राम।
दहिने हाथ रानी दौलत उठाइन,
राजा को दिहिन पकराय हो राम ॥७॥

धावो तुम नाउन धावो तुम वारिन,
नगर बुलौवा दै आवो हो राम।
पोखरा के आसपास लागी कचेहरी,
राजा कुस पैंती पहिरिन हो राम ॥८॥

पडित बैठिके सकलप वोलैं,
दौलत पोखरा तर बोरिन हो राम।
जैसेन दौलत को पोखरा मे डारिन
पनियाँ उठो हहराय हो राम ॥९॥

पोखरा के आसपास रोवैं अजीतसिंह,
हमरे अकेवल धेरिया हो राम।
पोखरा के आसपास समुझावै सतवन्ती,
नाम तुमरा दौलत राखिन हो राम ॥१०॥
(सीतापुर)

राजा अजीतसिंह के एक कन्या हुई; जिसका नाम दौलत देवी रक्खा गया ॥१॥

राजा ने बारह वर्ष तक एक तालाब खुदवाया, पर उसमें पानी नहीं निकला। हे नाऊ! दौड़ो; हे बारी! दौड़ो, काशीजी से पंडित बुला लाओ ॥२॥

हे पंडित! चंदन की चौकी पर बैठो और मेरे भाग्य मे क्या लिखा है, बाँचो। आपको थाल भरकर मोती, लाल रग का दुशाला और सोने की मुहरें दक्षिणा मे दूँगा॥ ३॥

पंडित ने पन्ने उलट-पलटकर पोथी मे देखा, कि तालाब तो दौलत देवी की बलि माँगता है। पोथी बाँचकर पंडित आँसू गिराने लगे और जीभ दबाकर उन्होंने राजा से कहा ॥४॥

हे राजा अजीतसिंह! मै क्या कहूँ? तालाब तो दौलत बेटी की बलि माँगता है। राजा यह सुनकर बाहर से धीरे-धीरे भीतर गये और सिर नवाकर बैठे ॥५॥

अजीतसिंह की रानी पूछने लगी—हे राजा! जी पर क्या संकट है? राजा ने कहा—हे सतवंती रानी! मैं क्या कहूँ? तालाब दौलत बेटी की बलि माँगता है ॥६॥

रानी ने दस महीने तक दौलत को पेट में रक्खा और सात

-सोतों का दूध पिलाया था। उसे दाहिने हाथ से उठाकर रानी ने राजा को पकड़ा दिया ॥७॥

हे नाउन ! हे बारिन ! दौड़ो और नगर में बुलौवा दे आओ। तालाब के आसपास सभा जुड़ गई और राजा ने कुश की पैंती पहन ली ॥८॥

पंडित ने बैठकर संकल्प का मंत्र पढ़ा और दौलत को तालाब में डुबो दिया। जैसे ही दौलत को तालाब में डुबोया गया, वैसे ही पानी हहराकर निकला ॥९॥

तालाब के आसपास अजीतसिंह रो रहे हैं—हाय ! मेरे तो एक कन्या ही थी। तालाब के आसपास सतवंती रानी राजा को समझा रही हैं कि तुम्हारा नाम दौलत बेटी ने रख लिया ॥१०॥

इस देश में कभी सती होने और बलि-प्रदान की प्रथा भी थी। दोनों प्रथायें अब अँग्रेजी राज में गैरकानूनी ठहरा दी गईं और प्रायः बन्द हो गई हैं। पर गीतों में उनकी यादगार अब भी कायम है। ऊपर के गीत में तालाब मे पानी निकालने के लिये एक कन्या की बलि दिये जाने का वर्णन है।

---

[३]

सात वहिनि चन्दा सिँकिया जे चीरै,
सिकिया चिरै ए रे रुदौली के घाट जी।
आइगै लस्कर मुगल कै
चन्दा परी बन्दिखान जी ॥१॥

अब रितु आई गोरी भौंजन की
चन्दा परी बन्दिखान जी।
रुपिया पइसा कै ढेर लागी है,
मोहरा जे लागी है लाख जी ॥२॥

छोड़ि न देउ चन्दा बेटी,
बेटी छोड़ि देव हमार जी।
रुपिया न लेबै पइसा न लेबै
मोहरा न लेबै लाख जी।
एक न छोड़बइ चन्दा रानी
जेहि सँग करब बिआह जी ॥३॥

हँसि हँसि मोगला डोलिया फनावै
रोई रोई चन्दा से रहि नहिँ जाइ जी।
जाहु ददुल घर आपने
राखिहौ पगड़ी तुम्हार जी ॥४॥

डोलिया फँदाय मोगला लै जे गया,
लैगा अपने मकान जी।
गेहूँ चना कै रोटिया पोआवा
उपरों से गइया कै माँठ जी।
जेइ न ले चन्दा रानी रानी इहै जेवनार जी ॥५॥

रोय रोय चन्दा रानी ये कहैं
सुन मोगले मोरी बात।
हम धन सीझी रसोइयाँ
उठि के करहु जेवनार जी ॥६॥

हँसि हँसि मोगला लकड़ी मँगावै,
रोइ रोइ चन्दा से रहि नहिं जाय जी।
चिता वारि चन्दा जरि गईं
चन्दा तो होई गईं 'राख जी ॥७॥

चन्दा कै चिता अस धधकै
धूँवा से भग्गिा भेडार जी।
जरिगै मोगला कै दाढ़ी
उहौ होइगा तमाम जी ॥८॥
(बाराबंकी)

चंदा अपनी छः बहनों के साथ रुदौली के घाटपर सींक (सरकंड) चीर रही थी, इतने मे मुग़लों का लश्कर आ पहुँचा और उन्होंने चंदा को पकड लिया ॥१॥

इधर वर्षा-ऋतु आगई; उधर चंदा बन्दीखाने मे पड़ी है। रुपयों की ढेरी लगी है। लाख मुहरें रक्खी हैं। हे मुग़ल ! मेरी बेटी को छोड दो ॥२॥

न हम रुपया लेंगे, न पैसा, और न लाख मुहरें। चंदारानी को हम नहीं छोडेंगे। इसके साथ व्याह करेंगे ॥३॥

मुग़ल हँस हँसकर डोली तैयार करा रहा है और रोते-रोते चंदा से रहा नहीं जाता है ॥४॥

चंदा ने कहा—हे दादा ! अपने घर जाओ, मैं तुम्हरी पगडी की लाज रक्खूँगी ॥५॥

मुग़ल डोली मे बैठाकर चंदा को अपने घर ले गया। गेहूं और चने की रोटी बनवाकर उसने ऊपर से उस पर गाय का

मट्ठा डलवाया और कहा—हे चंदारानी ! यह जेवनार जेंं न लो ? ॥५॥

रो-रोकर चंदारानी ने कहा—हे मुग़ल ! मेरी बात सुन । मैं खाना बनाऊँ और तुम उठकर खाओ ॥६॥

हँस हँसकर मुग़ल ने ईंधन मँगाया । चंदा से रोते-रोते रहा नही जाता । चंदा चिता जलाकर जल मरी और राख हो गई ॥७॥

चंदा की चिता ऐसी धधकी कि घरभर में धुँवा भर गया । मुगल की भी दाढ़ी जल गई और वह भी मर मिटा ॥८॥

यह गीत उस ज़माने की याद दिलाता है, जब मुगलों के अत्याचार से गाँवों के हिन्दू काँप उठे थे । पुरुष इतने निर्बल हो चुके थे कि जल मरने, डूब मरने या कटार खाकर मर जाने के सिवा कन्याओं को और कोई सहारा ही न था ।

ऐसे गीतों में पुराने समय की कन्याओं की धर्म-रक्षा की बड़ी ही मर्म वेधक कथायें सुरक्षित हैं ।

---

[४]

ऊँची अटारी उरेही चितसारी हो ना ।
रामा किन धन पुतरी उरेह्या हो ना ॥१॥

लहुरो पतोहिया पूता तोरी भैहो हो ना ।
रामा उन धन पुतरी उरेह्या हो ना ॥२॥

इतना बचन जब सुने राजा जेठवा हो ना ।
रामा गोड़े मूड़े तानेनि दुपटवा हो ना ॥३॥

उठौ न पूता मोरे हाथ मुँह धोवउ हो ना।
रामा खाय लेहु दुधवा औ भतवा हो ना ॥४॥

कैसे कै मैया मोरी हाथ मुँह धोई हो ना।
मैया लहुरी पतोहिया मन वसी हो ना ॥५॥

लहुरी पतोहिया पूता भयहो हो ना।
रामा वह तो तिलँगवा की जोइया हो ना ॥६॥

लै आवो छोटका ढाल तरवरिया हो ना।
छोटे भैया क खवरिया हम जावै हो ना ॥७॥

लइ लेहु जेठा ढाल तरवरिया हो ना।
जेठा हम तौ वाटी राम रसोइयाँ हो ना ॥८॥

एक वन गइले दुसर वन गइले हो ना।
रामा तिसरे मे भैया कै फउजिया हो ना ॥९॥

सोओ न भैया मोरे सुख की निनिया हो ना।
भैया तुम्हरा पहरवा हम देवै हो ना ॥१०॥

डोलै लागी जुडुली वयरिया हो ना।
रामा आइ गई सुख की निदरिया हो ना ॥११॥

रामा हनै लागे भैया क करेजवा हो ना।
जेठा सग भैया मारि घर लौटें हो ना ॥१२॥

अँगने हो कि भितरे माँ छोटका हो ना।
रामा खोलि देहु चँदन केवरिया हो ना ॥१३॥

कहवाँ मारेउ जेठा कहवाँ ढकेलेउ हो ना।
जेठा कहवाँ कै चील्हि मेँडरानी हो ना ॥१४॥

ऊँचे मारेउँ खलवाँ ढकेलेउँ हो ना।
रामा सरगे चिल्हरिया मेँ ड़रानी हो ना ॥१५॥

तुम्हैं छाँड़ि जेठा न और क होवै हो ना।
जेठा हरिजी कै लोथिया मँगावौ हो ना ॥१६॥

तुहैं छाँड़ि जेठा न और क होवै हो ना।
जेठा चन्दन चइलिया चिरावउ हो ना ॥१७॥

तुहै छाँड़ि जेठा न और क होवै हो ना।
जेठा नगर से घियनां मंगावउ हो ना ॥१८॥

तुहैं छाँडि जेठा न और क होवै हो ना।
जेठा रचि रचि सरा रोपावउ हो ना ॥१९॥

रामा हम जो होई सतवती हो ना।
मोरे अँचरा भभकि उठै अगिया हो ना ॥२०॥

बरै लागी लकड़ी भसम भई छोटका हो ना।
रामा जेठवा मिजै दूनौ हथवा हो ना ॥२१॥

जौ हम जनत्यौ छोटका इतना छल
करबिउ हो ना।
रामा काहे मरतेउँ सग भैया हो ना।
रामा काहे तोरतेउँ आपनि बहियाँ हो ना ॥२२॥

ऊँची अटा पर सुन्दर चित्रों से सुशोभित चित्रशाला है। पुत्र ने माता से पूछा—हे माँ! यह सुन्दर चित्र किसने बनाया? ॥१॥

माँ ने कहा—हे बेटा ! मेरी छोटी पतोहू, जो तुम्हारी भ्रातृ-वधू लगती है, उसने यह चित्र बनाया है ॥२॥

जेठ ने जब यह सुना, तब वह सिर से पैर तक दुपट्टा तानकर सो रहा ॥३॥

माँ ने कहा—हे बेटा ! उठो न ? हाथ-मुँह धोकर दूध-भात खा लो ॥४॥

पुत्र ने कहा—हे माँ ! मैं कैसे हाथ मुँह धोऊँ ? तुम्हारी छोटी पतोहू मन में बस गई है ॥५॥

माँ ने कहा—बेटा ! वह तो तुम्हारी भ्रातृ-वधू है। (उसे तो छूना भी पाप है)। और वह तो सिपाही की स्त्री है। उसका पति तो फौज में नौकर है ॥६॥

जेठ ने कहा—हे छोटी बहू ! ढाल-तलवार लाओ। मैं छोटे भाई की ख़बर लेने जाऊँगा ॥७॥

छोटी बहू ने कहा—हे जेठजी ! ढाल-तलवार स्वयं ले लीजिये। मैं तो रसोई बना रही हूँ ॥८॥

ढाल तलवार लेकर बड़ा भाई एक वन में गया, दूसरे वन में गया। तीसरे में उसके भाई की सेना का पड़ाव था ॥९॥

उसने छोटे भाई से कहा—हे भाई ! लाओ, तुम्हारा पहरा मैं दे लूँगा। तुम आज सुख की नींद सो लो ॥१०॥

ठंडी हवा चलने लगी। छोटे भाई को सुख की नींद आ गई ॥११॥

बड़े भाई ने छोटे भाई के कलेजे में तलवार घुसेड़ दी। छोटे भाई को मारकर वह घर आया ॥१२॥

उसने द्वार पर से पुकारा—छोटी बहू ! आँगन में हो ? कि कोठरी में ? चंदन के किवाड़े ज़रा खोल तो दो ॥१३॥

छोटी बहू सब भेद समझ गई। उसने पूछा—हे जेठजी ! तुमने उन्हें कहाँ मारा ? कहाँ ढकेला ? और कहाँ की चील उनके ऊपर मँडला रही है ? ॥१४॥

जेठ ने कहा—हे छोटी बहू ! मैंने उसे ऊँचे मारा और नीचे ढकेल दिया तथा उसके ऊपर आकाश में चील मँडला रही है ॥१५॥

छोटी बहू ने कहा—हे जेठजी ! मै तुम्हें छोड़ दूसरे की नहीं होऊँगी। तुम मेरे प्राणनाथ की लाश तो मँगा दो ॥१६॥

हे जेठजी ! मैं तुम्हें छोड़ दूसरे की नहीं होऊँगी। चंदन की लकड़ी तो चिरा दो। शहर से घी तो मँगा दो। अच्छी तरह से चिता तो रच दो ॥१७,१८,१९॥

जेठ ने सब कुछ कर दिया। छोटी बहू पति की चिता के पास खड़ी होकर बोली—हे राम ! यदि मैं सतवन्ती होऊँ, तो मेरे आँचल से आग भभक उठे ॥२०॥

लकड़ी जल उठी। छोटी बहू भस्म हो गई। जेठ दोनों हाथ मलने लगा ॥२१॥

उसने कहा—छोटी बहू ! मै जानता कि तुम इतना छल करोगी, तो मै अपना सगा भाई क्यों मारता ? अपनी भुजा क्यों तोड़ता ? ॥२२॥

यह गीत चक्की पर और खेत निराते समय भी गाया जाता है। मुझे यह एक बुढिया चमारिन से मिला था।

इस गीत से कितनी ही बातों का पता चलता है। एक तो यह कि पूर्वकाल मे चमार के घर में भी चित्रशाला होती थी। यदि

घर में न रही होगी तो गीत बनानेवाले के दिमाग़ में तो ज़रूर ही थी।

दूसरे यह कि, आज चरित्र-दुर्बल मानी जानेवाली चमारिनें भी कभी सत के ज़ोर से अंचल से आग उत्पन्न कर सकती थीं।

तीसरे यह कि; चमार की बहू ऐसे सुन्दर चित्र खींचती थी कि उन्हें देखकर पुरुष मोहित हो जाते थे।

चौथे, सती-धर्म की महिमा। छोटी बहू ने प्राण देकर अपना सतीत्व बचाया और उसका जेठ अधर्म-पथ पर चलकर अंत में हाथ मलता ही रह गया।

---

[५]

रामा सखिया दीन दोठे चनवा, चनव लै गयो भरसइयाँ।
रामा गर्भा के मातलि भुजइन चनवा दोहिस झलाय ॥१॥
रामा सासुजी क पूता हरवहिया चनवा लै गयौं हरवहिया।
रामा सासुजी के पुतवा बड़ा रिसिहा
चनवा दिहिन छितराय ॥२॥

रामा चनवा बीनत होइगे साँझ,
रामा सासु गरिआवै, बीरन भइया।
काहे के सासु गरिआवा बीरन भइया,
नइहरे मे बीरन दुलरुआ ॥३॥

देउ न मोरि सासु सोने के घइलना
हम सागर पनिया को जावें।
रामा गगरी तो धरिन कगरवाँ
अपना बुड़ली सगरवा मे ॥४॥

अपने महल चढ़ भइयाजी सोवै, माया एक सपन
हम तो देखा, माया बहिन जे बुड़ली सगरवा ॥५॥

देउ न मोरे माया सोने के छड़िअवा,
माया बहिन खबरिया हम जावै ॥६॥

सँफइन मोर भइया घोडवा पलाने भोरवा भयें असवार।
एक बन गये दुसर बन गय
तीसरे मे पाइन सगरवा ॥७॥

घोड़वा तो बाँधिन कगरवाँ अपुवा तो बुडले सगरवा ॥८॥

एक बुड़ बुड़ले दुसर बुड़ बुड़ले
तीसरे मे पाइन बहिनिया।
रामा जँघ तोपि बहिनी के ठाड़ करे,
अँगने अहु के भातरे सासुजी कहाँ गई बहिन हमारी ॥९॥

तुमरी बहिन पूता पनिया के गई
वहही लगावै छठि मास ॥१०॥

एक ओरिया बैठे मोरे ससुरे के लोगवा
एक ओरिया बिरना अकेल।
तोहरा कहा बहिनी एकौ न मनवै
तोहसे किरिया हम लेब ॥११॥

हँकड़ौ न नगरा के लोहरा रामा
धरम करहिया गढ़ि लाव।
हँकड़ौ न नगरा के बढ़ई रामा,
रामा धरम चइल चीरि ल्याउ ॥१२॥

एक ओरिया बैठे मोरे ससुरे के लोगवा,
एक ओरिया बिरना अकेल।
हँकड़ौ न नगरा के तेलिया घरम तेल पेरि ल्याउ ॥१३॥

बरै लागि अगिनी धधकि लागै तेलवा
रामा घुमरि घुमरि देइँ किरिअवा ॥१४॥

मुहना पटुक दै के रोवै तिलँगवा
धन पति लिहिउ हमारि ॥
मुहना पटुक दैके हँसै बिरन भइया
बहिनी भलि पति राखिउ हमार ॥१५॥

हँकड़ौ न नगरा के कँहरा
मोरि बहिनो जोगे डँड़िया फनाउ।
हँकड़ौ न नगरा के सोनरा
मोरि बहिनी जोगे गहना लै आउ ॥१६॥

हँकड़ौ नगर रँगरेजवा
मोरि बहिनी जोगे चुँदरी लै आउ ॥
घूमि घूमि देखै भइया मुँहवा,
ओठवा न खुसिया समाइ ॥

(झाँसी)

सखियों ने कुछ चने दिये। मैं चने लेकर भाड़ पर गई। अभिमानिनी भुजइन ने चने झौंस डाले ॥१॥

सासुजी के पुत्र हरवाही करते हैं। मैं चने लेकर उनके पास गई। सासजी के पुत्र बडे क्रोधी हैं। उन्होंने चने फेंक दिये ॥२॥

चने बटोरने में शाम हो गई। सास मेरे छोटे भाई को गालियाँ देने लगीं। हे सास! मेरे छोटे भाई को गालियाँ क्यों देती हो? मेरे नैहर में उसका बड़ा दुलार होता है ॥३॥

हे सास! सोने का घड़ा दो न? मैं पानी के लिये तालाब पर जाऊँ। बहू ने गगरी तालाब के किनारे रख दी; और वह तालाब में कूदकर डूब गई ॥४॥

भाई अपने महल की अटारी पर चढ़कर सो रहा था। उसने एक सपना देखा कि बहन तालाब में डूब गई। उसने माँ से कहा ॥५॥

'हे माँ! सोने की छड़ी दो न? मैं बहन की ख़बर लेने जाऊँगा ॥६॥

मेरे भाई ने शाम ही से घोड़ा पलानकर तैयार रक्खा और सबेरा होते ही वह घोड़े पर सवार हो गया। एक बन पार कर गया, दूसरा बन पार कर गया, तीसरे बन में तालाब मिला ॥७॥

तालाब की कगार पर घोड़े को बाँधकर वह तालाब में डूबा। एक डुबकी ली, दूसरी डुबकी ली, तीसरी डुबकी में उसने बहन को पाया ॥८॥

जाँघ की आड में बहन को छिपाकर भाई ने पूछा—हे सास जी। आँगन में हो कि घर के भीतर? मेरी बहन कहाँ गई? ॥९॥

हे बेटा! तुम्हारी बहन पानी के लिये गई है। वह तो वहीं छः महीने बिताया करती है ॥१०॥

एक ओर मेरी ससुराल के लोग बैठे हैं; एक ओर मेरा भाई अकेला। भाई ने कहा—हे बहन! मैं तुम्हारी एक भी बात न मानूँगा। मैं तुमसे शपथ लूँगा ॥११॥

नगर के लोहार को बुलाओ। हे लोहार! धर्म की कढ़ाई गढ़कर लाओ। नगर के बढ़ई को बुलाओ। हे बढ़ई! धर्म का चैला चीरकर लाओ ॥१२॥

नगर के तेली को बुलाओ। हे तेली। धर्म का तेल पेरकर लाओ। एक ओर मेरी ससुराल के लोग बैठे हैं, एक ओर मेरा भाई अकेला ॥१३॥

आग जलने लगी। तेल धधकने लगा। बहू उसके चारोंओर घूम-घूमकर, तेल में हाथ डाल-डालकर, शपथ देने लगी ॥१४॥

तिलंगा (बहू का पति) मुँह पर दुपट्टे का सिरा डालकर रोने लगा—हं धन! तुमने मेरी पत ले ली। मुँह पर दुपट्टे का छोर रखकर मेरा भाई हँसने लगा—हे बहन! तुमने मेरी पत रख ली ॥१५॥

नगर के कहारों को बुलाओ। कहारो! मेरी बहन के लिये डाँडी तैयार करके लाओ। नगर के सुनार को बुलाओ। सुनार! मेरी बहन के लिये गहना लाओ ॥१६॥

नगर के रँगरेज को बुलाओ। रँगरेज़! मेरी बहन के लिये चुंदरी ले आओ। घूम-घूमकर भाई सभावालों के मुँह देखता है। ख़ुशी उसके ओठों मे नहीं समाती ॥१७॥

हिन्दू-परिवारों में बहू के चरित्र पर बडी कडी दृष्टि रक्खी जाती है। कन्या की सच्चरित्रता की ज़िम्मेदारी उसके पिता और ससुर दोनों उठाते हैं। लेकिन अगर उसके चरित्र पर कोई कलंक लगता है, तो ससुरालवालों से ज़्यादा उसके पिता और भाई लज्जा अनुभव करते हैं।

पुराने ज़माने में जलते हुए तेल में हाथ डलवाकर सत की

परीक्षा ली जाती थी। कहा जाता है कि सच्चे का हाथ नहीं जलता था; भगवान जानें, इसमें सचाई कहाँ तक है। आज के ज़माने में तो इस पर विश्वास ही नहीं जमता। पर इतना तो स्पष्ट ही है कि परीक्षा बडी कड़ी थी और उस परीक्षा में निष्कलंक साबित होना अवश्य गर्व की बात होगी। गीत में भाई की ख़ुशी का ओठों में न समाना बिलकुल स्वाभाविक है।

अहीरों के गीत

अहीरों के गीत दो प्रकार के होते हैं, एक राह चलते हुए या गोरू चराते हुए गाने के, जिसको बिरहा कहते हैं; और दूसरे विवाह आदि उत्सवों में नाच और नगाड़े पर गाने के। बिरहे विवाह में भी गाये जाते हैं।

नौजवान अहीरों की आम आदत होती है कि वे प्रायः राह में बिरहे टेरते हुए चलते हैं।

विवाह के अवसर एक सुन्दर और नौजवान अहीर जाँघिया पहनकर नाचता है। जाँघिये में बहुत-सी घंटियाँ सिई रहती हैं जो नाचते वक्त काफी शोर करती हैं। नाच के वक्त नगाड़ा इतने ज़ोर से बजाया जाता है कि मीलों दूर से मालूम पड़ता है कि कहीं अहीर का नाच हो रहा है। अहीर का नाच बड़ी मशक्कत का होता है। नाचनेवाले की पूरी कसरत हो जाती है। नाच की एक गत ख़तम करके वह कान में उँगली डालकर गीत या बिरहे गाता है।

बिरहा सचमुच विरह का गीत है। उसमें युवक और युवतियों के लुभावने भावों की बड़ी मीठी चुलबुलाहट भरी रहती है।

यहाँ कुछ बिरहे और गीत दिये जाते हैं :—

[१]

ताल मे चमकै ताल की नेरुइया खेतवा मे गेहूँ क बालि।
सभवा मे चमकै पिया को पगड़िया अँगना छुलाछनि जोय।

(लखीमपुर)

ताल में नरई, खेत में गेहूँ की बाल, सभा में प्रियतम की पगड़ी और घर के आँगन में सुन्दर लक्षणोंवाली स्त्री चमक रही है।

---

[२]

गाय चरावो सुपास न पाओ, भैंस चरावों लम्बी दूर।
अपने बाप की छगड़ी चरावो, हिला हिला करे जी जाय।
रहिउ करम की पातरि गोरिया भइउ गड़िवनवा क जोय।
सारी राति पिया पहिआ ढकेलैं राति रतौंधी होय।

(लखनऊ)

अहीर की युवती कन्या अपने जी का दुःख कहती है—

गाय चराती हूँ और बड़ी दूर तक ले जाकर भैंस चराती हूँ, पति से मिलने का मौक़ा ही नहीं मिलता। अपने बाप की बकरियाँ चराती हूँ, 'हिला' 'हिला' (बकरियाँ हाँकने का शब्द) करते-करते जान निकल जाती है ॥१॥

हे गोरी! तुम बड़ी अभागिनी थी, जो गाड़ीवान की स्त्री हुई। तुम्हारे पति सारी रात तो गाड़ी ढकेलते रहते हैं और इस पर भी रात में उन्हें रतौंधी होती है ॥२॥

---

[३]

राम क बगिया सिता कै फुलवारी।
लछिमन देवरा बइठ रखवारी।

फरि गये नेवुआ लटकि गई डारी।
तोरि तोरि नेवुआ पठावैं ससुरारी॥
वोहि नेवुआ क बनै तरकारी॥

(फैजाबाद)

अर्थ स्पष्ट है। इस विरहे में अहीर ने अपनी सुप्रसिद्ध बुद्धि का भी परिचय दे दिया है। वह चुपके-चुपके अपनी ससुराल को नीबू इसलिए भेजता है कि वहाँ उसकी तरकारी बनेगी!

[४]

कौन चिरैया पोथिया बाँचे कौन खेवत दरबार।
कौन चिरैया कै लम्बे लम्बे टँगवा कौने कै चाँवर बार॥१॥
मैना चिरैया पोथिया बाँचै सुगवा खेवैं दरबार।
हंसा चिरैया कै लम्बे लम्बे टँगवा बगुला कै चाँवर बार॥२॥

(गोंडा)

कौन चिड़िया पोथी बाँचती है? कौन राज-काज चलाती है? किस चिड़िया की लम्बी-लम्बी टाँगें हैं? और किसके चौंर-जैसे बाल हैं?॥१॥

मैना पोथी बाँचती है। सुआ राजकाज चलाता है। हंस की लंबी-लंबी टाँगें होती है और बगुले के बाल चौंर जैसे होते हैं॥२॥

[५]

राम भैलैं जोगिया लषन बैरगिया,
दुनों भैया भइलैं फकीर।
गरवाँ मे नाये तुमड़ी को तकिया,
माँगैं दुरदेसिया में भीख।

राम जोगी होगये और लक्ष्मण वैरागी। दोनों भाई फकीर होगये। गले में तुम्बी लटकाये हुए वे दूर देश में भीख माँग रहे हैं।

यहाँ अहीर ने अपनी-सी हालत राम-लक्ष्मण की भी कर दी है।

---

[६]

केतनो कोइलवा के धोबिया तुँ धोवई
नौ मन साबुन लगाइ।
जेकर सुभाव जनम पड़ि गईलेहें ओकर न मेटे से मिटाय॥१॥

जब बिगड़े तब निमन ही बिगड़े अब का बिगड़े कपूत।
दधि बिचारे कैसे बिगड़े जिनके अन्त ही से बिगड़ले दूध॥२॥

हे धोबी! नौ मन साबुन लगाकर तुम कोयले को कितना ही धोवो, लेकिन जिसका जन्म से जो स्वभाव पड़ गया है, वह मिटाने से नहीं मिटेगा॥१॥

बिगड़ेगा तो वही बिगड़ेगा, जो बना हुआ है। कपूत क्या

बिगड़ेगा ? वह तो बिगड़ा ही है। बिगड़े हुये दूध का दही क्या बिगड़ेगा ? ॥२॥

---

[७]

चींटी मरी पहाड़ पर नौ सै लागि चमार।
प्यारे, नौ सै लागि चमार।

कलजुग माँ ससुरारि पियारी।
सो भाई प्यारे कलजुग माँ।
चारि रोज का बेटा गये ससुरारी।
गये ससुरारि सासु के भयो लरिका।
गलिअन गलियन सासु पुकारैं,
दमाद का खर्च कहाँ ते चलाई।
दमरी कै दाल छदाम के चाउर,
घी का अंस न देत दिखाई॥

हाथ माँ खुरपा बगल माँ खारा।
घास छीलन चला लरिका बिचारा॥

पाछे ते मेहरी ललकारा,
डारि दियो खुरपा बहाय दियो खारा।
छाँड़ि दियो ससुरारी को सहारा॥

लाउ छुरी गला काटि मरी।
ससुरारि की गलियाँ कबहूँ न चली॥

चींटी मरी पहाड़ पर नौ सै लागि चमार।
नाधा छूवार की गन्ती नाहीं
जूता बने एक सै नौ हजार॥
सो भाई प्यारे॥
(लखनऊ)

पहाड़ पर चींटी मरी; उसे उठाने के लिये नौ सौ चमार लगे। कलियुग में ससुराल प्यारी है। बेटा चार दिन के लिये ससुराल गये। सास के लड़का हुआ। गली-गली में सास पुकारने लगी कि अब दामाद का ख़र्च कहाँ से चलेगा? दमड़ी की दाल, छदाम का चावल, और उसमें घी कहीं छू भी नहीं गया था।

हाथ में खुरपा और बगल में खारा (घास बटोरने की जाली) लेकर लड़का बेचारा घास छीलने चला। पीछे से उसकी स्त्री ने उसे फटकारा। उसने खुरपा और खारा फेंक दिया और ससुराल का भरोसा छोड़ दिया।

इस बिरहे मे ससुराल में जाकर रहनेवालों की दुर्गत दिखलाई गई है।

---

[८]

जब से छूटि रेल कै गाड़ी, कटिगा जँगला पहाड़।
पैसा रहा सो गोड़े क सौंपउँ, पेटवा पीठि का हाड़॥

जब से रेलगाड़ी चली, जंगल और पहाड़ कट गये। जो पैसा था, उसे तो मैने पैर को सौंप दिया, अर्थात् पैर की पैदल न चलने

दिया और रेलपर चढ़कर गये। और पेट को पीठ का हाड़ सौंप दिया अर्थात् खाने बिना पेट रीढ़ से चिपक गया।

[९]

महँगी के मारे बिरहा बिसरिगा, भूलि गई कजरी कबीर।
देखि के गोरी क उभरा जोबन, अब न उठै न करेजे पीर॥

मँहगी के कारण बिरहा, कजली और कबीर सब भूल गये। अब गोरी के उठे हुये स्तन देखकर कलेजे में पीड़ा नहीं उठती।

अहीर ने कैसी सरलता से महँगी का कष्ट अनुभव किया है!

[१०]

नदिया के इर-तिर उपजी कुसाड़ी।
गउवा चरावइँ किसन मुरारी॥१॥

बीच बना मे कान्हा कँबरी बिछावइँ।
सब सखियन का पकरि मंगावइँ॥२॥

कोइ सखि गावै कोइ बजावै।
कोइ सखि काँधा कि मुरली चोरावै॥३॥

सिसुकत के काँधा घर का चले।
भितरा ते निकसी जसोमति माता॥४॥

के तोहैं मारा के तोहैं गरिआवा।
के तोहैं बतिया डोकरि गोहरावा॥५॥

नहिं कोई मारा नहि त गरियावा।
नहिं कोई बतिया डोकरि गोहरावा ॥६॥

हमरी त बंसी चोराइ लिहिन राधा।
यही पर रोवत हम घर चलि आई ॥७॥

बाँसे की बंसी तू जाइद्या लाला।
तोहे सोने कि बंसी हम देब बनवाई ॥८॥

(सुलतानपुर)

नदी के तीर पर कुश जमा है। वहाँ श्रीकृष्ण गाय चरा रहें हैं ॥१॥

कृष्ण बीच बन में कमली बिछाकर बैठे और उन्होंने सब सखियों को पकड़ मँगाया ॥२॥

कोई सखी गाती है, कोई बजाती है, और कोई कृष्ण की वंशी चुराती है ॥३॥

सिसकते हुये श्रीकृष्ण घर आये। यशोदा माता भीतर से निकलीं ॥४॥

किसने तुम्हें मारा? किसने गरिआया? किसने तुम्हें तू करके बुलाया? ॥५॥

न किसी ने मारा; न गरिआया; और न किसी ने तू करके बुलाया ॥६॥

राधा ने मेरी वंशी चुराली। इसी पर मैं रोता हुआ घर चला आया ॥७॥

हे लाला! बाँस की बाँसुरी थी, जाने दो। मैं तुम्हे सोने की वंशी बनवा दूँगी ॥८॥

[११]

आरे अहिरा का सोभेला जे ललकी लउरिया,
जे बभना का सोभेला जे ललका जनेउ।
जे नोनिया का सोभेला जे कान्ह पर फरुहवा
जे छत्री का तीर तरुआरि।-
औ पचा के सोभेला निआउ।

(बस्ती)

अहीर को लाल रंग की लाठी, ब्राह्मण को लाल जनेऊ, लोनिया को कंधे पर फावड़ा जो चूहों की बिलें खोदता है, शोभा देता है। क्षत्रिय को तीर और तलवार शोभा देती है और पञ्च की शोभा इन्साफ है।

---

[१२]

कौनु राति-दिन परा रहति हइ, कौनु रात-दिन ठाढ़।
कौनु राति-दिन चला करति हइ, इनके कौन सुभाउ॥१॥
धरती माता परी रहति हइँ, राम राति दिन ठाढ़।
पावन पानी चला करति हइ, इनके यही सुभाउ॥२॥

(लखनऊ)

कौन रात और दिन पड़ा रहता है? और कौन खड़ा? और कौन रात और दिन चलती रहती है?॥१॥

धरती माता पड़ी रहती हैं। राम रात दिन खड़े रहते हैं। पवन और पानी चलते रहते हैं। इनके ये स्वभाव ही हैं।

कहारों के गीत

कहार डोली ढोने का काम करते हैं। दूल्हा को दुलहिन के घर और दुलहिन को दूल्हे के घर पहुँचाने का काम कहार के ज़िम्मे है। डोली, खड़खड़िया, पालकी या पीनस उठाकर जब वे चलते हैं, तब शृङ्गार-रस के रसीले गीतों से अपनी सवारी को रास्ते भर गुदगुदाते चलते हैं। पति के घर जानेवाली दुलहिन या विवाह के लिये जाते हुये दूल्हे को शृङ्गार-रस के गीत कितने मधुर लगते हैं, अनुभवी ही जान सकते हैं।

कहारों के गीत को कहीं लाचारी और कहीं कहरवा कहते हैं। कहार लोग अपने ब्याह में नाचते भी हैं। नाचते वक्त 'हुड़ुक' नाम का बाजा बजाते हैं।

यहाँ कहारों के कुछ कहरवे दिये जाते हैं:—

[१]

गोरी धन सुअना पालो जी, गोरी धन ने ॥टेक॥
बड़ोई जतन करि पिंजरा बनायो,
तामे घने घने तार लगाये जी ॥१॥

तुचा के कागद सें पिंजरा मढ़ाय दयो,
मेरो पंछी न कहूँ उड़ि जाय जी ॥२॥

राति दिन वाकी टहल करति है,
मेरो पंछी न कहूँ दुखिआय जी ॥३॥

मेवाहू खवावै दिन रात पढ़ावै ताय,
दयो वाई सें चितु लगाय जी ॥४॥

एक दिना सो गाफिल हुय गई,
तोता निकरि गयो करै हाय जी ॥५॥
खिरकी न खुली कोई तारु न टूटो,
जानै निकरि गयो कौन राह जी ॥६॥
बाग बगीचा बन खड़ सब ढूँड़े,
कहूँ पछी न मिलै मेरे राम जी ॥७॥
प्यारे सुअना को कहूँ पता न पायो,
गोरी वैठि रही झक मारि जी ॥८॥
याही विधि तेरे तन की दसा होय,
लेउ जीवन हरि गुन गाय जी ॥९॥
(बदायूँ)

अर्थ स्पष्ट है। जीव, शरीर और सुआ और पिजड़े का रूपक है।

---

[२]

बुढ़वा कँहरवा कै आई बुढ़इया तौ फेकै तलौना मे जाल
बुढ़ऊ न पावै जो एकौ मछरिया
तो मीजै पतोहिया क गाल।
बुढ़वा मोरे जिय क जरनिया टिकुली देखे जरि जाय।
हे देवी दाई तोके रोट चढ़ौबै जो ई बुढ़वा मरि जाय॥

बुड्ढे कहार को बुढाई आई, तब ताल में जाल फेंकने लगा। बुड्ढे को जब एक भी मछली नहीं मिलती, तब (खिसियाकर) वह पतोहू का गाल मींजता है ॥१॥

यह बुड्ढा मेरे जी का जंजाल है। मेरे माथे पर टिकुली देख-कर जल उठता है। हे देवी ! यह बुड्ढा मर जाय तो तुमको रोट चढ़ाऊँगी।

सचमुच बुड्ढा कहार गृहस्थी का बोझ हो जाता है।

---

[३]

दिनवा दिनवा मैं गिनों बलमुआ छोटे लड़िका राम।
अँगुरी पकड़ो दुलहा लै गयो बजरिया राम
पुछही नगरिआ के लोग राम ॥
कि तोरा लागे भइया रे भतिजवा
कि या तेरा लागे लहुरा देवरवा राम ॥
नाहीं लागे हमरा भइया रे भतिजवा
नाहीं लागे लहुरा देवरा हो राम ॥
पुरबुज कमैया दुलहा पायेवँ छोटे लड़िका राम।
जहाँ देखे लाई गट्टा तहाँ मचलाई राम।
टोपिया बदल दुलहा खाई लाई गट्टा राम ॥
सरसो कै तेल कडुन कै बुकवा रामे।
सारी मीजि दुलहा कई लेवे सयनवा राम ॥
दिनवा दिनवा मैं गीनो बलमु छोटे लड़िका राम।

बालम अभी छोटे बालक हैं। मैं उनके युवा होने के दिन गिन रही हूँ।

दूल्हा मेरी उँगुली पकड़कर मुझे बाज़ार ले गया। बाज़ार के लोग पूछने लगे—तुम्हारा यह कौन है ?

तुम्हारा भाई है ? या भतीजा ? या छोटा देवर है ?

न तो यह मेरा भाई है, न भतीजा और न छोटा देवर। पूर्व-जन्म की कमाई के फल से मैंने यह बालक दुलहा पाया है।

जहाँ यह गट्टा-लाई देखता है, मचल पड़ता है। टोपी देकर गट्टा-लाई खाता है।

सरसों के तेल और काकुन का उबटन लगाकर, मैं थोड़े दिनों में इसे सयाना कर लूँगी। मैं बालम के युवा होने के दिन गिन रही हूँ।

इस गीत में एक युवती बहू की मनोव्यथा भरी है, जिसका विवाह एक बालक वर से कर दिया गया था।

---

[४]

सगरी रयेनिया भौंरा घूमि घामि आयो कि कोई नाही रे
जागै नागरी क लोगवा कि कोई नाही रे ॥
जागै तो जागै एक पातरी तिरेवा कि जिन केरे रे
पियवा छाये है बिदेसवा कि जिन केरे रे ॥१॥

अँगना बहारै साँवरि टटरा जो उघारै गागरिया लैके रे।
साँवरि पनिया क जाय गागरिया लैके रे ॥१॥

गगरो तो भरि भरि धरिलो जगति पर सुगनवा मुरहा रे।
बोलै बिरहा कै बोलिया, सुगनवा मुरहा रे ॥३॥

एक तो मन होय सुगना पटकौ देहरिया, दोसरे मन रे,
परदेसिया को चीन्ह, दोसरे मन रे ॥४॥

हे भौंरा ! सारी रात तुम घूम-घाम आये, नगर में कोई नहीं जाग रहा है। जागती है तो केवल एक पतले शरीर की विरहिणी स्त्री, जिसके पिया परदेश में हैं ॥१॥

आँगन बुहारकर साँवली ने टाटी खोली और गगरी लेकर वह पानी को गई ॥२॥

गगरी भरकर उसने कुँवें की जगत पर रख दी। नटखट सुआ विरह की बोली बोलता है। ऐसा जी में आता है कि सुए को देहली पर पटक दूँ; पर उसी वक्त याद आता है कि यह तो परदेशी (पति) का दिया हुआ चिह्न है ॥३॥

अन्त की कड़ी में विरहिणी ने अपने परदेशी की दी हुई वस्तु पर जो प्रेम प्रकट किया है, उसका स्वाद कोई प्रेमी ही जान सकता है।

जिस जाति में इस तरह के मार्मिक भाव व्यक्त करने का हृदय है, उसे असभ्य कैसे कहा जा सकता है ?

---

[५]

तुलसी को बैरागु भयो जी, तुलसी कों ॥ टेक ॥
तुलसीदास राजापुर मे रहत हे।
निज त्रिय पे आसक्त बहुत हे ॥
ताके मुख मांई छिन छिन चितवत हे।
बिनि देखे ताके कल न परै जी ॥ १ ॥
सावन के महीना में सारे उनके आय गये।
अपनी बाहन कों चोरा चोरी सों
लिवाय गये ॥

तुलसीदास हू धोको तिनसे खाय गये।
ता दिन तुलसो बजार गये जी ॥ २ ॥

साँझ भई दिनु आओ मुँदन में॥
तुलसो सोचु करन लागे मन में॥
कामुदेवु व्यापि रह्यो तन मे।
लै सोटा ससुरारि चले जी ॥ ३ ॥

आगैं नदिया अगम बहति है।
बड़ी भारी जामें लहरि उठति है॥
ताय देखि तुलसी मन कंपित है।
एक मुरदा जातु बहो जी ॥ ४ ॥

ताई पै चढ़ि के तुलसी पार भये है।
तब ससुरारि मे पहुँचि गये हैं॥
घर के किवार तुलसी लगे पाये हैं।
एक सरफु तहँ लटकि रहो जी ॥ ५ ॥

ताहि पकरि तुलसो घर मे गये हैं।
तब त्रिया के ढिग पहुँचि गये हैं॥
त्रिया को निरखि मन मगन भये हैं।
त्रिया ऐसे बचन कह्यो जी ॥ ६॥

इतनो हेतु करो तुम हमसें।
इतनो जौ हितु करते रघुपति सें॥
छुटि जाते जग के बंधन सें।
नाय जनम मरन रहतो जी ॥ ७ ॥

सुनत बचन तिनकी बुद्धि पलटि गई।
पिछली करनी कछु परगट भई॥
हात जोरि ताकों परिकरमा दई।
तुम भई गुरु मातु हमरी जी ॥८॥

तुलसीदास प्रभू लीला न्यारी।
राव से चांहे छिन में करि दें भिकारी॥
अस तुलसी को तुलसीदास करोरी।
ऐसे प्रभू को तू भूलि गयो जी ॥९॥

(बदायूँ)

अर्थ स्पष्ट है। तुलसीदास की जीवन-कथा को किसी कहार ने अपने गीतों में गूँथकर अपने समाज को उनसे सुपरिचित कर लिया है।

---

[६]

सोच मन काहे क करी। मोरे मालिक सिरी भगवान ॥टेक॥
जहाँ रहैं नित रोज बसेरा बधिक लगावत फाँस।
कूदि कादि के हरिनी निसरिगै हरिन क परिगा फाँस॥
सोच मन० ॥१॥

वही पारसे हरिना पुकारै सुनु हरिनी मोरी बात।
विधना के घर खरच खोटाने बेचि खात मोर माँस॥
सोच मन० ॥२॥

यही पार से हरिनी बोलै सुनु वधिका मोरी बात।
हमहूँ क बाँधु पिया सँग मोरे खोउ न मोर अहिवात॥
सोच मन० ॥३॥

यतनी बचन कहि तुरत हरिनिया गई बधिकवा के पास।
यतनी बचन जब सुने बधिकवा अपनी घना कै
सुधिया जो आई, काटि दिये गलफाँस॥ सोच मन० ॥४॥

(बाराबंकी)

मन मे चिंता क्यों करूँ? श्रीभगवान् मेरे मालिक हैं। हरिन-हरिनी जहाँ रोज़ बसेरा लेते थे, वहाँ बहेलिये ने जाल लगाया। हरिनी तो कूद-फाँदकर निकल गई, लेकिन हरिन जाल में फँस गया ॥१॥

उस पार से हरिन ने पुकारकर कहा—हे हरिनो! मेरी बात सुन। ब्रह्मा के घर में ख़र्च की तंगी आगई है, सो अब वह मेरा मांस बेंचकर खायगा ॥२॥

इस पार से हरिनी बोली—हे वधिक! मेरी बात सुन। मेरे पिया के साथ मुझे भी तू बाँध ले। मेरा अहिबात (असिव्रत= सुहाग) न खो ॥३॥

हरिनी वधिक के पास चली गई। वधिक को अपनी स्त्री की याद आई और उसने हरिन के गले का फंदा काट दिया ॥४॥

मृत्यु में भी 'पिया का संग' न छोड़ने की लालसा में हरिनी के अकृत्रिम प्रेम की झलक है। और वधिक का अपनी स्त्री की याद से दयार्द्र हो जाना भी मानव हृदय की एक अद्भुत घटना है।

तेलियों के गीत

तेल के कोल्हू के गीतों के सिवा तेलियों के जातीय गीत भी हैं, जिन्हें वे विवाह आदि उत्सवों में कई तेली साथ मिलकर गाते हैं।

यहाँ तेलियों के कुछ गीत दिये जाते हैं:—

[१]

बिरहा गाना सहज है ग्यानी , जोड़ कै मिलाना काम।
भाँग का खाना सहज है ग्यानी, लहरि बचाना काम ॥१॥

जहँ पंच तहँ परमेसर भाइ , जहँ कुऑंना तहँ कीच।
वहिय कीच का बना चउतरा,
हाँ, वह सब पच नवावइँ सीस ॥२॥

हे ज्ञानी! बिरहा गाना तो सहज है, लेकिन बनाना मुश्किल है। भाँग खाना सहज है, लेकिन उसका नशा सँभालना मुश्किल है ॥१॥

जहाँ पंच हैं, वहीं परमेश्वर हैं। जहाँ कुँवा है; वहीं कीचड़ भी है। उसी कीचड़ (मिट्टी) का चबूतरा बनता है, जिसे सब लोग सिर झुकाते हैं ॥२॥

[२]

पंचा क बैठ मेड़रिया, मेड़रिया छोट बड़ा एक तूल।
केकरे अर्ती उतारउँ रामजी, केकरे खोसउँ बेली फूल ॥१॥

पंचा क आउब बहुत निक लागै, जौ घर सपत होइ।
आवत के पंचा के सिसिया नवावउँ,
जात के पैयाँ पड़ रे जाउँ ॥२॥

(सुलतानपुर)

पंचों की मंडली बैठी है। मंडली में छोटे-बड़े सब बराबर हैं। हे रामजी ! मैं किसकी आरती उतारूँ ? और किसके सिर पर फूल चढाऊँ ? ॥१॥

यदि घर में धन हो तो पंचों का आना बहुत प्रिय लगता है। पंचों के आने पर मैं उनको सिर नवाता हूँ और जब वे जाने लगते हैं तब उनके पैर पड़ता हूँ ॥२॥

इन बिरहों में पंचों की महिमा गाई गई है। इन बिरहों के प्रभाव से तेली-समाज के नवयुवकों में नम्रता और पंचों के प्रति सम्मान का भाव उत्पन्न होता है।

गड़रियों के गीत

गडरियों के भी जातीय गीत हैं। अपने विवाह आदि उत्सवों मे वे अपने ही गीत गाते-बजाते हैं।

गडरिये रात मे छुट्टी पाते हैं और तब एक साथ बैठकर, सूप वजाकर, अपने गीत गाते हैं। इनके एक मुख्य गीत का नाम 'सिउरिया' और एक का नाम 'पंडों की मार' है।

यहाँ गडरियों के कुछ गीत और बिरहे दिये जाते हैं :—

सिउरिया

बॅंगला मे सोवै सिउरयिा।
हर मेरा बॅंगला कैसा रै छवाया, खिन खिन
बरसै रै मेघा, अरे अब बँगला तो तड़ाया है।
बूँदा तो मेरी छाती पै गिरी मेरे बालम;
अरे मै गिरी रै पलग से नीचै॥

बिन बिन रोवै रै आज महलाँ मे सिउरिया जी।
अरै वह सिउरिया बॅंगला मे रोवैं रै॥
अरै केला गढ़ मे सुनी रै आवाज परसवा नै।
भय्या परसवा सुन ले मेरी बात,
आज महल मे कोई रोवै जी॥

भय्या जय्यो कोई महल में जी।
परसा बोलो भय्या बॅंगला छवाया रै॥
जानै और दुख क्या है
जो रोवै आज महलां मे मेरी रानी।

बात सुनी थोंदा की परसुवा नै;
इतनी सुनकर महलों को चल दिया
परसुवा सुन थोंदा की रै ॥

चला वह महलों को रै
जहाँ बॅगला मे सोवै सिउरिया।
अरै अब खड़ा रै दरवाजे पै अरै
मेरी रानी आज हाल बता दे सारा जी ॥

अरै जो किसी ने मारा तमको उसके हाथ कटाऊँ।
जो घूरा हो उसके नैन कढ़ाऊँ जी ॥

इतनी सुनकर बोलो जी सिउरिया,
ऐ मेरे राजा सुन लो मेरी बात।
ना मिजै किसी ने मारा ना किसी ने घूरा
ना किसी ने दी गाली है;
अर मेरे बालम मेरा यह कैसा बॅगला छाया जी
आज मेरे बालमा ॥

ऐ जो मुझसे मना कर देते तुम बालमा।
अजी गगा खादर से कसौदा लेती कटाय ॥

चार मॅजूर लगाकर रेशम वंद लेती लगवाय।
इतनी वात सुनके परसा ने उसी ज्वान ने जी ॥

अरै लै रानी जाता कजलो वन को वह ज्वान जी।
धर कधे पर कुहाड़ी परसवा ज्वान तो जी ॥

इक पोरिया बाँस बन से लाऊँ
तब तेरा बँगला बनाऊँ रै।
अजी पाँच छुगा अपने यारों को भी लाऊँगा ॥
एक छुगा भैया नाई यार को जी।
इक तो लइया दुरजना गूजर को जी ॥
इक तो लैया गलै गड़रिया को जी,
वह भी हमारा यार है जी।
एक नैनसिह वढ़ी को जी
अर इक अपने लिये जी ॥

जव परसा धर कधे कुहाड़ो कजली बन को जाता।
अरै भैया मजला मैं मॅजल पहरे मैं पहरा रै ॥
अव कजली बन मे पहुँचा वह परसवा ज्वान जी।
सारै रै बन मैं फिरा रै भागला
वाँस न हाथ आवै जी, आज परसवा ज्वान जी ॥
ऐ कर्ता तैने क्या रची है जो प्यासों तजै पिरान।
कधी घर से बाहर को न निकला था
आज कजली वन फिरूँ हूँ जी ॥
अव जब वाँस का वीड़ा देख लिया परसुवा ने जी।
मारी रै कुहाड़ो ऐसी वीड़ पै
हुई एक मे परसवा की वोझी जी ॥
धर वोझी सिर पै चला वह परसवा ज्वान जी।
परसवा चला घर को जी, दस पहरे चला
बीस पहरे चला उसकी याद जो आई जी ॥

ले मारे यार ने कहा छड़ी को जी याद मारी
तो रही है नाय जी आज इस बन मे।
लगा बोझी साल के पेड़ से
परसवा ज्वान पीछे को लौटा आय।
जब बन मे पहुँचा परसवा ज्वान जी,
छड़ी तो पाँचो हाथ न आवे
आज परसवा ज्वान जी।
एक खड़ी बबी मे पाँचो छगा जी ले बड़े
दिनों मे आई है यह छड़ी पाँचो को काई।
जब परसवा ने मारी कुहाड़ी एक छगा काटी।
उस बबी मे एक नाग एक नागन
दोनो मियाँ बीबी जी।
ऐ मियाँ तू किस फिकर मे सोवे
ऐ भर सावन मे जी, ऐ भर सावन मे जी।
हमारी मँडया उजाड़ी इस परसवा ने,
नाय है अब ठिकाना हमारा जी।
उठ डस ले इसको जी।
ऐ नागन तू बोले मतना इसे छड़ काट लेन दे जी।
जैसे भर सावन मे मेरी मँडया उजाड़ी,
भर सावन मे बँधवाऊँ इसकी अर्थी॥
अरे काटौ परसवा नै जब पाँचो वह चला जी
निकल नाग बंबी मे से जी।
आज उसकी बोझी मैं बैठा जी
परसवा ले ज्वान की जी।

परसवा की बैठा वह नाग, वह नाग जी।
परसवा ने बोझी घर ली वह
सिर पर घर ले चला वह ज्वान जी।
ऐ नाग ने जो जहाँ चोटी होती है हिन्दुओं की।
उस नाग ने अपना मुँह लगाया
परसवा की चोटी पर जी।
अरे लगी प्यास उस परसा को
वह तो भड़क गया है जी।
खून खैंच लिया है नाग ने जी।
जब खैंच तान के लियाया गगा की ढाँग पर जी।
गंगाजी को ढाँग पर खड़े से बोझी बगाई जी,
आज परसवा ज्वान जी।
अरे, वह कूद पड़ा गंगा मे
भैया दिल खोलकर पानी पिऊँगा।
भैया मेरा भड़क-गया सारा शरीर।
पानी पी के गगाजी मे से निकला जी भैया।
उसके छुटे पिरान जो। आज परसवा ज्वान जी॥

(बिजनौर)

बिरहे

[१]

सात गाँव घर तीन हैं,
जिन घर नारी एक।
ब्रह्मा बूझै बेद से
नौ हर हारी एक॥

गुरू हमारे कथ गये,
कोई श्रोता करें बिचार ॥

सात गाँव=पृथ्वी के सात खण्ड।
घर तीन=तीन लोक। नारी एक=लक्ष्मी।

[२]

ऊजर खेड़े फिर बसै, निरधनियाँ धन होय।
बिछुड़ा जोबन ना मिलै, मानुष तौ मिलि जाय ॥
हरघड़ियो रब्ब का नाम।

धोबियों के गीत

धोबी भी अहीरों, चमारों, कहारों और नाइयों की तरह अपने जातीय उत्सवों में ख़ुद नाच-गा लेते हैं। इनके गीत भी प्रायः अहीरों के बिरहे-जैसे होते हैं। केवल गाने के स्वर में थोड़ा अन्तर होता है और भावों में तो स्वभावतः धोबी-कुटुम्ब की सजीवता रहती है।

धोबी लोग हुडुक (एक बाजा) और काँसे या पीतल की कटोरी को उसी धातु की गुल्ली से पीटकर गाने के साथ बजाते हैं। कई धोबी मिलकर खड़े-खड़े गीत गाते हैं और उनके बीच में ख़ास ढङ्ग की पोशाक पहने हुये धोबी का एक छोकड़ा नाचता है।

यह तो मशहूर ही है कि धोबी कपड़े नहीं ख़रीदता। अतएव सभी धोबी नाच-गान के समय साफ़-सुथरे बने रहते हैं। यह उनकी ख़ास विशेषता है।

यहाँ धोबियों के कुछ गीत दिये जाते हैं।

[१]

धोबी बेटी पानी को जाय राजा तो निकले शिकार को।
धोबी बेटी पानी पिलाय प्यासे तो आए गजवन दूर के।
पियो राजा समुन्द्र झकोल हमरे हाथों का पानी विष भरा ॥१॥

समुन्द्र तो पीवें डांगर ढोर हम तो पीवेंगे तुम्हरे हाथ का।
जो तुम्हे धोबीकी का चाव धोवट धोओ हमारे बापकी ॥२॥

जंगी बाँधी पोट कंधे धरा मूँगरा
धोबीकी ने धोए दो चार राजा ने पूरे डेढ़ सो ॥३॥

देख राजा तुम्हारे हाथ गोरे हाथो में छाले पड़ गये।
देखें धोबीकी तुम्हारे हाथ गोरे हाथों में मेहदी रच रहा ॥४॥

मन मे तो धोबीकी बहुत मलूक
अब लो क्वारी क्यो रही।
ढूँढ़े बाप ढूँढ़े चारों खूँट हमारी जोडी के राजा ना मिले ॥५॥

मन तो राजा बहुत मलूक अब लों क्वारे क्यो रहे।
क्या मर गये माई बाप बैठे राजा तखत बिछाय।
मन में उदासी क्यों लई, न चिताए माई बाप,
न चिताया मारू देसड़ा ॥६॥

हमारी चिताई सात बरस की नार
सात महलों मे छोड़ी एकली।
जाओ राजा जाओ मारू देस महलों छोडी नार एकली ॥७॥

एक मरेगी बिसूर बिसूर, राजा तुम चाहो दूसरी।
मरूँ एक जीऊँ एक साथ,
राजा की मरथो दूसरी जी, महाराज ॥८॥

(मेरठ)

धोबी की लड़की पानी भरने जा रही थी। उसी समय राजा शिकार को निकले। राजा ने कहा—हे धोबी की लड़की! पानी पिला, मैं दूर से प्यासा आ रहा हूँ। लड़की ने कहा—हे राजा! तालाब में पानी पी लो। मेरे (अछूत के) हाथ का पानी तुम्हारे लिये विष की तरह है ॥१॥

राजा ने कहा—तालाब में तो डाँगर-ढोर (गोरू) पानी पीते हैं, मैं तो तुम्हारे ही हाथ का पानी पीऊँगा ॥२॥

लड़की ने कहा—अगर तुम्हें धोबी की लड़की का चाव है तो मेरे बाप की धोवट धोओ ॥३॥

राजा ने कपड़ों की एक बड़ी गठरी बाँधी और कन्धे पर मूँगरा रक्खा। धोबी की लड़की ने दो-चार कपड़े धोये, पर राजा ने पूरे डेढ़-सौ धोये ॥४॥

लड़की ने कहा—हे राजा! तुम्हारे हाथ देखूँ? तुम्हारे हाथों में तो छाले पड़ गये!

राजा ने कहा—हे धोबी की लड़की! तुम्हारे हाथ देखूँ? हाथों में तो मेहँदी-सी रच उठी ॥५॥

राजा ने मन में सोचा—धोबी की लड़की है तो बहुत सुन्दर; पर अबतक यह क्वारी क्यों रही?

लड़की ने कहा—मेरे बाप ने चारोंओर ढूँढ डाला, मेरी जोड़ का कोई राजा मिला ही नहीं ॥६॥

लड़की ने मन में सोचा—राजा हैं तो बहुत सुन्दर; लेकिन अबतक क्वारे क्यों रहे? क्या इनके माँ-बाप मर गये? और यह उनका सिंहासन पा गये हैं? इनका मन उदास क्यों है? न इनको माँ-बाप की याद आती है, न अपने मारू (मारवाड़) देश की ॥७॥

राजा ने कहा—मुझे मेरी सात वर्ष की रानी की याद आई है, जिसे मैंने महलों में अकेली छोड़ा है।

लड़की ने कहा—हे राजा! तुम अपने देश को लौट जाओ। तुमने रानी को महल में अकेली छोड़ा है ॥८॥

तुम्हारी एक रानी तो महलों में बिसूर-बिसूरकर मर रही है, तुम दूसरी खोज रहे हो। मैं तो किसी एक के साथ मरूँगी और

एक ही के साथ जीऊँगी। राजा का क्या? एक मर गई, दूसरी कर ली ॥६॥

बहु-पत्नीवाले पुरुषों को धोबी की लड़की का कैसा चुभता हुआ जवाब है!

---

[२]

कौने सहर के मोर धोबिन धियरी रे
कौने सहर लूगा धोय?
'मथुरा' सहर कै मोर धोबिन धियरी रे
'हरदी' सहर लूगा धोय ॥१॥

खोलिन खोलिन धुलिगै मोर धोबिन धियरी रे
कहु रे धिया धोबा नहिं तो देय।
ओतका ला सुने ह्वै राजाजी के बेटवा रे
फेंकि जो देथे झीनी पिछौर ॥२॥

झीनी पिछोरी का धोबिन मोटियावै रे
राजा के बेटा घोड़ सम्हराय।
ओन्हा के मोटरी बोहन लागे छोकरी
रेंगि ओ जाथे बँधवा के पार ॥३॥

आगू आगू धोबनिन पीछू पीछू राजाजी रे,
चलत हैं बँधवा के पार।
डोकी घाट छाँड़े, डोका घाट छाँड़े रे
(सुअना) धोबी घाट ला चले असनान ॥४॥

१४

रदखद रदखद ओन्हा तो चुरिगे
राजा के बेटा हँसे खदखद ।
पहले चलौ पहले चलौ राजाजी बेटवा रे
पर दिही राख के बूँद ॥५॥

तोरे लेखे धोबनिन राख के बुँदवा हैं
मोरे लेखे चोवा फुलेल ।
छाँड़ि देओ धोबनिन धोबिया भतार का
करि लेव राजा भतार ।
राजा भतार में आग लगाओ रे
धोबिया हरलिही पाटी पार ॥६॥

छाँड़ि देओ धोबनिन छितकन कुरिआला
सोइ तो लेबे रग महल ।
रंग महल मे तो आगी लगाओ रे
कुरिआ के मोल अपार ॥७॥

(बुन्देलखंड)

किस शहर के धोबी की यह कन्या है? और किस शहर के कपड़े धो रही है? मथुरा शहर के मेरे धोबी की यह कन्या है, और 'हरदी' शहर में कपड़े धोती है ॥१॥

युवती कन्या खोर-खोर (गली-गली) में फिरती हुई पुकारती है। कोई भी उसे धोने के लिये कपड़े नहीं दे रहा है। राजा के पुत्र ने यह सुना और उसने अपनी महीन पिछौडी धोने के लिये उसके आगे फेक दी ॥२॥

उस महीन पिछौड़ी को धोबिन गठरी में बाँधती है। उधर

राजकुमार अपना घोड़ा तैयार करता है। कपड़े की गठरी सिर पर रखे धोबिन-कुमारी बँधवा (तालाब) के पार की ओर चलती है ॥३॥

आगे-आगे वह जा रही है, पीछे-पीछे घोड़े पर राजकुमार है। मर्दों का घाट छोड़कर, औरतों का घाट छोड़कर, राजकुमार धोबी-घाट पर स्नान करने को उतरता है ॥४॥

वहाँ क्या देखता है कि "खद्-खद्" आवाज़ करता हुआ कपड़ा छूट रहा है। उसे सुनकर राजकुमार 'खद् खद्' (प्रसन्नता से) हँसने लगता है। राजकुमार को धोबी-घाट पर देखकर युवती ने कहा—हे राजाजी के कुमार! आप आगे बढ़ जाइये, नहीं तो अपके शरीर पर राख के छींटे पड़ जायँगे ॥५॥

राजकुमार ने कहा—तेरे लिये ये राख के छींटे हैं। मेरे लिये तो 'चोवा और फुलेल' के समान हैं। हे धोबिन! तू धोबी पति को छोड़ दे और राजा को अपना पति बना ले। युवती कहती है कि राजा को पति करने की लालच पर आग लगे, मुझे तो अपनी ही जाति का पति सुखकर है ॥६॥

राजकुमार ने कहा—टूटी-फूटी झोपड़ी छोड़कर तू रंगमहल में आकर सो। धोबिन कुमारी ने कहा— मेरी टूटी फुटी झोपड़ी का मोल रंगमहल से बढ़कर है ॥७॥

यह धोबियों का सुआ-गीत है। यह युक्तप्रांत के दक्खिनी ज़िलों से लेकर बुंदेलखण्ड और छत्तीसगढ़ तक गाया जाता है।

धोबी की लड़की को जो सुख धोबी के घर में मिल सकता है, वह राजा के रंगमहल में नहीं। इस देश में पतिव्रत-धर्म की महिमा धोबी के परिवार में भी गाई जाती है।

---

[३]

मन तोरा अदहन दिल तोरा चाउर, नयना मूँग कै दालि।
अपने बलम कै जेउना जेवउँतिउ बिनु लकड़ी बिनु आगि॥

(सुलतानपुर)

हे विरहिणी स्त्री! तुम्हारा मन अदहन है, हृदय चावल है, आँखें मूँग की दाल हैं। अपने स्वामी को तुम लकड़ी और आग के बिना ही आहार खिलाया करती हो।

विरहिणी का कैसा यथातथ्य वर्णन है!

---

[४]

सासु गोसाईं तोरी पइयाँ जे लागउँ,
माता लैदे सनकै डोर।
आँचर खोले जल भरउँ माता,
मइका केऊ न कहैं लड़कोर॥

(प्रतापगढ़)

हे घर की मालकिन सास! मैं तुम्हारे पैर पड़ती हूँ, सन की रस्सी मँगा दो। हे माता! आँचल खोलकर पानी भरती हूँ। मुझे कोई लड़कोर (पुत्रवती) नहीं कहता।

कन्या को पुत्रवती कहलाने की बड़ी अभिलाषा है।

---

[५]

अरे कुअना की पनिहारिनि, कहो तू का मन झुरये ठाढ़ि।
अरे की कुअँना तोर हार गिरा बा,
जा कै बिछुड़ी हो पनिहारि ? ॥१॥
अरे ना कुऑना मोर हार गिरा बा, ए परदेशी,
नाही बिछुड़ी हौं पनिहारि।
अरे नन्हन कन्ता गये विदेसवा, तोहरिअ हाँ अनुहारि ॥२॥
मोतियन से तोरि मॅगिया गुहैवै,
हाँ, सोनवै लहवइवै सरीर।
घइला घइ द्या कुअना जगत पर,
वारी नयिका हो, चलो हमारे साथ ॥३॥
सोनवा गलै सोनार दुकनिया,
अइ छइला, अब मोती झोकावउ भार।
हंस मुरइला कि जोड़िया छोड़िके,
हम काग संग ना जाव ॥४॥
एतनी वचनिया पहलेइ कहतिउ वारी नयिका हो,
हम पूरुखु तुम नारि ॥५॥
(जौनपुर)

हे कुँवें पर पानी भरनेवाली! तुम दुःखी मन से यहाँ क्यों खड़ी हो? क्या तुम्हारा हार कुँवे में गिर गया है? या किसी का साथ छूट गया है? ॥१॥

हे परदेशी! न तो कुँवे में मेरा हार गिरा है और न पन-

हारिलों का साथ छूटा है; मेरे स्वामी बहुत छोटी उम्र में परदेश गये थे, उनकी शकल-सूरत तुमसे मिलती-जुलती है ॥२॥

मैं तुम्हारी माँग मोतियों से गुँथाऊँगा, और तुम्हारे शरीर को सोने से लस दूँगा। घड़ा कुँवें की जगत पर रख दो; हे बाला! मेरे साथ चली चलो ॥३॥

हे छैला! सोने को सुनार की दूकान पर गला डालो और मोतियों को भाड़ में झोंकवा दो। हंस और मोर जैसा जोड़ा छोड़कर मैं कौवे के साथ न जाऊँगी ॥४॥

हे बाला! पहले ही यह क्यों नहीं कहा? मैं तुम्हारा पुरुष हूँ और तुम मेरी स्त्री।

परदेशी पति ने बारह वर्ष बाद घर लौटकर स्त्री की परीक्षा ली।

---

[६]

निबिया कै पेड़वा जबै नीक लागे जब निबकौरी न होय।
मालिक, जब निबकौरी न होय॥
गोहूँ कै रोटिया जबै नीक लागै घी से चभोरी होय।
मालिक, घी से चभोरी होय ॥१॥

अच्छा धोबिया जबै नीक लागै धोवै बकुला कै पाँख।
अच्छा समिया जबै नीक लागै नोकर क खुश कै देय।
मालिक, नोकर क खुश कै देय ॥२॥

(गोंडा)

नीम का पेड़ तभी अच्छा लगता है, जब उसमें निबकौरी (नीम का फल) नहीं होता ॥१॥

गेहूँ की रोटी तभी अच्छी लगती है, जब वह घी में ख़ूब चुपड़ी हुई हो ॥२॥

अच्छा धोबी वही है, जो बगुले के पंख की तरह सफ़ेद कपड़ा धोवे ॥३॥

अच्छा स्वामी वही है, जो नौकर को ख़ुश रक्खे ॥४॥

---

[७]

बिरहा क मोटरी उठाउ परमेसरी
की लेइ चलु धोबिया दुआर।
आधा तो बिरहवा जे धोबो मटिअवलेन
की आधे मे दुनियाँ संसार ॥१॥

(आजमगढ़)

हे परमेश्वरी ! विरह की गठरी उठाओ, और उसे धोबी के दरवाज़े पर ले चलो। आधे विरह को तो धोबी मटियाता (धोने के लिये रेह में कपड़ा सानता) है और आधे में सारा संसार है।

---

[८]

सतगुरु लकड़ी बिलाई टाँग पकड़ी कउआ रँगवलन ठोर ।
गिरगिट उठवलन ढाल तरुवरिया भइले अजोध्या सून ॥

(बस्ती)

यह धोबी का दृष्टि-कूट है ।

---

[९]

ठीक दुपहरिया नवाब कचहरिया
कि सामी क बोलावाता नवाब ।
सामी के मुँह से बतिऔ न आवै
कैसे दीहैं मोगली जवाब ॥

(बनारस)

धोबी सचमुच बहुत सीधा होता है, और धोबिन उससे चालाक होती है । इस बिरहे में धोबिन की चिंता निर्मूल नहीं है । 'मंगली जवाब' शायद धोबिन देना जानती थी ।

---

[१०]

मोटी मोटी लिटिया लगैहै धोबिनियाँ,
कि बिहनै चलै का बा घाट ।
जोड़ी, बिहनै चलै का बा घाट ॥ १ ॥

तीनहि चीज मत भुलिहै धोबिनिया
कि टिकिया तमाखू थोड़ा आगि रे।
जोड़ी, टिकिया तमाखू थोड़ा आगि रे ॥

(बाराबकी)

हे धोबिन ! मोटी-मोटी लिट्टियाँ (बिना बेली हुई मोटी रोटियाँ जो उपले की आग में पकाई जाती है) बनाना; कल बड़े सबेरे घाट चलना है। हे मेरे बराबर काम करनेवाली ! कल घाट चलना है ॥१॥

हे धोबिन ! तीन चीज़े न भूलना—कोयले की टिकिया (जिसको जलाकर तम्बाकू पर रक्खा जाता है) , तम्बाकू और थोड़ी-सी आग।

धोबी और धोबिन घाट पर सबेरे से लेकर शाम तक साथ-साथ मेहनत करते हैं और वहीं खाते-पीते हैं। जीवन भर, जबतक उनके शरीर में बल रहता है, उनकी यही दिन चर्या है। शरीर को सँभालने के लिए उनका रोज़ाना खर्च भी बहुत थोड़ा है। त्योहारों और विवाह के अवसरों पर जजमानों के यहाँ से उन्हे कुछ स्वादिष्ट खाने की और पहनने के लिये नई धोतियाँ मिल जाया करती हैं, यही उनके जीवन के इने-गिने सुख है।

[११]

धोबी क चहिये चारि मेहरिया एक घर का एक घाट।
एक मेहरिया रोटी पकावे, एक बिछावे खाट।
दुलहिन एक बिछावै खाट।
चिरई एक बिछावै खाट।

धोबी को चार औरतें चाहिये—एक घर के लिये, एक घाट के लिए, एक रोटी पकाने के लिये और एक दुलहिन, जो खाट बिछावे।

छिओ राम छीओ। छिओ राम छीओ।
ॲगिया चुलिया मैलो रे हुइ गइ, बिन धोबी को गाँव॥
कै धुबिया पिअ लाय बसाऔ कै धुबिया के जाँव।
छिओ राम छीओ; छिओ राम छीओ॥१॥

ॲगिया और चोली मैली हो गई। यह गाँव बिना धोबी का का है। हे स्वामी! या तो धोबी लाकर गाँव में बसाओ, या मैं धोबी के घर चली जाऊँगी।

ना बिरहन की खेती पातो ना बिरहन को बंज।
जाही पेट से बिरहा उपजै गाऊँ दिना औ रात।
छिओ राम छीओ; छिओ राम छीओ।

बिरहों की न खेती होती है, न बिरहों का व्यापार होता है। बिरहे इसी पेट से पैदा होते हैं, जिन्हें मैं रातदिन गाता रहता हूँ।

चमारों के गीत

चमारों के जातीय गीत बड़े ही मनोरंजक होते है। विवाह आदि अवसरों पर वे अपने सगे-संबंधियों का गोल लेकर अपने जजमान किसानों के घर दूल्हे की न्योछावर लेने जाते हैं। उस समय उनकी जाति के कोई दो छोकडे, जिनमें एक पुरुष बना होता है, दूसरा स्त्री, और जो कई रंगों के कपड़े पहने रहते हैं, नाचते और गाते चलते हैं। और एक तीसरा पुरुष, जो 'करिंगा' कहलाता है, हँसी-मज़ाक करता है। वह जब कोई दिल्लगी की बात कहता है, तब उसे नाच-मंडली का प्रधान व्यक्ति चमड़े के तल्ले से पीठ पर पीटता है।

चमारों का मुख्य बाजा मृदंग, कटोरा और सीग है। इनका नाच सार्वजनिक होता है। गाँव के प्रायः हरएक श्रेणी के लोग चमार का नाच देखने के शौकीन होते हैं। चमार भी गाँवभर को अपना नाच दिखाते फिरते हैं।

'करिंगा' गाँव के ज़ालिम जमींदार, क्रंजूस महाजन या झूठे और अन्यायी पुरुषों की खरी आलोचना भी, किसी का नाम न बताकर, कर बैठता है; और उसका परिणाम भी कभी-कभी अच्छा निकल आता है। इस प्रकार चमार लोग एक प्रकार से समाज के आलोचक हैं।

चमारों के कुछ गीत यहाँ दिये जाते हैं:—

[१]

पण्डित मुनि बड़ ज्ञानी। जल छानि के पीवत पानी।
वही सूत का बने जनेवा उसकर पाग बनाई।
धोती पहिन क रोटी खावै पाग मे छूत ओलिआई ॥१॥

नदिया बहिगा नारौ बहिगा बसु नदियन में पानी।
कंछ मंछ घरियाल खाइ गयेन आधै दूध आधै पानी ॥२॥

हाड़ गले का मास गले का दूध गऊ से आई।
वही दूध कर निकलत मक्खन हाट बजार बिचाई ॥३॥

पंडित बड़े ज्ञानी मुनि हैं। पानी छानकर पीते हैं।

उसी सूत का जनेऊ बनता है, उसी सूत की पगडी। धोती पहनकर वे रोटी खाते हैं। लेकिन पगडी में छूत समाई हुई है ॥१॥

नदी बही, नाले बहे, नदियों में पानी बढ़ा; कच्छ-मच्छ और घड़ियाल भी वे खागये। आधे-आध पानी मिला हुआ दूध भी पी गये ॥२॥

गले में वही हाड है, गले में वही मांस है। गाय से दूध आता है। उसी दूध से मक्खन बनता है जो हाट-बाजार में बिकता है। ॥३॥

अर्थात् मक्खन से परहेज़ नहीं करते, दूध से करते है।

---

[२]

राम नहि जानै तौ और जाने का भा।
फूल तौ वो है जो रामजी का सोहै,
नाहीं तौ वेला लगाये से का भा ॥१॥

कपड़ा तौ वो है जो रामजी का सोहै,
नाही गुलाबी रँगाये से का भा ॥२॥

पूत तौ वो है जो पिताजी का सेवै,
नाहीं तौ पाजी के जनमे से का भा ॥३॥
तिरिया तौ वो है जो दूनौ कुल तारै,
नाहीं तौ माया के कोखि आये का भा ॥४॥

यदि तुमने राम को नहीं जाना तो दूसरों के जानने से क्या हुआ ?

फूल तो वही अच्छा है जो राम को सोहता है। नहीं तो बेला लगाने से क्या हुआ ? ॥१॥

कपड़ा तो वही अच्छा है जो राम को सोहता है। नहीं तो गुलाबी रंग में रँगाने से क्या हुआ ? ॥२॥

पुत्र तो वही है जो पिता की सेवा करे। नहीं तो पाजी पुत्र के पैदा होने से क्या हुआ ? ॥३॥

स्त्री तो वह है जो दोनों कुलों का उद्धार करे। नहीं तो माँ की कोख मे आने से क्या हुआ ? ॥४॥

---

[३]

धन्य है पुरुष तोरि भागि करकसा नारि मिली।
सात घरी दिन रोय के जागी तिहिन वढ़निया उठाय।
निहुरे निहुरे अँगना वटोरै घर भर को गरिआय॥
करकसा० ॥१॥
बखरी पर से कौवा रोवै पहुना आये तीन।
आवा पाहुन घरमाँ वैठा कण्डा मै लाऊँ बीन।
करकसा० ॥२॥

हँडिया भरिके अदहन दीहिन चाउर मेरइन तीन।
कठउत भरिकै माँड़ पसाइन पिया हिलोर हिलोर।
करकसा० ॥३॥

सात सेर के सात पकाइन नौ सेरे का एक।
तुम दहिजरऊ सातो खायेउ मैं कुलवन्तिन एक।
करकसा० ॥४॥

देहरी बैठे तेल लगावै सेंदुर भरावै माँगि।
अँचल पसारि कै सूरज मनावै होइहौं कब मैं राँड़ि।
करकसा० ॥५॥

हे पुरुष! तुम बड़े भाग्यवान् हो जो तुमको कर्कशा स्त्री मिली। सात घड़ी दिन चढ़ आया, तब वह रोती हुई जगी। हाथ में झाड़ू लेकर निहुरे-निहुरे वह आँगन बुहारती है और घर भर को गाली देती जा रही है ॥१॥

घर के मुँडेर पर कौवा रो रहा है। इतने में तीन मेहमान आये। स्त्री ने कहा—आओ मेहमान! घर में बैठो। मैं जंगल से कंडे बीन लाऊँ, तब रसोई बनाऊँ ॥२॥

हाँड़ी भरकर पानी उबाला। उसमें तीन चावल डाल दिये। कठौता भरकर माँड़ पसाया। हे मेहमानो! आओ, खूब हिला-हिलाकर पीओ ॥३॥

सात सेर की सात रोटियाँ बनाईं, नौ सेर की एक ही। पति से झगड़ती है—रे दाढ़ीजार! तू ने तो सात रोटियाँ खा लीं, और मैं कुल की रक्षा करनेवाली ने एक ही ॥४॥

देहली पर बैठकर तेल लगाती है। माँग को सिन्दूर से भर

रखखा है। आँचल फैलाकर वह सूर्य को मनाती है कि मैं राँड़ कब होऊँगी ? ॥५॥

[४]

तमुवाँ गिराये कहाँ जाबा हो कहाँ लगिहै ठिकान।
काहे के लगवला बबुरिया हो लगवता तू आम।
अमिरित करता भोजनियाँ हो भजता हरिनाम ॥१॥
प्रेम बाग नहीं बौरै हो प्रेम न हाट बिकाय।
बिना प्रेम कै मनुजवो हो जस अँधियरिया राति ॥२॥
प्रेम नगर की हटिया हो हीरा रतन बिकाय।
चतुर चतुर सौदा करि गये हो मूरुख ठाढ़ पछिताय ॥३॥

तुमने बबूल क्यों लगाया ? आम लगाते तो अमृत ऐसा फल खाते और राम का भजन करते ॥१॥

प्रेम बाग में नहीं बौरता (फूलता)। प्रेम बाज़ार में भी नहीं बिकता। बिना प्रेम का मनुष्य अँधेरी रात की तरह है ॥२॥

प्रेम-नगर के बाज़ार में हीरा रत्न बिकता है। चतुर लोग सौदा कर लेते हैं, मूर्ख खड़े पछताते हैं ॥३॥

[५]

ऊँचा नगर मधुबन क जहाँ हरि बस रहे।
ठडी छाया कदम की वही हरि टिक रहे ॥
जो मै ऐसा जानूँ मेरे हरि तज जायँगे।
बनती सीस का चोरा हर पेची से लग रहती ॥१॥

जो मै ऐसा जानूँ मेरे हरि तज जायँगे।
बनती नैनन का सुरमा हर डोरो से लग रहती ॥२॥

सिंह ने घेरी स्वामी गउवै, बिरहा ने घेरी रानी रुकमन।
आय छुड़ाइय ॥३॥

(बुलन्दशहर)

मधुबन का ऊँचा नगर है। जहाँ हरि बसे है। कदम्ब की ठण्ढी छाया में टिके हैं। यदि मै जानतीं कि हरि मुझे छोड़ जायँगे तो मैं उनके सिर का चीरा (पगड़ी) बनती और हरएक पेच से लगी रहती ॥१॥

यदि मैं ऐसा जानती कि मेरे हरि मुझे छोड जायँगे, तो मैं उनके नेत्रों का सुरमा बन जाती और आँख के प्रत्येक डोरे (रेशे, नस) से लगी रहती ॥२॥

हे मेरे हरि! विरह ने रानी रुक्मिणी को वैसा ही घेर रक्खा है, जैसे सिंह गाय को घेरे हो। तुम आकर छुड़ाओ ॥३॥

---

[६]

उठो री सुलच्छन नार, झाड़ू दे लो अँगना ॥१॥
घर मे तो तुम चौका दे लो, बाहर धो लो बसना ॥२॥
सास ननद के पैरो लग लो, गोद ले लो ललना ॥३॥
घर मे तो तुम बिपर जिमा लो, बाहर दे लो दछिना ॥४॥

(मेरठ)

हे सुलक्षणा स्त्री ! उठो, आँगन में झाड़ू दे लो ॥१॥
घर में चौका दे लो। बाहर बरतन धो लो ॥२॥

सास-ननद को प्रणाम कर लो। अपना बालक गोद में ले लो। घर के भीतर ब्राह्मण जिमा लो और बाहर दक्षिणा दे लो ॥३ ४॥

---

[७]

मारे डारै कटीली तोर अँखिया।
ब्रह्मा बस कीन्हा बिश्नु बस कीन्हा,
मुनि बस कीन्हा बजाइ कै बँसिया ॥१॥
काम बस कीन्हा क्रोध बस कीन्हा,
हरि बस कीन्हा लगाइ कै छतिया ॥२॥
गोपी बस कीन्हा ग्वाल बस कीन्हा,
राधा बस कीन्हा गले डारि फँसिया ॥३॥

तेरी कटीली आखें मुझे मारे डालती हैं। तू ने ब्रह्मा को वश में कर लिया, विष्णु को वश में कर लिया और वंशी बजाकर मुनियों को वश मे कर लिया ॥१॥

तू ने काम को वश मे कर लिया। क्रोध को वश में कर लिया। भगवान् को भी छाती से लगाकर वश में कर लिया ॥२॥

तू ने गोपियों को वश में किया। ग्वालों को वश में किया। गले में प्रेम की फाँसी डालकर राधा को भी वश में कर लिया ॥३॥

---

[८]

गोविन्दा नहीं गाया तै ने गाया क्या रे बावरे।
रतनो की चोरी करी रे राई करन को दान रे।
कोठे चढ़कर देखन लागे कितने ऊपर बिमान रे ॥१॥
पतिबरता भूखी मरे रे बेस्वा चाबें पान रे।
पतिबरता बैठी रहै रे बेस्वा करे गुमान रे ॥२॥
हाथी छुट गया डार से रे लसकर पड़ी पुकार रे।
नौ दरवाजे बन्द पड़े रे निकल गया उस पार रे ॥३॥
निर्धन गिरा पहाड़ से रे कोई न पूँछे बात रे।
साहूकार के. काँटा चुभ गया पड़ गई हाहाकार रे ॥४॥

अरे बावरे! तू ने गोविन्द को नहीं गाया तो क्या गाया? तू ने रत्नों की तो चोरी की है और दान के लिये राई का विचार किया है। फिर भी कोठे पर चढकर तू देख रहा है कि स्वर्ग का विमान कितनी दूर पर है ॥१॥

पतिव्रता भूखी मर रही है। वेश्या पान चबा रही है। पतिव्रता चुपचाप है। वेश्या गुमान कर रही है ॥२॥

हाथी अपने खूँटे से छूट गया। सारे लश्कर में शोर मच गया। नवों दरवाज़े बन्द पडे हैं। पर वह उस पार निकल गया ॥३॥

गरीब पहाड़ पर से गिर पड़ा, किसी ने बात भी न पूछी। साहूकार को ज़रा-सा काँटा चुभ गया, चारोंओर हाहाकार मच गया ॥४॥

शीतला माता के गीत

घर में जब किसी को शीतला (चेचक) निकलती है, तब देवी की पूजा होती है और स्त्रियाँ गीत गाती हैं। दो गीत यहाँ दिये जाते हैं:—

[१]

निमिया की डार मइया लगली हिंडोरवा कि झूली झूली।
मइया गावेली गीत, की झूली झूली ॥१॥

झुलतै झूलत मइत्रा लागली पियसिश्रा कि चली भइलें।
मलहेरिया अवास कि चली भइलें ॥२॥

सुतल वाडी की जागल ए मालिन
उठि थोडा पनिया पिश्राव ॥३॥

कैसे मै पनिया पिश्राऊँ ऐ जगतारन मइया !
मोरा गोद बलका तोहार हो ॥४॥

गोद के बलकवा मालिन भुइयाँ सुतवहू
उठि तनिक पनिश्रा पिश्राऊ ॥५॥

बलका उतार मालिन भुइयाँ सुतावेला कि निर्मल पानी।
मइया क पिश्रावेला कि निर्मल पानी ॥६॥

जैसे क मालिन हमरा जुड़वले
तैसे ही तोर पुतोहिया जुड़ाइ कि ओइसने ॥७॥

(बलिया)

नीम की डाल पर हिंडोला पड़ा है। माँ (शीतला) झूलती-झूलती गीत गा रही हैं ॥१॥

झूलते-झूलते उन्हें प्यास लगी है और वे मालिन (मालाहारी) का घर ढूँढती-ढूँढती उसके घर पहुँची ॥२॥

मालिन ! सो रही हो कि जग रही हो ? उठो, थोड़ा पानी पिलाओ ॥३॥

हे जगत् का उद्धार करनेवाली माता ! मैं कैसे पानी पिलाऊँ ? मेरी गोद में तो तुम्हारा बालक है ॥४॥

मालिन ! गोद के बालक को भूमि पर सुला दो और उठकर मुझे पानी पिलाओ ॥५॥

मालिन गोद के बालक को धरती पर सुलाकर उठती है और शीतला माता को निर्मल जल पिलाती है ॥६॥

हे मालिन ! जैसे तुमने मुझे जुड़वाया, वैसे ही तुम्हारा पुत्र तुम्हारे हृदय को शीतल करे ॥७॥

इस गीत में शीतला रोग में शीतल उपचार करने का इशारा है। साथ ही अतिथि सेवा की महिमा भी दिखाई गई है।

---

[२]

नभ फूलै फुलवरिया हो देवी कईसे क लोढ़ौं फूल।
केहिके भेजौं कियरियाँ कइसे गाछ्र पावौं ॥१॥

चाहों अकास क तरई देवी भूईं परे।
भाग क फूटल देवी बालू भोत उठावौं ॥२॥

अँखिया क फूटल देवी देखन जहान चाहो।
गोड़वा क पंगुल देवी परबत नाँघि चाहौ ॥३॥

तोहार चरनवाँ हो देवी पकरत पार पावौ।
यहि दुःख सागर देवी नइया पार लावौ ॥४॥
तोहार बलकवा कोइछे रोवत आइ देखउ।
अँसुआ पोछहु देवी आस पूरी करउ ॥५॥

हे देवी ! फुलवारी तो आकाश में फूल रही है, मैं फूल कैसे तोड़ूँ ? किसे क्यारी में भेजूँ और फूल के पौधों को कैसे पाऊँ ? ॥१॥

हे देवी ! ज़मीन पर पड़ी-पड़ी मैं आकाश के तारे चाहती हूँ। हे देवी ! मैं अभागिनी बालू की भीत उठा रही हूँ ॥२॥

हे देवी ! मैं अंधी हूँ, पर दुनिया देखना चाहती हूँ। पैर की तो पंगुल हूँ, पर पहाड़ नाँघना चाहती हूँ ॥३॥

हे देवी ! तुम्हारे चरण पकड़कर ही मैं पार पा सकूँगी। हे देवी ! इस दुःख सागर से मेरी नाव को पार लगाओ ॥४॥

हे देवी ! तुम्हारा बालक मेरे आँचल में पड़ा रो रहा है। आकर देखो। हे देवी ! इसके आँसू पोंछ दो और मेरी आशा पूर्ण करो ॥५॥

इस स्तुति में काव्य का-सा रस भरा हुआ है।

पहाड़ी गीत

पहाड़ी गीत बड़े ही रसीले होते हैं। पहाड़ी स्त्री-पुरुषों का जन्म प्रकृति की सबसे सुंदर गोद में होता है, इससे उनके गीतों में प्रकृति की मनोहर छटा का चित्रण पद-पद में पाया जाता है।

पहाड़ी गीतों में प्रेम-कथायें बहुत हैं। यों तो वहाँ भी धार्मिक त्योंहारों, विवाह आदि संस्कारों और मेले-ठेले के गीत युक्तप्रांत के दूसरे जिलों में प्रचलित गीतों ही जैसे होते हैं, पर पहाड़ों पर उपलब्ध फूलों, झीलों, नदियों के जितने सरस वर्णन बीच-बीच में पहाड़ी गीतों मे मिलते हैं, उतने पहाड़ से दूर के गीतों में नहीं मिलते। प्रकृति की यह सरसता पहाड़ियों के स्वभाव में व्याप्त होगई है, जहाँ से गीतों का जन्म होता है।

यहाँ दो पहाड़ी गीत दिये जाते हैं, एक गढ़वाल का, दूसरा मसूरी का।

गढ़वाल का गीत—झुमैलो

[१]

आई गेन रितु बौड़ी दांई जैसु फेरो ॥१॥
उबा देसी उबा जाला उदा देसि उंदो ॥२॥
मौली गेन कई भाती का फूलौर डाले ॥३॥
फूली गेन वणू मांझे ग्वीरालो बुरांसो ॥४॥
नाना भाँति गलीचा फूलू का बीछि गैने ॥५॥
प्रकृती न कनू सारा जीवू कू जगैले ॥६॥
डाल्यो माँ झपन्याली घूघुती घूरली ही ॥७॥
ऊँची ऊँचो न डाँड्यो कफ्फ पछी वासलो ॥८॥

गैहोरी गदन्यो माँ मेल्यूडी राकली स्या ॥९॥
लवि लंबि पुगडथो माँ रऽ रऽ शब्द होलो ॥१०॥
गोहूँ की जड की सारे पिंग्लो होइ गैने ॥११॥
गाला गीत बसंतीं गौका छोरा दि छोरी ॥१२॥
डांडी कांठी गैने ग्वेरू का गितूनो ॥१३॥
आइगे रस-लोही सर्वत्र जीवनू माँ ॥१४॥
छोटी नौनि नऊना डेल्यो फूलू चढ़ाला ॥१५॥
औजी नाचि बजाई कै रीझाला धियारयो ॥१५॥
जौका भाइ रला देला टालूखी अँगूड़ी ॥१७॥
मैंतु वैरायु कू अप्णो बोलौला चैत मैना ॥१८॥
नी होला छुछि मेरा क्वी मैत्या भाइ वैणा ॥१९॥
फूटी फूटी सदी रोदे औदे याद मैतै ॥२०॥

ऋतुराज दाँई के फेरे की तरह लौट आये हैं ॥१॥

ऊपर देश के लोग (भाटिया आदि) ऊपर चले जायँगे और नीचे देश के लोग नीचे ॥२॥

वनों में ग्वीराल, बुराँस आदि भाँति-भाँति के फूल फूल गये हैं। और फूलों के रंग-बिरंगे गलीचे बिछ गये हैं ॥३-४-५॥

प्रकृति ने समस्त जीवों को किस प्रकार जगा दिया है ॥६॥

घने हरे पत्तोंवाले वृक्षों के सिरों पर पेंडकियाँ अपना राग अलापती हैं ॥७॥

ऊँचे-ऊँचे पहाड़ों की चोटियों पर कप्फू पक्षी बोलेगा। गहरी उपत्यकाओं में मेल्युड़ी (एक चिड़िया) चहकेगी ॥८-९॥

लंबे-लंबे खेतों में (हल जोतते हुए किसानों का) 'र,' 'र' शब्द होगा ॥१०॥

गेहूँ जौ के खेत (पककर) पीले हो गये हैं। गाँवों की बालक-बालिकायें बसंत के गीत गायेंगी ॥११-१२॥

ग्वालों के गीतों से शिखर और उपत्यकाएँ गूँज रही हैं ॥१३॥

सब प्राणियों में प्रेम-रस का संचार हो गया है ॥१४॥

छोटे बालक-बालिकाएँ देहलियों में फूल चढ़ाएँगी। औजी (बाजा बजानेवाले) अपनी स्वामिनियों को नाच-गाना सुनाकर और बाजे बजाकर प्रसन्न करेंगे ॥१५-१६॥

जिन विवाहिता युवतियों के भाई हैं, वे उन्हे आँगी और साड़ियाँ उपहार देंगे ॥१७-१८॥

वे अपनी बहनों को मायके बुलाएँगे। मुझ अभागिनी के मायके में कोई भाई बहन नहीं हैं ॥१९॥

सदेई को मायके की याद आती है और वह फूट-फूटकर रोती है ॥२०॥

यह गीत बसंत-ऋतु में स्त्री अथवा पुरुष गाँव में एक स्थान पर एकत्र होकर गाते हैं। इसमें ऋतुओं के लौटने की उपमा उन बैलों से दी है जो अन्न को माँड़ते वक्त चक्कर काटकर जहाँ से चले थे, वहीं पर लौट आते हैं।

इसमें उन भोट (तिब्बत के) लोगों का वर्णन है जो जाड़ों में गरम देशों में उतर आते हैं और बसंत आने पर अपने देश को वापस होने लगते हैं।

इसमें नाना प्रकार के फूलों-पौदों, पर्वतीय पक्षियों के शब्दों, पके हुये जौ गेहूँ के पीत वर्ण खेतों, कृषकों के हल चलाते हुये "रS रS" ध्वनि से बैलों को हाँकने, गाँव के बालकों के वसन्ता-

गमन की बधाई के निमित्त अनेक भाँति के गीतगाने, तथा ग्वालों की मधुर ध्वनि से गुञ्जित पर्वत और गुफाओं का मनोहर वर्णन है।

चैत्र मास मे छोटी-छोटी बालिकायें प्रफुल्लित हृदय से प्रत्येक घर के द्वार पर फूल बखेरती हैं। औजी लोग अपने स्वामियों के यहाँ जाते हैं और अनेक मनोहर गीतों से उनको रिझाकर मनोवांछित पुरस्कार पाते हैं।

सदेई नामकी एक कन्या, जिसका कोई भाई नहीं है और जो अपने घर से दूर देश में ब्याही गई है, अत्यन्त कारुणिक-शब्दों में विलाप करती है कि जिन स्त्रियों के भाई होंगे वे किस प्रकार बधाई बजानेवाले औजियों का चित्त वस्त्र-धनादि पुरस्कार से प्रसन्न करेंगे, किस प्रकार वे चैत्र मास में अपनी बहन को अपने घर बुलाकर उसका यथोचित सत्कार करेंगे!

---

[२]

भूरी आखुटी काणी मिरचारे दाणे,
चार दिना ससारटी रे, मोर हस खेल लो लाणे ॥१॥

फूले तौ करो फूलट्टू दाड़े फूलो ली तीलो,
बहोत दिनारे बांछड़े हौंदे, समा पाय रे मीज़ो ॥२॥

फूले तौ करो फूलट्टू दाणी फूलो ला पारे,
तुमे जाए हम चतुरो, हम चतुरे रे व्योपारे ॥३॥

पणिज कर्म शरी मोरा, रे पांखे,
सुजगे कर दाणीये कानरू, ये तो कहि फारसी ताखे ॥४॥

घिव भरमे दूँटे, तेले भरमे कुप्पी मनामनीये,
सिलगेरे धूँआं, देखुओ ना लूपिये ॥५॥

एक पहाड़ी युवक झूरी नामक सुन्दरी पर आसक्त है; झूरी उसे प्रेम-भरी आंखों से देखती है या नहीं, इसमे प्रेमी को संदेह है। बहुत दिनों के बाद एक दिन कहीं डगर में झूरी से उसका साक्षात् हो जाता है, उस समय प्रेमी युवक ने यह गीत गाया है :—

प्यारी झूरी! तेरी आँखों की पुतलियाँ तो काली मिरच के समान सलोनी हैं! दुनिया चन्द रोज़ा है, हमारी तुम्हारी चार दिन की ज़िदगी है। आओ, हम तुम उसे हँस खेलकर काट लें ॥१॥

देखो, समय कैसा सुहावना है! चारोंओर तील के सुन्दर फूल किस तरह से फूल रहे हैं! हम तुम बहुत दिनों तक बिछुड़े रहे, आज अचानक मिलना हुआ है ॥२॥

तील और दाड़ी के फूल कैसे सुन्दर लग रहे हैं! तूने जाना कि तू बड़ी चतुर है; लेकिन इस प्रेम के व्यापार में तेरा प्रेमी तुझसे दस गुना होशियार है ॥३॥

मैं तुझसे पूछता हूँ कि तू अलग ही अलग रहकर यौवन-धनुष पर मोर-पंखी (नयन-बाण) लगाकर क्यों ताक-ताककर मेरा कलेजा छेदा करती है! पर अब तू जरा होशियार हो जा ॥४॥

मेरे घर मे घी के बहुतेरे घड़े हैं और मनों तेल के कुप्पे भरे पड़े हैं। पर अन्दर ही अन्दर कलेजे मे एक ऐसी आग सुलगा करती है, जिसका न तो धुआँ उठता है और न जिसकी लौ ही दिखलाई पड़ती है ॥५॥

राह के गीत

गाँववाले जब कहीं मेले-ठेले में या तीर्थ करने जाते है, तब राह मे प्राय: गाते ही चलते हैं। खासकर स्त्रियाँ तो बिना गाये रास्ता चलती ही नही।

राह के गीतों के स्वर भी ऐसे सरल और सुरीले होते हैं कि राह चलने की थकावट जान ही नहीं पड़ती। पुरुष, जो चुपचाप चलते हैं, थक जाते हैं और पड़ाव पर पहुँचकर बेदम होकर पड़ जाते है। पर स्त्रियाँ पड़ाव पर पहुँचकर रसोई बनाती हैं, पुरुष को खिलाकर तब स्वयं खाती हैं और बहुत कम थकी हुई दिखाई पड़ती हैं। इसका कारण क्या है? कारण यह है कि वे गीत गाती हुई चलती हैं, जो उनकी थकावट को सोखते चलते हैं।

राह के गीत अनंत हैं। यहाँ कुछ दिये जाते हैं :—

[१]

आज मुझे रघुबर की सुधि आई।
आगे आगे राम चलत हैं पीछे लछमन भाई।
जिनके पीछे चलत जानकी बिपति सही ना जाई ॥१॥

सावन गरजे भादों बरसे पवन चलत पुरवाई।
काई बृच्छ तरे भीजत होंगे राम लछन दोनों भाई ॥२॥

राम बिना मेरी सूनी अजुध्या लछमन बिन ठकुराई।
सिया बिना मेरी सूनी रसोई महल उदासी छाई ॥३॥

(मुरादाबाद)

[२]

पनवा अस धना पातरी रे, धनुहीयाँ ऐसी नै के चली रे।
फुलवा अस धना सोहनी रे, अँजोरिया ऐसी ऊइ के चली हो।

(इलाहाबाद)

[३]

बन का चले दोनों भाई, कोई समुझावत नाहीं।
भीतर रोवैं मात कौसिल्ला द्वारे भारत भाई ॥१॥
आगे आगे राम चलत हैं पीछे लछिमन भाई।
तेकरे पीछे मात जानकी मधुबन लेत टिकाई ॥२॥
भूख लगे कहँ भोजन पैहैं प्यास लगे कहँ पानी।
नींद लगे कहँ डासन पैहैं कुस कोंकर गढ़ि जाई ॥३॥
रिमझिम रिमझिम दैव बरीसै पौन बहै पुरवाई।
कौनो बिरिछ तर भीजत होइहैं रामलखन दोनों भाई ॥४॥

(फ़ैज़ाबाद)

[४]

रघुबर सँग जाव—हम न अवध में रहबै।
जौ रघुबर रथ पर जइहैं, भुँइयैं चली जाब। हम० ॥१॥
जौ रघुबर बनफल खइहैं, फोकली बिनि खाब। हम० ॥२॥
जौ रघुबर पात बिछैहैं, भुइयाँ पड़ि जाब। हम० ॥३॥

(जौनपुर)

[५]

डोला मेरो भीजै बिरछा तरे, चारो भीजैं कहार।
बीच में भीजै सुन्दर नारि। डोला मेरो भीजै बिरछा तरे ॥

ठाढ़े भीजै मैया जाये वीर, छत्री उड़ि उड़ि जाय।
आषाढ जो आयो मेरी सखीरी आषाढ में धान बुवाय॥
सावन जो आयो मेरी सखीरी, सावन में हिंडोले गड़ाय,
रेशम डोरी बराय, चन्दन पटली छुलाय।
देखो री कन्हैया झोटा दे रहो। दे रहो मेरे महाराज॥

भादों जो आयो सुनो सखी, भादों गहिर गँभीर।
क्वार जो आयो मेरी सखी, क्वार में पित्तर मिलाय,
ब्रह्मन जेंवाय, दच्छिना दिवाय, कोरे कोरे कलस भराय,
रामलीला दिखाय॥ देखो०॥

कातिक जो आयो मेरी सखी, कातिक में गङ्गा नहवाय,
अपनी तिरिया वो माता को मेला दिखाय॥ देखो०॥
अगहन जो आयो सुनो री सखी, अगहन में हँसली नथला
गढाय, रेशम पाट पुवाय, अपनी कामिनि को पहराय॥ देखो०॥

पूस जो आयो सुनो री सखी, पूस उँमेटी है बाल॥ देखो०॥
माह जो आयो सुनो री सखी, माघ में तीरथ पठाय,
हरद्वार न्हवाय, अच्छी अँगीठी जलाय, माघ में पड़े
तुषार॥ देखो०॥

फागुन जो आयो सुनो सखी, फागुन में होरिया खिलाय,
फगुआ गवाय, अच्छे अच्छे रंग बनाय॥ देखो०॥

चैत जो आयो सुनो सखी री, चैत में फूली फुलिवारि,
अच्छे अच्छे फूल रे बिनाय, गजरा बनाय,
पिया का पहिराय॥ देखो०॥

बैसाख जो आयो सुनो सखी री, अच्छे अच्छे गेहुँवा कटाय,
राम चरचा कराय, कोरी कोरी रासें उठाय,
कोठी कोठला भराय ॥ देखो० ॥

जेठ जो आयो मेरी सखी री, जेठ में बँगला छवाय,
बिजना डुराय ॥ देखो० ॥

(बुलन्दशहर)

यह बारह-मासा है। इसमें बारहो महीने के घर-गृहस्थी के कामकाज, त्योहारों और प्राकृतिक दृश्यों का वर्णन है।

बारह-मासे हिँडोले पर भी गाये जाते हैं।

---

[६]

कन्हैया बिरोगिन कर गये हमको।
खम्भा की ओट ससुर समझामें,
अरे बहुवर नाहीं तुम बिटिया हमारि।
क्या समुझावो ससुर तुम हमको,
अरे हरी हरी चुरिया दूलभ भई हमको ॥१॥

घूँघुट ओट जेठ समुझामे
अरे भैहो नाहीं तुम बहिनी हमारि।
क्या समुँझावो जेठ तुम हमको
अरे मोतिन माँग दूलभ भई हमको ॥२॥

गोदहि बैठि देवर समुझामें
अरे भाभी नही तुम माता हमारि ।

क्या समुझावो देवर तुम हमको
अरे फूलन सेज दूलम भई हमको ॥३॥
माय औ बावू अति समुझावें
एक जनम बेटी खेल गमाओ ।
क्या समुझावो माय औ बावू,
अरे पिया की छाँह दूलम भइ हमको ॥४॥
(लखनऊ)

यह एक विधवा का विलाप है। कैसा करुणाजनक है!

[७]

बदनामी न सहबै जियत जरबै ।
पूरी कचौरी हमें नाहिं चहिये,
सूखी भउरिया गुजर करबै । बदनामी० ॥१॥
झँझरे गेडुवा हमै नाहिं चहिये,
टुटही मेलियवा गुजर करबै । बदनामी० ॥२॥
लौंग बिरियवा कै हमरे काम नहीं,
सूखी सुरतिया गुजर करबै । बदनामी० ॥३॥
तोसक तकिया हमैं नाहीं चहिये,
टुटहे भिलँगवा गुजर करबै । बदनामी० ॥४॥
महला दुमहला हमहिं नाहीं चहिये,
टुटही मड़इया गुजर करबै । बदनामी० ॥५॥
साला दुसाला कै काम नहीं है,
कारी कमरिया गुजर करबै । बदनामी० ॥६॥

मीठी रे बोलिया हमैं नाहीं भावै,
पिय की सुरतिया गुजर करबै । बदनामी० ॥७॥
(जौनपुर)

[८]

जियरा हमरा बियोगी, कवन समुझावै ।
जैसे गोंड़री बिन गगरी डोलति है,
तैसे बिरन बिन बहिनी । कौन समुझावै ॥१॥
जैसे केवट बिन नैया चलतु है,
तैसे बबुल बिन बेटी । ,, ॥२॥
जैसे पिपर केर पत्ता डोलतु हैं,
तैसे पुरुख बिनु नारी । कौन समुझावै ॥३॥
(बाँदा)

[९]

छाड़ि देव राजा पराए घर आसा ।
अम्मा लगौलीं मैं अपने दिनन को
बहे पुरवइया चुवन लागे लासा ॥
बेटा जनमाई मैं अपने दिनन को
आवे पतोहिया छोड़ावे लागे नाता ॥

[१०]

कहाँ पायों कँगना कहाँ पायो मोतिया,
कहाँ पायों रे दिल-लगना,
दिल-लगना बलमुआ कहाँ पायों रे ॥१॥
हाटे पायों मोतिया बजारे पायों कँगना,
सेजा पायों रे, दिल-लगना बलमुआ ॥२॥

टुटि जइहे कँगना चिटिकि जइहें मोतिया ,
रिसाय जइहैं रे, दिल-लगना बलमुआ ॥३॥
जोड़ लेबों कँगना मँगाय लेबों मोतिया ,
मनाय लेबों रे, दिल-लगना बलमुआ ,
मनाय लेवों रे ॥४॥
(इलाहाबाद)

[१०]

सोचइ सोच तीनों पन बीते रामा ।
केहि देखि धरौं धीरज रामा ॥
पहिला सोच मोरे नैहरे में परल रामा ।
बिन बीरन मोरी पीठ उदास रामा ॥ १ ॥
दूसरा सोच मोरे ससुरे में परल रामा ।
बिनु मोरे ससुरू बैठक सून रामा ॥ २ ॥
तीसर सोच मोरे ससुरे मे परल रामा ।
बिन राजा मोरी सूनी सेज रामा ॥ ३ ॥
(बनारस)

[११]

बिगडी प्रभु नाथ ! तोहैं बिन हमरी ।
नैहर मे जो बीरन होतेन ओनहूँ क करतिऊँ आस ॥१॥
ससुरे में जो देवर होते ओनहूँ क करतिउँ आस ॥२॥
दुवरवों जौ एकौ रूखड होतै तो मैं होती ठाढ ॥३॥
(मिर्ज़ापुर)

[१२]

धै देत्यो राम, हमारे मन धिरजा ॥
सब के महलिया रामा दियना बरतु हैं,
हरि लेत्यो हमरो अँधेर । हमारे० ॥१॥

सबके महलिया रामा जेवना बनतु हैं,
हरि लेत्यो हमरो भूख । हमारे० ॥२॥
सब के महलिया रामा गेडुवा घुटतु हैं,
हमरो हरि लेत्यो पियास । हमारे० ॥३॥
सबके महलिया रामा बिरवा कुचतु हैं,
हमरो हरि लेत्यो अमलिया । हमारे० ॥४॥
सब के महलिया राडा सेजिया लगतु हैं,
हमरो हरि लेत्यो नींद । हमारे० ॥५॥
(रायबरेली)

[१३]

कब मिलिहैं रघुनाथ हमारे ।
जैसे मिले वहि द्रुपत सुता को खैंचत चीर दुसासन हारे ॥१॥
जैसे मिले प्रहलाद भगत को खम्ह फारि हरिनाकुस मारे ॥२॥
जैसे मिले प्रभु राजा बलि को होत प्रात द्वारे भये ठाढे ॥३॥
जैसे मिले प्रभु सूरस्याम को मोहिं अस पतित अनेकन तारे ॥४॥
(आगरा)

[१४]

फूहर नारि कैसे घर तारै ।
सेर भरि पीसै सवाउ सेर फाँकै, पैबे कि बेरा वहि को मूड़ पिराय ।
कैसे घर तारै ।
साँझ क सोइ पहर दिन जागै बढ़नी ढारै रोय । कैसे घर तारै ।
छानी क फूस अकेहु लाय बारै और बँडेरी कि घात लगावै ।
कैसे घर तारै ।
(हरदोई)

भिखमंगों के गीत

गाँवों में भिखमंगे बहुत घूमते रहते हैं। कोई तानपूरा, कोई किंगरी, कोई खँजड़ी, सरवन गानेवाले काठ की चिटकियाँ और कोई खाली हाथ भीख माँगते डोलते हैं। जिनके हाथ में कोई बाजा होता है, उनके मुँह में गीत भी होते हैं। बहुत-से खाली हाथवाले भी बड़े मधुर गीत गाते हैं।

भिखमंगों के गीत प्रायः दया, धर्म, वैराग्य और भगवद्भजन-संबंधी होते हैं। उनके गीतों से गाँव वालों में आत्म-बल का संचार होता है और प्रायः वे भिखमंगों को बैठाकर, कुछ सुनकर, तब उन्हें भीख देते हैं। बहुत-से भिखमंगे रसीले गीत भी गाते फिरते हैं।

यहाँ भिखमंगों के कुछ गीत दिये जाते हैं:—

[१]

जावोगे हम जानी, मन! तुम जावोगे हम जानी ॥
चार सखी मिलि चली हैं बजारे एक तें एक सयानी।
सौदा करी मनै ना भाई उठ गई हाट पंछतानी ॥१॥

राज करंते राजा जैहैं कमलापत सी रानी।
वेद पढ़न्ते ब्रह्मा जैहैं जोग करंते ज्ञानी ॥२॥

सूरज जैहैं चन्दा जैहैं जैहैं पवन औ पानी।
एक बेर धरती चलि जैहै ह्वै है बात पुरानी ॥३॥

चार जतन को बनो पींजरा जामें वस्तु बिरानी।
आवेंगे कोई लोग दिखनियाँ डूब जायँ बिन पानी ॥४॥

(जालौन)

[२]

मैं बेला तरे ठाढ़ि रहिउँ, के जदुवा डारा।
हमरे बलम की बड़ी बड़ी अँखिया,
सुरमा सराई ऐनक लिहे ठाढ़ि रहिउँ; के जदुवा डारा ॥१॥
हमरे बलम की बड़ी बड़ी जुलफैं,
तेला फुलेला कँगन लिहें ठाढ़ि रहिउँ; के जदुवा डारा ॥२॥
हमरे बलम के झीने झीने दँतवा,
खैरा सुपारी बिरवा लिहे ठाढ़ि रहिउँ; के जदुवा डारा ॥३॥

(जौनपुर)

[३]

राम और लछमन वह दोनों भाई,
वह दोनों बन को सिधारे हो राम ॥१॥
एक बन लंघे दूजा बन लंघे,
तीजे बन लागी वहै प्यास हो राम ॥२॥
दूसरे नगर का है कोई राजा
भर गड़वा जल लावै हो राम ॥३॥
तेरा तो पानी लड़के जद ही मैं पीऊँ
नाम बता दे मात पिता का हो राम ॥४॥
अपने पिता का नाम न जानूँ,
सीय हमारी माय हो राम ॥५॥
चल रे लड़के उस रे सहर को
जाँ है तुम्हारी माय हो राम ॥६॥
चंदन चौकी सीता न्हान सँजोया
केस दिये छुटकाय हो राम ॥७॥

पीछा तो फिरकर सीता देखन लागी
पीछे खड़े श्रीराम हो राम ॥८॥
फट जा री धरती समा जा री सीया
केसों की हो गई दूब हो राम ॥९॥
इस रे पुरुष का मुख नहीं देखूँ
जीवत दिया बनवास हो राम ॥१०॥
इस रे कया पर हल भी चलैंगे
खेती करैंगे श्रीराम हो राम ॥११॥
इस रे कया पै दूब जमैगी
गौवै चरावैं श्रीराम हो राम ॥१२॥
इस रे कया पै गंगा बहैंगी
नीर पिलावैं श्रीराम हो राम ॥१३॥
(आगरा)

[४]

संतौ नदी बहै यक धारा।
जैसे जल में पुरइन उपजै जल ही मेंऱ्करे पसारा।
वाके पानि पत्र नहिं भीजै ढुरकि परै जैसे पारा ॥१॥
जैसे सती चढी सत ऊपर पिय को बचन नहिं टारा।
आप तरै औरन को तारै तारै कुल परिवारा ॥२॥
जैसे सूर चढे लडने को पग पीछे नहिं टारा।
जिनकी सुरति भई लड़ने को प्रेम मगन ललकारा ॥३॥
भवसागर एक नदी बहत है लख चौरासी धारा।
धर्मी धर्मी पार उतरिंगे पापी बूड़े मझधारा ॥४॥
(झाँसी)

शकुन-विचार

गाँव के लोग जब कहीं जाने लगते हैं या कोई नया काम शुरू करते हैं, तब शकुनों का बड़ा विचार करते हैं। घर से निकलने पर खाली घड़ा, काना आदमी, तेली और विधवा स्त्री मिलती है तो कार्य की सिद्धि में उनको संदेह हो जाता है। धोबी या मुर्दा मिलता है तो वे उसे अच्छा शकुन मानते हैं और कार्य की सिद्धि का उन्हें भरोसा हो जाता है। यात्रा में छींक का भी वे विचार करते हैं।

इसी तरह किस दिशा में किस दिन यात्रा करने से कार्य सिद्ध नहीं होता, इसका भी उनको बड़ा खयाल रहता है।

छिपकली और गिरगिट भी अंगों पर गिरकर भले और बुरे फल उत्पन्न करते हैं, ऐसी उनकी धारणा होती है।

शकुन की कहावतें प्रायः सब भड्डरी की कही हुई हैं।
यहाँ शकुन संबंधी कुछ कहावतें दी जाती हैं :—

[१]

बिना तिलक का पंडित, बिना पुरुष की नारि।
बायें भले न दहिने, दरजी, सरप, सुनार॥

[२]

आगे मिला गाँव का काना। बड़ी भागि से उबरै प्राना॥

[३]

सनमुख छींक लड़ाई भाखै। पीठ पाछिली सुख अभिलाखै॥
छींक दाहिनी धन को नासै। बाम छींक सुख सदा प्रकासै॥

ऊँची छींक महा सुखकारी। नीची छींक महा भयकारी॥
अपनी छींक महा दुखदाई। भड्डर ऋषि कहिते समुझाई॥

[४]

स्वान धुनै जो अंग, अथवा लोटै भूमि पर।
तौ कारज निज भंग, अतिही कुसकुन जानिये॥

[५]

रासभ महिषी रन चढ्यो, मिले लड़त मंजार।
स्वान महिष मानव लड़ैं, येहू असुभ विचार॥

[६]

गमन समय जो स्वान। फरफराय दै कान॥
महा असुभ सो जान। सकुन शास्त्र परमान॥

[७]

एक सूद दो बैस असार। तीन विप्र औ छत्री चार।
नौ नारी जो सन्मुख आवैं। तौ मत चलिये सकुन बतावैं॥

[८]

जो कहुँ नकुल दरस नर पावै। होइ काज संपति घर आवै॥

[९]

लिये सुहागिनि सुवन उछंग। की घट भरे होइ जल गंग।
यहि विधि मिले जो आवति आगे। मनहुँ मनोरथ सोवत जागे॥

[१०]

दधि मछली आगे जो आवै! सब सगुनन तें नीक बतावै।

[११]

बायें तीतर प्रातहि बोलै। गमन समय अति सुखद अमोलै।

[१२]

भलो न दाहिन मे मिलैं, रोगी रीछ सोनार।
चहुँ दिसि बोलै गीदरा, निसि में असुभ विचार॥

[१३]

मृग बाये ते दाहिने, जो आवै तत्काल।
तौ लछमी प्राप्ती करै, चले जो प्रातहिकाल॥

[१४]

सगुन सुभासुभ जान, निकट होय तौ निकट फल।
दूरि सो दूरि बखान, कह भड्डलि सहदेव अस॥

[१५]

परिवा पडै जो छिपकली, सरट चढै जो अंग।
रोग बढावै बेगही, करै शक्ति को भंग॥

[१६]

सिर पै राज बैठवैं मूर। दें ललाट ऐश्वर्यहि पूर।
कंठ मिलावै प्रिय को लाई। काँधे पडै विजय दरसाई॥
हाथन ऊपर जो कहुँ गिरई। संपति सकल गेह में धरई।
निश्चय पीठ परै सुख पावै। परे कोंख प्रिय बन्धु मिलावै॥
परे जाँघ नर होइ निरोगी। पाँव परे तन जीव वियोगी।

[१७]

मंगर बुद्ध उतर दिसि कालू। सोम सनीचर पुरुब न चालू॥
जे बिहफै के दक्खिन जाय। बिना गुनाहे पनही खाय॥
रबी सुक्क के पच्छिम जाय। हानि होय मन मे पछिताय॥

नीरोग रहने के चुटकुले

गाँव के लोग स्वास्थ्य के संबन्ध में असावधान नहीं हैं। उन्होंने हज़ारों वर्षों के पुराने स्वास्थ्य-सम्बन्धी अनुभवों को कहावतों की छोटी-छोटी डिबियों मे भर रक्खा है, जो गाँव के गले-गले में लटकती मिलेंगी। उनके अनुभव बडे सच्चे और लाभदायक साबित हुये हैं।

एक कहावत के अनुसार मैं लगातार लगभग बत्तीस वर्षों से प्रातःकाल उठते ही, दातुन करके, पानी पी लेता हूँ। इसका परिणाम यह हुआ है कि सन् १९१६ के इन्फ़्लुएंज़ा के बाद आज तक मुझे बुखार नहीं आया और न ज़ुकाम ही हुआ। मेरा विश्वास है कि यह प्रातःकाल पानी पीने ही का फल है। अतएव गाँववालों के स्वास्थ्य सम्बन्धी अनुभव निश्चय ही सत्य की नींव पर खडे हैं और मनुष्य-शरीरधारी मात्र के लिये उपयोगी हैं।

यहाँ कुछ चुटकुले दिये जाते हैं :—

[१]

जैसा खावे अन। वैसा उपजे मन॥

[२]

खाइ के परि रहु। मारि के टरि रहु॥

[३]

खाइ के मूतै सूतै बाउँ। काहें क वैद बुलावै गाउँ॥

[४]

रोग का घर खाँसी। लडाई का घर हाँसी॥

[५]

सावन मास बियारी न कीजै। भादों ब्यारी क नाँव न लीजै॥

कुआर के दुइ पाख। किसी तने जिव राख॥
जब धरौ दिआली बारि। तब करौ बियारी चारि॥

[६]

रहै निरोगी जो कम खाय। बिगरै काम न जो गम खाय॥

[७]

पोख तलुआ ऊँच कपार। तौन खाय आपन भतार।

लोगों का विश्वास है कि जिन स्त्रियों के पैर के तलवे ज़मीन पर पूरे नहीं बैठते और जिनका माथा ऊँचा होता है, वे प्रायः विधवा होती हैं।

[८]

कडुवा स्वभाव। डूबती नाव॥

[९]

जेहि की छाती एक न बार। तेहि ते रहो सदा हुसियार॥

[१०]

आँत भारी। तो माथ भारी॥

[११]

आँख में अंजन दाँत में मंजन, नित कर नित कर नित कर।
कान में लकड़ी नाक में अँगुरी, मत कर मत कर मत कर॥

[१२]

खाय चना। रहै बना॥

[१३]

खिचड़ी के चार यार। घी, पापड़, दही, अचार॥

[१४]

गर्म खाय, ठंडा नहाय। ओस में बसै, बैद हँसै॥

[१५]

गर्म नहाय, ठंडा खाय, ओस बचा के सोवै।
ओहि के पिछवाड़े बैद बैठा रोवै॥

[१६]

गोस्त खाये गोस्त बाढ़ै, साग खाये ओझरी।

[१७]

पहिले पीवे जोगी, बीच मे पीवे भोगी, पीछे पीवे रोगी।
(भोजन के साथ जल पीने का नियम।)

[१८]

एक बार जोगी, दो बार, भोगी, तीन बार रोगी।
(शौच के लिये नियम।)

[१९]

चैते गुड़ बैसाखे तेल। जेठे पथ असाढ़े बेल॥
सावन सतुआ भादौ दही। क्वार करैला कातिक मही॥
अगहन जीरा पूसे धना। माहे मिसिरी फागुन चना॥
यह बारह जो देय बचाय। वा घर बैद कबौ ना जाय॥
(बारह महीनों के वर्जित पदार्थ।)

[२०]

सावन हर्रे भादौ चीत। क्वार मास गुड़ खायो मीत॥
कातिक मूली अगहन तेल। पूस मै किहा दूध से मेल॥
माघ मास घिउ खिचरी खाय। फागुन उठि के प्रात नहाय॥
चैत नीम बैसाखे बेल। जेठे सयन असाढ़ क खेल॥
(बारह महीनों के पथ्य पदार्थ।)

[२१]

भूखे बेर अघाने गाँडो। ता ऊपर मूरी को डाँड़ो॥

(भूख लगी हो तो बेर खाओ। अघाकर खाये हो तो गन्ना चूसो। इनके बाद मूली खाओ।)

[२२]

मूँग की दालि, कै खाय रोगी, कै खाय भोगी।

[२३]

प्रातकाल खटिया ते उठि कै पियै तुरंतै पानी।
कबहूँ घर में बैद न अइहैं, बात घाघ कै जानी॥

[२४]

क्वार करैला चैत गुड, सावन साग न खाय।
कौडी खरचे गाँठ की, रोग बिसाहन जाय॥

[२५]

कोस कोस पर पग धुवै, तीन कोस पर खाय।
ऐसा बोलै भड्डरी, मन भावै तहँ जाय॥

[२६]

सौ पग चलै खाय के जोई। ताको बैद न पूछै कोई॥

[२७]

अँतरे खोंतरे डंडे करै। ताल नहाय ओस माँ परै।
दैव न मारै अपुवै मरै।

[२८]

जाको मारा चाहिये, बिन लाठी बिन घाव।
वाको यही सिखाइये, घुइयाँ पूरी खाव॥

[२९]

दूधन नहाओ, पूतन फलो।

यह आशीर्वाद नई बहुओं को वृद्धा स्त्रियाँ प्रायः दिया करती हैं। इसमें एक यह रहस्य छिपा हुआ है कि दूध मे स्नान करने से बहू के पुत्र ही पुत्र उत्पन्न होंगे।

[३०]

मोटि मुखारी जो करै, दूध बियारी खाय।
बासी पानी जो पियै, तेहि घर बैद न जाय॥

[३१]

औंरा हर्रा पीपरि चित्त। सेंधा नमक मिलाओ मित्त॥
जर जूडी औ खाँसी जाय। नींद भरि सोवै बहुत मोटाय॥

[३२]

सोंठ सोहागा सोंचर गंधी। सहिंजन क रस गोली बंधी॥
असी सूर चौरासी बाई। तुरतै एसे जाइ नसाई॥

[३३]

बासी भात तेवासी माठा औ ककरी कै बतिया।
परे परे जुडावन आवै भुइँ लेव्या की खटिया॥

[३४]

मूँड़ मुँडाये दो नफा। गर्दन मोटी सिर सफ़ा॥

[३५]

सधुवै दासी चोरवै खाँसी प्रीति बिनासै हाँसी।
घग्घा उनकी बुद्धि बिनासै खायँ जो रोटी बासी॥

कहावतें

गाँव के समाज का सारा अनुभव कहावतों के अंदर सुरक्षित है। कहावत ही हमारे अपढ़ और अशिक्षित किसानों के अँधेरे घर के जगमगाते हुये दिये हैं। कहावतों मे उनके पूर्वजों के हज़ारों वर्षों के अनुभव भरे हुये हैं।

कहावतें किसने बनाईं और नई-नई रोज कौन बनाता रहता है, इसका पता लगना मुश्किल है। कुछ ही कहावतें ऐसी मिलेंगी, जिनमें बनानेवाले का नाम मिलेगा; बाक़ी सब कहावतें समाज में आपसे आप उत्पन्न हुई कही जा सकती हैं।

यहाँ भिन्न-भिन्न विषयों की कुछ कहावतें अलग-अलग शीर्षकों के नीचे दी जाती हैं:—

घाघ की कहावतें

घाघ अकबर बादशाह के जमाने में हुये थे। ये जाति के दुबे ब्राह्मण थे। कन्नौज के पास इनके नाम से एक पुरवा बसा हुआ था, जिसका नाम अब बदल गया है, पर पुराने काग़ज़ों में 'पूरे घाघ' का उल्लेख मिलता है। घाघ के वंशज अब भी उस गाँव में रहते हैं।

घाघ का संबंध गोरखपुर और छपरे से भी बताया जाता है। संभव है, घाघ किसी संबंध से वहाँ रहे हों। घाघ की भाषा से उनके जन्म-स्थान का पता लगाना असंभव है; क्योंकि उनकी कहावतें किसानों में इतनी लोक-प्रिय हैं कि हरएक ने अपनी-अपनी बोली मे उनका रूपांतर कर लिया है।

घाघ के जीवन-चरित की मैंने बहुत खोज की; पर उनके जन्म-स्थान के ठीक पते के सिवा और कोई प्रामाणिक बात मुझे नहीं

मालूम हुई। किसानों से एक यह बात ज़रूर सुनने को मिली कि घाघ से उनकी पतोहू की हमेशा नोक-झोंक रहती थी। घाघ जो कहावत कहते थे, पतोहू उसका उलटा कहती थी। इससे जान पड़ता है कि पतोहू भी छंद बनाना जानती थी।*

यहाँ घाघ और उनकी पतोहू के झगड़ेवाले कुछ छंद दिये जाते हैं:—

घाघ

मुये चाम से चाम कटावै, भुइँ सँकरी माँ सोवैं।
घाघ कहैं ये तीनों भकुवा, उढ़रि जाइँ औ रोवैं॥

पतोहू

दाम देइ तो चाम कटावै नींद लागि जब सोवैं।
बिरह के मारे उढरि गईं जब समुझि आइ तब रोवैं॥

घाघ

पौला पहिरे हर जोतै, और सुथना पहिरि निरावैं।
घाघ कहैं ये तीनों भकुवा, बोझ लिहे जे गावैं॥

पतोहू

अहिर होइ तो कस ना जोतै तुरकिन होइ निरावै।
छैला होय तो कस ना गावै हलुक बोझ जो पावै॥

घाघ

तरुन त्रिया होइ अँगने सोवै। छत्री होइके रन मे रोवै॥
जे सेतुवा कै करैं बियारी। धरैं घाघ उनकर महतारी॥

---

*घाघ और भड्डरी के संबध में मेरी लिखी हुई एक बड़ी पुस्तक हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद से प्रकाशित हुई है। सम्पादक

पतोहू

पतिबरता होइ अँगने सोवै। बिना अन्न के छत्री रोवै॥
भूख लागि जब करै बियारी। धरैं घाघ आपनि महतारी॥

कहा जाता है कि घाघ का पुत्र बहुत दुर्बल शरीरवाला था; लेकिन पतोहू बहुत मोटी थी। पतोहू के प्रत्युत्तर से खिसियाकर एकबार घाघ ने कहा :—

पातर दुलहा मोटलि जोय। घाघ कहैं रस कहाँ से होय॥

इसपर पतोहू ने झुँझलाकर कहा—

घाघ दहिजरा अस कस कहै। पातरि ऊख बहुत रस रहै॥

इस पर घाघ नाराज़ होकर, घर छोड़कर, कहीं चले गये।

घाघ की नीति-विषयक कहावतें सच्चे अनुभवों से भरी हुई हैं। उनकी कहावतों में किसानों के जीवन का यथार्थ चित्र अंकित दिखाई पड़ता है। इसीसे घाघ की कहावतों का किसानों में बहुत प्रचार है।

यहाँ घाघ की कुछ कहावतें दी जाती हैं :—

[१]

हँसुवा ठाकुर खँसुवा चोर। इन्हें ससुरवन गहिरे बोर।

[२]

नारि करकसा कट्टर घोर। हाकिम होइके खाइ अँकोर।
कपटी मित्र पुत्र है चोर। घग्घा इनको गहिरे बोर॥

[३]

नसकट पनही बतकट जोय। जो पहिलौठी बिटिया होय।
पातर कृषी बौरहा भाय। घाघ कहैं दुख कहाँ समाय।

[४]

कुतवा-मूतनि मरकनी, सरब-लील कुच-काट।
घग्घा चारौ परिहरौ, तब तुम पौढो खाट।

[५]

आलस नींद किसानै नासै, चोरै नासै खाँसी।
अँखियाँ लीबर बेसवै नासै, बाबै नासै दासी।

[६]

लरिका ठाकुर बूढ दिवान। ममिला बिगरै साँझ बिहान॥

[७]

ना अति बरखा ना अति धुप। ना अति बक्ता ना अति चुप॥

[८]

बाछा बैल पतुरिया जोय। इनके राखे दुखवा होय॥

[९]

एक तौ बसौ सड़क पर गाँव। दूजे बड़े बडेन माँ नाँव॥
तीजे परे दरब से हीन। घग्घा हमकौ बिपता तीनि॥

[१०]

ओछी बैठक ओछे काम। ओछी बातैं आठौ जाम॥
घग्घा जानौ तीनि निकाम। भूलि न लीजौ इनकौ नाम॥

[११]

भुइयाँ ग्वैंडे हर ह्वै चार। घर होय गिहथिन गऊ दुधार॥
उर्द क दालि जडहन कै भात। गागल निबुआ औ घिउ तात॥
सह रस खंड दही जो होय। बाँके नैन परोसै जोय॥
कहैं घाघ तब सब ही झूठा। उहाँ छाँडि इहवैं बैकूंठा॥

[१२]

पर कपड़ा लै करैं सिँगार। परधन काढ़ि करै ब्योहार॥
और के ऊपर ठानै रारि। धरैं धरोहर घर से काढ़ि॥
घाघ कहैं ये भकुवा चारि॥

[१३]

ओछो मंत्री राजै नासै, ताल बिनासै काई।
सुक्ख साहिबी फूट बिनासै, घग्घा पैर बिवाई॥

[१४]

साँझे से परि रहती खाट। पड़ी भँड़ेहरि बारह बाट॥
घर आँगनु सड घिनघिन होइ। घग्घा तजौ कुलच्छनि जोइ॥

[१५]

मुये चाम से चाम कटावै भुइँ सँकरी माँ सोवै।
घाघ कहैं ये तीनों भकुवा उढ़रि गये पै रोवै॥

[१६]

निहपछ राजा मन होय हाथ। साधु परोसी नीमन साथ॥
हुक्मी पूत धिया सतवार। तिरिया भाई रखे विचार॥
कहत घाघ हम कहत विचार। बड़े भाग से दे करतार॥

[१७]

सधुवै दासी चोरवै खाँसी, प्रीति बिनासै हाँसी।
घग्घा उनकी बुद्धि बिनासै, खायँ जो रोटी बासी॥

[१८]

आँगन में गुनवंती जोय। द्वार बैल दुइ जोड़ी होंय॥
जोत भर खेत थोर बबुरान। कहल माने पूत सयान॥
बनिया बढ़ई लोहार चमार। गाँव हरवाहा होइ बजार॥

बोवनिहारु मिलै बिनु रोक । ब्योहर चलत होइ कछु थोक ॥
थोर बहुत हो अपना गाँछ ! गाय दुधारु घरे दुइ बाछ ॥
कछु कछु खेत होय गोयडंत । होइ सेवा कछु साधू संत ॥
दया होइ मन राम लगंत । सुख से सोवै खेतिहर कंत ॥

[१६]

अब्बर खेती बाडर भाय । फूहर तिरिया हरहट गाय ॥
घाघ परोसी से झगड़ंत । रिनियाँ ब्योहर बिपति क अंत ॥

[२०]

चाकर चोर राज बेपीर । कहैं घाघ का धारी धीर ॥

[२१]

हरहट नारि बास एकवाह । परुवा बरध सुहुत हरवाह ॥
रोगी होइ होइ इकलंत । कहै घाघ ई बिपति क अंत ॥

[२२]

झिलँगा खटिया बातलि देह । तिरिया लंपट हाटे गेह ॥
बेटा बिगरि के मुदई मिलंत । कहैं घाघ ई बिपति क अंत ॥

[२३]

पूत न माने आपनि डाँट । भाई लडै चहै निन बाँट ॥
तिरिया कलही करकस होइ । नियरा बसल दुहुट सब कोइ ॥
मालिक नाहिन करै विचार । कहै घाघ ई दुक्ख अपार ॥

[२४]

ढीठ पतोहु धिया गरियार । खसम बेपीर न करै विचार ॥
घरे जलावन अन्न न होइ । घाघ कहैं सो अभागी जोइ ॥

[२५]

कोपे दई मेघ ना होइ । खेती सूखति नैहर जोइ ॥
पूत विदेस खाट पर कंत । कहैं घाघ ई बिपति क अंत ॥

[२६]

आँधर पूत बहिनि मुँहजोर । बातें तिया मचावइ सोर ॥
भाई भवहिं करै तकरार । ई दुख घाघ क बड़ा अपार ॥

[२७]

आपन आपन सब का होइ । दुख माँ नाहि सँघाती कोइ ॥
अन बहुतर खातिर झगडंत । कहैं घाघ ई बिपति क अंत ॥

[२८]

जोइगर बंसगर बुझगर भाय । तिरिया सतिवंत नीक सुभाय ॥
धन पुत हो मन होइ बिचार । कहै घाघ ई सुक्ख अपार ॥

[२९]

ओती सेम पिछौती पोय । माथा खोले तिरिया होय ॥
आँगन रेंड आलसी सुभाव । घाघ करै का भूरि बिलाव ॥

[३०]

अगसर खेती अगसर मार । घाघ कहैं ये कबहुँ न हार ॥

[३१]

बनिय क सखरज ठकुर क हीन । बैद क पूत व्याधि नहि चीन ॥
पंडित चुपचुप बेसवा मइल । कहैं घाघ पाँचो घर गइल ॥

[३२]

नसकट खटिया दुलकन घोर । कहैं घाघ ई बिपति क ओर ॥

[३३]

बाछा बैल पतुरिया जोय । ना घर रहे न खेती होय ॥

[३४]

सुथना पहिरे हर जोतै औ पउला पहिरि निरावै ।
घाघ कहैं ये तीनों भकुवा सिर बोझा औ गावै ॥

[३५]

उधार काढि ब्योहार चलावै छप्पर डारै तारो।
सारे के सँग बहिनी पठवै तीनों का मुँह कारो॥

[३६]

घर घोड़ा पैदल चलै, तीर चलावै बीन।
थाती धरै दमाद घर, जग में भकुवा तीन॥

[३७]

बिना माघ घिउ खींचरि खाय। बिन गौने ससुरारी जाय॥
बिना रितू के पहिनै पउवा। घाघ कहैं ई तीनौ कउवा॥

[३८]

चैते गुड़ बैसाखे तेल। जेठे पंथ असाढ़े बेल॥
सावन सतुवा भादों दही। क्वार करेला कातिक मही॥
अगहन जीरा पूसै धना। माहें मिसिरी फागुन चना॥
इन सबसे जो बचिहैं कोय। कहै घाघ तब ब्याधि न होय॥

[३९]

जाको मारा चाहिये, बिन मारे बिन घाव।
वाको यही बताइये, घुइयाँ पूरी खाव॥

[४०]

ताका भैंसा गादर बैल। नारि कुलच्छनि बालक छैल॥
इनसे बाचें चातुर लोग। राज छोड़ि कै साधै जोग॥

[४१]

सावन घोड़ी भादों गाय। माघ मास जो भैंस बिआय॥
कहै घाघ यह साँची बात। आपै मरै कि मलिकै खात॥

[४२]

बिन बैलन खेती करै, बिन भैयन के रार।
बिन मेहरारू घर करै, चौदह साख लबार॥

[४३]

ऊँच अटारी मधुर बतास। कहैं घाघ घर ही कैलास॥

[४४]

दो बैल को हरा। एक मेहरी को घरा।
ना वो हरा न घरा॥

[४५]

खेती करै बनिज को धावै। दोनों में एकौ हाथ न आवै॥

[४६]

तीन बैल दो मेहरी। काल बैठ बा डेहरी॥

[४७]

बूढ़ा बैल बेसाहै, झीना कपड़ा लेय।
आपुन करै नसौनी, दैवै दोषन देय॥

[४८]

बैल चौकना जोत में, औ चमकीली नार।
ये बैरी हैं जान के, कुसल करैं करतार॥

[४९]

गया पेड़ जब बकुला बैठा। गया गेह जब मुड़िया पैठा॥
गया राज जब राजा लोभी। गया खेत जब जामी गोभी॥

[५०]

जाको ऊँचा बैठना, जाको खेत निचान।
वाको बैरी क्या करे, जाके मीत दिवान॥

[५१]

बहु बजार बनिहार बनि, बारी बेटा बैल।
ब्योहर बढ़ई बन बबुर, बात सुनो यह छैल॥
जो बकार बारह बसैं, सो पूरो गिरहस्त।
औरन को सुख दै सदा, आप रहै अलमस्त॥

[५२]

घाघ बात अपने मन गुनहीं। छत्री भगत न मूसर धनुहीं॥

[५३]

पहिरि खड़ाऊँ खेत निरावै ओढ़ि रजाई झोंकै।
घाघ कहैं ये तीनों भकुवा बे मतलब की भोंकै॥

[५४]

परहथ बनिज सँदेसे खेती। बे बर देखे ब्याहै बेटी॥
द्वार पराये गाड़ै थाती। ये चारों मिलि पीटैं छाती॥

[५५]

ढिलढिल बेंट कुदारी के। हँसि के बोलै नारी से॥
हँसि के माँगै दम्मा। तीनों काम निकम्मा॥

[५६]

खेत न जोतै राडी। न भैंसि बेसाहइ पाड़ी॥
न मेहरि राखै मर्द कै छाड़ी॥

[५७]

परमुख देखि अपन मुख गोवै। राह चलत में अँगुठा टोवै॥
आँचर टारि के पेट दिखावै। अब का छिनारि डंका बजावै॥

[५८]

अहिर मिताई बादर छाही। होवै होवै नाहीं नाहीं॥

[५९]

बेहुई क डंड पुत्र कर सोग। निति उठि चलै बटाऊ लोग॥
जिनकी मरी अधबिचे नारि। बिना आगि के जरिगे चारि॥

[६०]

बिन दरपन के बाँधै पाग। बिना नून के राँधै साग।
बिना कंठ के गावै राग। ना वह पाग न साग न राग॥

[६१]

बाम्हन नंगा जो भिखमंगा भँवरी वाला बनियाँ।
कायथ नंगा करै पढ़ौनी बढ़हुन में निरगुनियाँ॥
नंगा राजा न्याव न देखै नंगा गाँव निपनियाँ।
दयाहीन सो छत्री नंगा नंगा साधु चिकनिया॥

भड्डरी की कहावतें

भड्डरी कब हुये और वे कहाँ के रहनेवाले थे, इसका अभी तक पता नहीं चला। कहा जाता है कि कोई एक पंडित काशी से ऐसा मुहूर्त शोधकर चले, जिसमें गर्भाधान होने से बड़ा विद्वान् पुत्र उत्पन्न होता। पर घर तक पहुँचने के पहले ही शाम होगई और विवश होकर उन्हें एक अहीर के दरवाज़े पर टिक जाना पड़ा। उनको उदास देखकर अहीरिन ने उदासी का कारण पूछा और उनके मन का भेद जानकर उसने स्वयं उनसे पुत्र की याचना की। उसीके फल-स्वरूप भड्डरी का जन्म हुआ। अतएव ब्राह्मण पिता और अहीरिन माता से भड्डरी का जन्म माना जाता है।

भड्डरी ने वर्षा-विषयक बहुत से अनुभव अपनी कहावतों मे कहे हैं। विशेषज्ञों का कथन है कि उनकी बातें अधिकांश सच निकलती है। अब तो भड्डरी नाम की एक जाति ही बन गई है, जो भड्डरी की कहावतों के आधार पर वर्षा का भविष्य बताया करती है। इस जाति के लोग गोरखपुर जिले में अधिक हैं। राजपुताने में भड्डली नाम की एक स्त्री की कहावतें मिलती हैं। भड्डरी और भड्डली दोनों का विषय प्रायः एक है और दोनों की बहुत-सी कहावतें भी भाषा के साधारण भेद के साथ एक-सी हैं।

वर्षा के सिवा भड्डरी ने नीति और स्वास्थ्य तथा शकुन आदि के सम्बन्ध में भी बहुत-सी कहावतें कही हैं।

यहाँ भड्डरी की कुछ लोक-प्रसिद्ध कहावते दी जाती हैं :—

[१]

सनमुख मेघ पवन से लरै। हँसि के बात नारि जो करै॥
वे बरसैं वे करैं भतार। बैठे भड्डर करैं विचार॥

[२]

रवि ताम्बूल सोम को दर्पण। मंगल धनिया करै समर्पण।
बुद्ध मिठाई बिहफै राई। सुक्र कहै मोहि दही सुहाई॥
सनिचर बायभिडंग जो पावौं। कालहु जीति पूत घर लावौं॥
का करै भद्रा का दिगसूल। कहैं भडर सब चकनाचूर॥

[३]

आगे मंगर पाछे भान। बरखा होइहै ओस समान॥

[४]

नर के नाम के अच्छर लीजै। जो तिथि होय सो गुना करीजै।
सिव नेत्रन से दीजै भाग। कहैं भडर निज होई काज॥
एक शेष में लाभ बखानै। दूजे छेम कुसल घर आनै।
जो सम परै नहीं जय पाउ। ब्रह्मा हरि हर जो चलि आउ॥

[५]

पुरुब गुधुरिया पच्छिम प्रात। उत्तर दुपहर दक्खिन रात॥
का करै भद्रा का दगसूल। कहैं भडर सब चकनाचूर॥

भड्डरी की वायु-परीक्षा तथा वर्षा और अकाल सम्बन्धी कहावतें अलग दी गई हैं, वहाँ देखना चाहिये।

लाल बुझक्कड़ की कहावतें

लाल बुझक्कड फर्रुखाबाद जिले के रहनेवाले थे। असली नाम लाल था, बुझक्कड पदवी थी। घाघ की देखा-देखी इन्होंने भी अपनी बुद्धि का चमत्कार दिखलाना शुरू कर दिया था। अपने गाँव में यही सबसे अधिक चतुर गिने जाते थे। इससे गाँववाले जब कोई नई चीज़ देखते, तब इनके पास उसका नाम पूछने के लिये दौड़ आते थे।

[१]

एक दिन लाल बुझक्कड के गाँव के पास से कोई हाथी गया था। राह में उसके पैरों के निशान देखकर गाँववाले चकराये। उन्होंने लाल बुझक्कड को लाकर दिखलाया और पूछा यह क्या है?

लाल बुझक्कड़ ने फौरन् जवाब दियाः—

जानै लाल बुझक्कड़, और न जानै कोई।
पाँव मे चक्की बाँधि के, हरिन कुलाँचो होई॥

[२]

एक दिन गाँववालों ने जंगल में तेली का एक पुराना कोल्हू पड़ा हुआ देखा। वे लाल बुझक्कड के पास पहुँचे। लाल बुझक्कड ने उसे देखकर उनका भ्रम यह कहकर दूर कर दियाः—

लाल बुझक्कड़ बूझते, वे तो हैं गुरु ज्ञानी।
पुरानी होकर गिर पड़ी, खुदा की सुर्मादानी॥

[३]

लाल बुझक्कड एक बार दिल्ली गये थे। वहाँ उन्होंने हाथी देखा; पर उसका नाम वे नहीं जानते थे। एकबार उनके गाँव के

पास एक हाथी आया। उसे देखकर गाँववालों ने लाल बुझक्कड़ से पूछा—यह क्या है? :—

लाल बुझक्कड ने कहा:—

बूझै लाल बुझक्कड़, और न बूझै कोई।
रैन इकट्ठी हो गई, कै दिल्ली वारो होई॥

[४]

एकबार लाल बुझक्कड़ के गाँव के एक रईस ने बताशे बाँटे। एक लड़का छप्पर में लगे हुये लकड़ी के खंभे को दोनों हाथों के बीच में किये हुये खड़ा था। उसने अँजुली में बताशे ले लिये। पर वह अँजुली खोलता है तो बताशे गिर जाते हैं; नहीं खोलता तो खंभे से अलग नहीं हो सकता। गाँववाले और लड़के के माँ-बाप बहुत हैरान हुये। अंत में लाल बुझक्कड़ बुलाये गये। उन्होंने यह तरकीब सुझाई कि छप्पर में छेद कर दो और लड़के को ऊपर उठाकर खंबे से बाहर कर लो:—

जानै लाल बुझक्कड, और न जानै कोई।
ठाठ बडेरो तोड़ दो, तब निरवारो होई॥

माधौदास की कहावतें

माधौदास कौन थे और कहाँ के थे, यह अज्ञात है। इनकी कहावतें ज्यादातर नीति-विषयक हैं। कुछ कहावतें यहाँ दी जाती हैं :—

[१]

प्रथमै कथा सुनो चित लाय। लोभी गुरू लालची न्याय॥
यह गहि लीजौ मन में टेक। माधौदास परिहरौ एक॥

[२]

मूरिस चेला सेवक चोर। इनते मिलै न सुख की कोर।
यह गहि लीजै मन में गोय। माधौदास परिहरौ दोय।

[३]

जुआ जुल्म अरु त्रिया पराई। जाय लाज अरु होय हँसाई॥
धनु धरती वह लीहै छीन। माधौदास परिहरौ तीन॥

[४]

कुटिल नारि घर कट्टर घोर। कपटी मित्र पुत्र है चोर॥
इनते नित उठि बाढै रारि। माधौदास परिहरौ चारि॥

[५]

दूरि में खेती कुवाँ न पास। ओछो मंत्री नीच निवास॥
बैल मरकहा गाँव किरौंच। माधौदास परिहरौ पाँच॥

[६]

नित उठि तिरिया पर घर बसै। पुरिष बिहीनो घर घर हँसै॥
सास ससुर की करै न कानि। लोग कुटुम की रखै न मानि॥
वह तौ चाहति अपनो हठौ। माधौदास परिहरौ छठौ॥

[७]

दुशमन ठाकुर जल अगास। जाँजरि नइया बास कुवास ॥
साँझ सेज सोवै परभात। माधौदास परिहरौ सात ॥

[८]

पर कपड़ा लै करै सिंगार। पर धन काढ़ि करै ब्योहार ॥
बिन दामन जनि जावै हाट। माधौदास परिहरौ आठ ॥

[९]

पैसा देइ न दूजे हाथ। राह चलै ना बैरी साथ ॥
अपने बल पर ठानै रारि। काँटो खुभरो चलै निहारि ॥
बड़े बुजुर्गन लखि के नवौ। माधौदास परिहरौ नवौ ॥

[१०]

चोरी चुगुली झूठ अदाया। काम क्रोध अरु ममिता माया ॥
जो तुम चाहौ हरिपुर बसौ। माधौदास परिहरौ दसौ ॥

हृदयराम की साखी

हृदयराम कौन थे ? और कहाँ के थे, यह अभी अज्ञात है। इनकी साखियाँ किसानों में कहीं-कहीं प्रचलित हैं।

यहाँ कुछ साखियाँ दी जाती हैं। ये मुझे मझौली राज (गोरखपुर) से प्राप्त हुई थीं:—

[१]

पहला वचन कहौं सतभाव। लोभी गुरू लालची न्याव।
बरजे पंच धरबि मति टेक। हृदयराम परिहरिये एक॥

[२]

आलसी सेवक जर्जरी कमान। परतिय नेह बैरी कर पान॥
अपने पहर रहो मत सोय। हृदयराम परिहरिये दोय॥

[३]

भूपति मित्र न मित्र सोनार। जौहरी मित्र न मित्र कलार॥
वास कुवास ठाकुर मतिहीन। हृदयराम परिहरिये तीन॥

[४]

तुरया अड़ा कुबुद्धी राव। बाढी नदी झाँझरी नाव॥
कपटी मित्र चंचला नारि। हृदयराम परिहरिये चारि॥

[५]

गाँव सगाई नियरें वास। घर मत राखो उखड़ू दास॥
तपसी देखे त्रिया का नाच। हृदयराम परिहरिये पाँच॥

[६]

पानी पावक मति करु धीर। पान तमोलिन खंड गँभीर॥
जुआ जामिनी साँप मति गहो। हृदयराम परिहरिये छहो॥

[७]

आप अशंक शंक ले लड़ी। कपटी न्याव राय से करी ॥
ठाकुर साहु बिचलि कहै बात। हृदयराम परिहरिये सात ॥

[८]

चुगुलदास कछु-लपंट चोर। इनको तज निखंड की ओर।
बिना द्रव्य जनि जइहा हाट। हृदयराम परिहरिये आठ ॥

[९]

वेश्या ओझा बन्दर पोश। ई तीनों जनमे के खोट।
जबले शंक चले जग मोहू। हृदयराम परिहरिये नौहू ॥

[१०]

पर कपड़ा ले करी सिंगार। पर धन काढ़ि करी व्यापार।
विधवा कामिन से जनि हँसो। हृदयराम परिहरिये दसो।

[११]

यह सुन चोर न चोरी करे, न चुगल उजारे राज।
हृदयराम के राज में, बाघ चरावे गाय ॥

अनेक तरह के अनुभवों की कहावतें

गाँववाले अपने समाज के हरएक पहलू को बड़ी ही बारीकी से देखते हैं और अपने अनुभवों को कहावतों के डब्बों में बन्द करके अगली पीढ़ी के लिये रख छोड़ते हैं। उनके अनुभव बहुत सच्चे हैं और उनकी सूक्ष्म दृष्टि का परिचय देते हैं।

यहाँ कुछ कहावतें दी जाती हैं :—

[१]

दुइ खाटे, दुइ बाटे। छः छावैं, छः निरावैं।

[२]

चारि कौर भित्तर। तब देव और पित्तर॥

[३]

जब देखी परनारि। तब फूटि गईं चारि॥

[४]

नई आईं दरजिनि काठ कै कतन्नी।
नोखे की नाउनि बाँस कै नहन्नी॥

[५]

बिन घरनी क घर। जैसे नीमी क तर॥

[६]

भैंस सुखी जो डबहा भरै। राँड़ जो सुखी जो सबका मरै॥

[७]

रिन कै फिकिरि पुत्र कै सोच। नित उठि पंथ चलैं जे रोज॥
बिना अगिनि ये जरिगै चारि। जिनकै अधबिच मरिगै नारि॥

[८]

जो विधवा ह्वै करै सिंगार। उनसे सदा रह्यो हुसियार॥

[९]

फूहरि उठीं दुपहरे सोय । हाथ बढ़निया दीन्हीं रोय ॥

[१०]

जब परनारि पुरुष से हँसी । जैसे सत्तरि वैसे असी ॥

[११]

जेहिका नौकर देइँ जवाब । नारि पुत्र मानैं न दबाव ॥
रहैं परोसी रिस तें भरे । कुसल 'जोतिसी' गँठते टरे ॥

[१२]

हँसी सो फँसी ।

[१३]

आपन छाँड़ि परार कहायो । गयो पूत जब माँगा पायो ॥

[१४]

माँगे न आवै भीख । तो सुरती खाना सीख ॥

[१५]

उधार दिया । गाहक खोया ॥

[१६]

वक्त पडे बाँका । तो गधे को कहो काका ॥

[१७]

सारी खुदाई एक तरफ । जोरू का भाई एक तरफ ॥

[१८]

जबरा करै जबरई, अबरा करै नियाव ।

[१९]

अबरे की लुगाई, गाँव भर कै भौजाई ।
जबरे की लुगाई, गाँव भर कै काकी ॥

[२०]

माँ से पूत पिता से घोड़ा। बहुत नहीं तो थोड़म थोड़ा॥

[२१]

सौ बेर सत्तू नौ बेर चबेना। एक बेर रोटी लेना न देना॥

[२२]

कछु हाथ कै सफाई कछु डाँडी क फेर।
औरन को तीन पाव बनिये का सेर॥

[२३]

अकेले की चोरी, ठठेरे की जोरी,
कोरी की मरोरी, खोले नहीं खुलती॥

[२४]

पूँरी परै जो पूरी खाये सब कोई पूरी खाय।
चार दिना के छुन्न-मुन्न में निकल दिवाला जाय॥

[२५]

सोना जानै कसे। मनई जानै बसे॥

[२६]

नोखे की भगतिन गड़ारी की माला।

[२७]

आपन गोड़ कुल्हारिन काटै तेहिकै कौन इलाज॥

[२८]

बाढ़ै पूत पिता के धर्मा। खेती उपजै अपने कर्मा॥

[२९]

चिरई का धन चोंच।

[३०]

आगम बुद्धी बानिया, पच्छिम बुद्धी जाट।
तुरत बुद्धी तुरकड़ा, बाम्हन संपट पाट॥

[३१]

अँटका बनिया देय उधार।

[३२]

अति भक्ति चोर का लच्छन।

[३३]

आती बहू जनमता पूत।

[३४]

आधे माघे। काँमरि काँधे॥

[३५]

एक तो गडरिन, दुसरे लहसुन खाये।

[३६]

काहे तुम धमधूसर मोट। धन कै फिकिरि न रिन कै चोट॥

[३७]

क्या सासू जी अटको मटको, क्या मटकाओ कूल्हा।
डोली परसे जब उतरूँगी, जुदा करूँगी चूल्हा॥

[३८]

खाओ मन भाता। पहनो जग भाता॥

[३९]

खर्च बढ़ा औ कम रोजगार। मनई घर के सब सुकुवार॥
टटिया घर पर चौकी फरै। वहि घर कुसल विधाता करैं॥

[४०]

गरीब की जवानी, गरमी क घाम।
जाड़े की चाँदनी, आवै न काम॥

[४१]

घर में आई जोय। टेढ़ी पगिया सीधी होय॥

[४२]

चंपा के दस फूल चमेली की एक कली।
मूरख की सारी रात चतुर की एक घड़ी॥

[४३]

चाकर है तो नाचाकर।
ना नाचे तो ना चाकर॥

[४४]

जोरू टटोलै गठरी। माँ टटोलै अँतड़ी॥

[४५]

टूटी डाढ़ बुढ़ापा आया। टूटी खाट दरिद्दर छाया॥

[४६]

तन सीतल हो सीत से। मन सीतल हो मीत से॥

[४७]

तरवार मारे एक बार। एहसान मारे बारबार॥

[४८]

दिल्ली की बेटी, मथुरा की गाय। करम फूटै तो अन्तै जाय॥

[४९]

धन के पंद्रह मकर पचीस। जाड़ा चिल्ला दिन चालीस॥

[५०]

नया धोबी, नाई पुराना ।

[५१]

पतुरिया रूठी, धरम बचा ।

[५२]

परदेसी की प्रीति को, सब का मन ललचाय ।
दोई बात की खोट है, रहै न सँग लै जाय ॥

[५३]

पहिली बहुरिया, दुसरी पतुरिया, तिसरी कुकुरिया ।

[५४]

पूरब का बरधा, उत्तर का नीर । पच्छिम का घोड़ा, दक्खिन का चीर

[५५]

प्रीत न जाने जात कुजात । भूख न जाने बासी भात ॥
नींद न जाने टूटी खाट । प्यास न जाने धोबी घाट ॥

[५६]

फूहरि के घर खिड़की लगी । सब कुत्तों को चिन्ता पड़ी ॥
बाँड़ा कुत्ता चितवै मौन । लगी तो है पर देगा कौन ॥

[५७]

बनी के सौ साले, बिगड़ी के एक बहनोई भी नहीं ।

[५८]

ना हँस करके कर गहे, ना रिस करके केस ।
जैसे कंता घर रहे, वैसे रहे बिदेस ॥

[५९]

बनिया जब उठायो चाहै, तब दुकान झाड़ै ।

[६०]

पढ़ियो पूत सोई। जाते हँडिया खुद-बुद होई॥

[६१]

चटोरी कुतिया नई सिल।

[६२]

हंसा रहे सो रमि गये, कौवा भये दिवान।
जाहु विप्र घर आपने, को काको जजमान॥

[६३]

छैला की हैं तीन निसानी। कंघा बटुआ सुर्मादानी॥

[६४]

एक बार डहँकावै। बावन वीर कहावै॥

[६५]

उंचिलस की मारी आगि, बाकी को मारो गाँव, नाहीं पनपत।

[६६]

नाव चढे झगडालू आवैं, पौरत आवैं साखी।

[६७]

बिन घरनी घर भूत क डेरा।

[६८]

ईख की खेती अजाधन, बिटियन की बढवारि।
एते से धन ना घटै, तो बडे से कीजौ रारि॥

[६९]

ढीली धोती बानिया, उलटी मूँछ सुनार।
बेंड़े पैर कुम्हार के, तीनों की पहचान॥

बुझौवल

किसान को रात-दिन अपने बाल-बच्चों और जानवरों के लिये मेहनत करनी पड़ती है। उसे नहाने-खाने तक की फुरसत नहीं मिलती, तो खेलने और जी बहलाने की तो कहाँ से मिले? फिर भी दिमाग़ को हलका करने के लिये उसने बहुत-से बुझौवल बना रक्खे हैं। दोपहर को या रात में जब वह खाने-पीने से निश्चित होकर चौपाल में बैठता है, तब घंटे दो घंटे बुझौवलों से वह अपना मनोरंजन कर लेता है। उसके बुझौवलों से यह पता चलता है कि उसने हरएक चीज़ को कितनी सूक्ष्म दृष्टि से देखा है।

कुछ बुझौवल इस संग्रह में ऐसे हैं, जिनमें सवासी खेरे के घासीराम का नाम है। बाक़ी का पता नहीं, उन्हें किसने और कब बनाये।

यहाँ कुछ बुझौवल दिये जाते हैं:—

[१]

आधा दूलह आधा रोग। बीच बाग में भा संजोग॥
जो बैठे तो उठन न पावै। पंडित होइ सो भेद बतावै॥ बरगद

[२]

एक पुरुष के नारी चार। सबै चतुर मिलि करैं बिहार॥
काहू के घर जात न कोई। खानपान एक साथहि होई॥
अँगूठा और अँगुलियाँ

[३]

चार कोन का चौतरा, चौसठ घर ठहरायँ।
चतुर-चतुर सौदा करैं, मूरख फिरि-फिरि जायँ॥ शतरंज

[४]

वेहाथ क बेगोड क पहाड़ चढा जाथै।

देखा तो बनखंडी बाबा कौन जनारौ जाथै॥ धुवाँ, बादल

[५]

अत्थर सिल पत्थर संगमरमर खजूर।

पाँचो जने लौट जाओ, हम जावै बड़ी दूर॥ कौर

[६]

सोने की डिबिया में सालिकराम। अर्थ करौ या छोड़ो ग्राम॥

खिरनी

[७]

एक थाल मोतियों से भरा। सबके सिर पर औंधा धरा॥

चारोंओर थाल वह फिरै। मोती उससे एक न गिरै॥

आकाश के तारे

[८]

थरिया भर लावा। आँगन भर छितरावा॥ तारे

[९]

इत गई चित गई। कोने में दबक गई॥ लाठी

[१०]

झाँझर कुआँ रतन कै बारी। नहि बूझौ तो दैहौ गारी॥ चलनी

[११]

लड़का पेट में। दाढी उड़े हवा में॥ भुट्टा

[१२]

चार खूँट का एक खेत। कचरी घनी मतीरा एक॥ तारे और चंद्रमा

[१३]

हौज भरा था हिरन खड़ा था। हौज सूख गया हिरन भाग गया॥ दीपक

[१४]

काली नदी कलूटा पानी। डूब मरी चन्द्रावलि रानी॥ पूरी

[१५]

पहिले भई थी बहिनें बहिनें फिर भये थे भइया।

भइया ऊपर बाप भये फिर भई थी अइया॥

महुवे की कली, फूल फल और बीज।

[१६]

एक बाग में ऐसा हुआ। आधा बकुला आधा सुआ॥ मूली

[१७]

चार अहक चार बहक चार सुरमें-दानी।

नौरंग तोता उड़ गया तो रह गई बिरानी॥ चारपाई

[१८]

एक राजा मरा कोई रोया नहीं। एक सेज बिछी कोई सोया नहीं।

एक फूल खिला कोई तोड़ा नहीं। एक हार टूटा कोई जोड़ा नहीं॥

सूर्य, बादल, चंद्रमा, तारे।

[१९]

एतवत से हम एतवत भइलीं। खनखन मुँदरी पहिरत गइलीं॥ ईख

[२०]

स्याम बरन मुख उज्जर कित्ते? रावन सीस मंदोदरि जित्ते॥

हनुमान पिता करि लैहो। तब राम पिता भरि देहौ॥

प्रश्न—उड़द का भाव क्या? ग्यारह सेर। प्रश्न—हवा से साफ करके लूँगा। उत्तर—तब दस सेर दूँगा।

[२१]

ताप ताप तीरी। हल्दी सी पीरी॥
चटाक चूमा ले गई। बड़ा दुख दे गई॥ बर्रे

[२२]

एक नार दक्खिन से आई। सोरह बेटी तीन जमाई॥ चौपड़

[२३]

चाक डोले चकडूमर डोले। खैरा पीपर कबहुँ न डोले॥ कुवाँ

[२४]

तीतर के दो आगे तीतर। तीतर के दो पाछे तीतर॥
आगे तीतर पाछे तीतर। तो बतलाओ कितने तीतर॥ तीन

[२५]

चार आना बकरी आठ आना गाय।
चार रुपैया भैंस बिकाय। बीसै रुपया बीसै जिउ॥
३ भैंस, १५ गाय, २ बकरी

[२६]

एक शहर है ऊँचो बनो। यक यक घर में यक यक जनो॥
चीन्हि न परत पुरुष औ नारी। पहिरे सभी बसंती सारी॥ बर्रै

[२७]

प्रश्न

कौन तपसी तप करै, कौन जो निन्ति नहाय।
कौन जो सब रस उगिलै, कौन जो सब रस खाय॥

उत्तर

सूरज तपसी तप करै, ब्रह्मा उठि निन्ति नहाय।
इन्द्र जो सब रस उगिलै, धरती सब रस खाय॥

[२८]

प्रश्न

बरषा बरसी रात में, भीजे सब बनराय।
घड़ा न डूबे लोटिया, क्यों पंछी प्यासा जाय॥

उत्तर

ओस पड़ी थी रात को, भीजे सब बनराय।
घड़ा न डूबे लोटिया, यों पंछी प्यासा जाय॥

[२९]

प्रश्न

कौन चाहै बरसना, कौन चाहै धूप।
कौन चाहै बोलना, कौन चाहै चूप॥

उत्तर

माली चाहै बरसना, धोबी चाहै धूप।
साहु चाहै बोलना, चोर चाहै चूप॥

[३०]

प्रश्न

कौन सरोवर पाल बिनु, कौन पेड़ बिनु डाल।
कौन पखेरू पंख बिनु, कौन नींद बिनु काल॥

उत्तर

नैन सरोवर पाल बिनु, धरम मूल बिन डाल।
जीव पखेरू पंख बिनु, मौत नींद बिनु काल॥

[३१]

नाजुक नारि पिया सँग सोती, अंग सों अंग मिलाय।
पिय को बिछुड़त जानि के, संग सती हो जाय॥

बत्ती और तेल।

[३२]

चिक्कन खेत पटुक्कन पीढ़ा। तामें बइठ कराइत कीरा॥ पुस्तक

[३३]

चारि पटी चारि खड़ी। चारों में दो दो गड़ी॥ खाट

[३४]

मिला रहे तो नर रहे, अलग रहे तो नार।
सोने का सा रंग है, कोइ चतुरा करे विचार॥ चना

[३५]

सिर पर जाली, पेट से खाली।
पसली देख एक एक निराली॥ मोढ़ा

[३६]

आधा नर आधा मृगराज। जुद्ध बिआहे आवै काज।
आधा टूट पेट माँ रहै। बासू केरि खगिनिया कहै॥ नरसिंहा

[३७]

अगहन पइठ चैत के प्याट। तेहि पर पंडित करैं भप्याट॥
है नेरे पैहो ना हेरे। पंडित कहैं बिगहपुर केरे॥
कचौरी

[३८]

सात पाँच नव तेरह, साढे तीन अढ़ाई।
ता बिच हमको राखियो, तुमको राम दोहाई॥ मन

[३९]

निहुरे-निहुरे घर में आया। जो कछु पाया सब कुछ खाया॥
जब आया तो सब कोई सुत्ता। का सखि साजन! ना सखि, कुत्ता॥

[४०]

सावन फूलै चैत में फरै। ऐसो रूख बोइ का करै॥
घासी कहैं सवासी खेरे। है नियरे, पर पैहौ हेरे॥ बबूल

[४१.]

बारह लोचन बीस पग, छमुख छानबे दंत।
घासी की यह तिरिया पूछै, बूझि बताओ कंत॥
दो जोड़ी बैलों का पटेला या हेंगा

[४२]

हाथी हाथ हथिनियाँ काँधे। जात कहाँ हौ बकुचा बाँधे।
घासी कहैं सवासी खेरे। है नियरे पर पैहो हेरे॥
गज और गजी का थान

[४३]

पहुँचा एक हथेली तीन। अँगुरी लिहेनि बिधाता छीन॥
घासी कहैं सवासी खेरे। है नियरे पर पैहौ हेरे॥
ढाक का पत्ता

[४४]

नीचे पानी ऊपर आग। बजी बाँसुरी निकरयो नाग॥
घासी कहैं सवासी खेरे। है नियरे पर पैहो हेरे॥ हुक्का

[४५]

प्रश्न—चंचल घोडी चतुर नार। कौन लगै तेरा हाँकनहार॥
उत्तर—बीनन वाली बीन कपास। हमरी इनकी एकै सास॥
सरहज और नन्दोई

[४६]

रागी बढ़े राग नहिँ जानैं। गाय खायँ ब्राह्मण नहिँ मानैं ॥
स्वरूप पाँव देही पर धरैं। काम कसाइन केसे करैं ॥
घासी कहैं सवासी खेरे। है नियरे, पर पैहो हेरे ॥

मच्छर

[४७]

देत होयँ तौ न लाना। न देत होयँ तौ लाना ॥
घासी कहैं वासी खेरे। है नियरे पर पैहो हेरे ॥

पटेला या हेंगा

[४८]

कारो है पर कौआ नाहि। रूख चढ़ै पर बंदर नाहि ॥
मुँह को मोटो भिड़हा नाहिं। कमर को पतलो चीता नाहि ॥
घासी कहैं सवासी खेरे। है नियरे पर पैहो हेरे ॥

चींटा

[४९]

जबै खवाओ तबही खाती। खाती जाती चलती जाती ॥
चलती जाती हगती जाती। सबके घर घर है दिखलाती ॥
घासी कहैं सवासी खेरे। है नियरे पर पैहो हेरे ॥

चक्की

[५०]

एक रूख अगड़धत्ता। जिसके पेड़ न पत्ता ॥ अमरवेल

[५१]

सोने की सी चटक। बहादुर की सी मटक।
बहादुर गये भाग। लगा गये आग ॥ बिच्छू

[५२]

तनिक सी टुरिया टुकटुक करे। लाख टके का बनिज करे॥

हथौड़ी

[५३]

हरी डंडी लाल कमान। तोबा तोबा करे पठान॥

लाल मिर्चा

[५४]

एक अचंभा हमने सुना, मुरदा रोटी खाय।
टेरे से बोलै, नहीं, मारे से चिल्लाय॥ मृदंग

[५५]

इधर गई उधर गई। और न जाने किधर गई॥ राह

[५६]

तनक सो लड़का बाम्हन को। तिलक लगावे चंदन को॥ उड़द

[५७]

कारी पोनी, तागा सेत। भैंस का थन

[५८]

तनक सी राई। सारे गाँव बिथराई॥ तारे

[५९]

एक संदूक काँटे जड़ी। जब खोलो तब चंपाकली॥ कटहल

[६०]

कटोरा पर कटोरा। बेटा बाप से भी गोरा॥ नारियल

[६१]

लाल गाय खर खाय। पानी पिये मर जाय॥ आग

[६२]

तेली को तेल कुम्हार को हंडा। हाथी की सूँड नवाब को झंडा॥

दीपक

[६३]

ऐसा फूल गुलाब का, रहो चाँदनी छाय।
पिता रहे हैं पेट में, बालक गये बिकाय॥

अफीम का बीज

[६४]

एक तमाशा देखा प्रात। नाच उलटि के घोडा खात॥ चना

[६५]

दुबली पतली गुन भरी, सीस चलै निहुराय।
वह नारी जब हाथ मे आवै, बिछुड़े देय मिलाय॥ सुई

[६६]

चार अंगुल का पेड़, सवा मन का पत्ता।
फल लागे अलग अलग, पके सब इकट्ठा॥

कुम्हार का चाक

[६७]

एक जीव असली। जिसके हाड न पसली॥ जोंक

[६८]

छोटा मुँह, बडी बात। तोप

[६९]

लगाये लाज लागे, लगाये बिना सरे नहीं।
धन हैं वाके भाग, जिसके लगे नहीं॥ पैबन्द

[७०]

चलीं सखी सब मार झुंड। आईं नहाने सीतल कुंड॥
कपड़े पहने भीतर गईं। नंगी होकर बाहर भईं॥

उड़द या मूँग की दाल

[७१]

फाटो पेट दरिद्री नाँव। पंडित घर में वाको ठाँव॥
श्री को अनुज विष्णु को सारो। पंडित होय सो अर्थ बिचारो॥

शंख

[७२]

खड़े तो खड़े। बैठे तो खड़े॥ सींग

[७३]

गोल-गोल गुटिया, सुपारी जैसा रंग।
ग्यारह देवर लेन आये, गई जेठ के संग॥ अरहर

[७४]

तनी न जाय बुनी न जाय, न धोबी के घर जाय।
आठ महीना ओढ़ि के, कातिक में धरी जाय॥ केंचुल

[७५]

गजभर कपड़ा बारह पाट। बन्द लगे हैं तीन सौ साठ॥

वर्ष, महीना, दिन

[७६]

हाथ से बोये मुँह से चुने॥ अक्षर

[७७]

तन के कोमल मुँह के जोर। चाल चलैं जस तुरकी घोड़॥

खटमल

[७८]

टेढ़ी मेढी बाँसरी, बजैया नहीं कोई।
सीता चलीं सासरे, रुकैया नहीं कोई॥ नदी

[७६]

आठ पाँव का अबलक घोड़ा। चलै रैन दिन फिरै न मोड़ा॥
समय

[८०]

नीचे माटी ऊपर माटी। बीच में सुन्दरदेई॥ हल्दी

[८१]

चारि कोन चौदह चौपारी। रोवँ कूकुर हँसै बिलारी॥ टट्टर

[८२]

मूँड़ काटि भुइ माँ धरी, लोथी गंग नहाइ।
हाँड़न का कोइला भवा, खालैं गईं बिकाइ॥ पटुवा

[८३]

एक ताल माँ गगरी न बूड़ै, हाथी ठाढ नहाइ।
पात-पात पेड़न के भीजैं, पुरुष पियासो जाइ॥ ओस

[८४]

चितरी गाइ, चितकबरा बछुरा। हुँकरै गाइ, बिजुकि जाइ बछुरा॥
धनुष-बाण

[८५]

आठ पहर चौंसठि घड़ी। ठाकुर पर ठकुराइन चढी॥
तुलसी-दल

[८६]

सरग नीव पताल दुआरा। पंडित होइ सो करै विचारा॥
बया का घोंसला

[८७]

चच्ची के दो कान, चचा के कानै नाहीं।

चच्ची चतुर सुजान, चचा कुछ जानै नाहीं॥

कड़ाही और तवा

[८८]

अपने-अपने साल सलाए, अपने अपने सूत।

बढ़ई मूतै कुम्हार के मुँह में, पिऐ लोहार का पूत॥ कोल्हू

[८९]

संसी हथौड़ा निहाई। पहिले कौन बनाई?

[९०]

दिन को लटकै। राति को चिपटै॥

केवाड़े की साँकल

[९१]

बिन दादे का पोता। भीती-भीती रोता॥ पोतना

[९२]

राम न दीन्हीं रावनहिं, ना भीमै भगदंत।

त्रिपुर न दीन्हीं संकरहिं, सो दीन्हीं मोहि कंत॥ पीठ

[९३]

बाप बेटा दो। रोटी बाँटी तीन।

सबको बराबर मिली। दो बेटा, एक बाप।

[९४]

लाख टका की सेर भर, पैसे की कितनी? आधा सेर

[९५]

एक मन दाना चारि बाट। जितना तौलो परै न घाट॥

१, ३, ९, २७ सेर के बाट

[९६]

आगे पीछे चलति है, दो मुख नागिनि नाहिँ ।
आगि खाय चकोर नहिँ, देखी सहरन माँहि ॥ रेल

[९७]

हम माँ बेटी तुम माँ बेटी, खड़े खेत में जायँ ।
तोड़े गन्ने तीनि अब, एक एक कैसे खायँ ॥

माँ, बेटी, नवासी

[९८]

नीची थी ऊँची बैठाई । ऐसी नार सभा में आई ॥
है वो नार करम की हीन । जिन देखा तिन थू-थू कीन ॥

पीकदानी

[९९]

नभ तें गिरो न भुइँ दयो, जननी जनी न ताहि ।
देखि उजेला जो कोइ भागै, पकरि ले आओ ताहि ॥

अँधेरा

[१००]

बाप का नाम और, नाती पूत का नाम और ।
यह पहेली बूझ के, पीछे उठाओ कौर ॥ भात

[१०१]

नाव के भीतर नदी । नदी के भीतर नाव ॥ आँख

ढकोसले

ढकोसले बुझौवल से भिन्न होते हैं। ढकोसलों में बेसिर-पैर की असंभव बातें होती हैं, जो हँसाने का काम देती हैं। कैसा भी उदास आदमी हो, ढकोसले सुनकर हँसे बिना न रहेगा।

हिन्दी में अमीर ख़ुसरो के ढकोसले बहुत मशहूर हैं। लेकिन वे अमीर ख़ुसरो के दिमाग़ की कोई नई उपज नहीं थे। गाँवों में ढकोसले कहने की चाल बहुत पुरानी है। संभव है, अमीर ख़ुसरो ने देहाती ढकोसलों को देखकर ही उसी तर्ज़ पर अपने ढकोसले बनाये हों।

यहाँ कुछ ढकोसले दिये जाते हैं।—

[१]

ऊँट पनारे बहि चला, मैं जानों पिय मोर।
हाथ नाइ घिय ढूँढ़न लागी, मिला कठौती का बेंट॥

[२]

रजवा कै बिटिया भुजावै चली राब।
बसुला रखान हैये नाहिं कैसे पछोरों खिचरी।

[३]

मोरे पिछवरवाँ बैरि फूली लदा बद्द पहिती।
एक डंडा जो मारयों दमरी का नौ गज माठा।

[४]

ऊँदिन कहै ऊँट सों, सुनु पिय मोरी बात।
राजा एक पद्मिनी हेरै कोउ कोउ मोही क सुगात॥

खेती की कहावतें

खेती संसार के सब धंधों से श्रेष्ठ धंधा है, बल्कि सारे धंधों का मूल है। एक कहावत में भी इसकी श्रेष्ठता स्वीकार की गई है—

उत्तम खेती मध्यम बान। निखिद चाकरी भीख निदान॥

किसानों ने अपने खेती-सम्बन्धी अनुभवों को भी कहावतों में भर रक्खा है और वे प्रायः उनका लाभ भी उठाते रहते हैं। छोटे-छोटे छन्दों और मामूली बोल-चाल की भाषा में होने के कारण खेती की कहावतें प्रायः सभी चतुर किसानों को कंठस्थ रहती हैं। पुस्तक पढकर खेती के तरीके जानने की उनको ज़रूरत कम रहती है।

यहाँ खेती से सम्बन्ध रखनेवाले भिन्न-भिन्न विषयों की चुनी हुई कहावतें अलग-अलग दी जाती हैं :—

वायु-परीक्षा

[१]

होली झर को करौं विचार। सुभ अरु असुभ कहौ फल भार॥
पूरब दिशि की बहै जो बाय। कछु भींजै कछु कोरो जाय॥
पच्छिम वायु बहै अति सुन्दर। समयो निपजै सजल बसुन्धर॥
उत्तर बाय बहै दड़बड़िया। पिरथी अचूक पानी पड़िया॥
दक्खिन बायु बहै धन नास। समया निपजै सनई घास॥
जोर झकोरैं चारो बाय। दुखिया पिरथी जूझैं राय॥
जोर झलौ आकाशै जाय। तौ पृथ्वी संग्राम कराय॥

झलौ = वायु।

[२]

जब जेठ चलै पुरवाई। तब सावन धूरि उड़ाई ॥

[३]

असाढ़ मास पुनगौना। धुजा बाँधि के देखौ पौना ॥
जो पै पवन पुरब से आवै। उपजै अन्न मेघ झर लावै ॥
अगिन कोन जो बहै समीरा। पड़ै काल दुख सहै सरीरा ॥
दखिन बहै जल थल अलगीरा। ताहि समै जूझैं बड़ बीरा ॥
नैऋत कोन बूँद ना परैं। राजा परजा भूखन मरैं ॥
पच्छिम बहै नीक कर जानो। पड़ै तुसार तेज डर मानो ॥
बायब बहै जल थल अति भारी। मूस उगाह दण्ड-बस नारी ॥
उत्तर उपजै बहु धन धान। खेत बात सुख करै किसान ॥
उत्तर से जल फूहीं परे। मूस साँप दोनों अवतरें ॥
कोन इसान दुन्दुभी बाजैं। दह्यू-भात भोजन सब गाजैं ॥
जो कहुँ हवा अकासे जाय। परै न बूँद काल परि जाय ॥
दक्खिन पच्छिम आधो समयो। सहदेव जोसी ऐसे भनयो ॥

[४]

सावन में पुरवइया, भादों में पछियाँव।
हरवाहे हर छोड़ दे, लरिका जाय जियाव ॥

[५]

भादों जै दिन पछिवँ बयार। तै दिन माघे परै तुसार ॥

[६]

अंबाझोर बहै पुरवाई। तब जानो वर्षा-ऋतु आई ॥

[७]

एक बयार बहै जो ऊता। मेड से पानी पीयो पूता॥

ऊता = उत्तर से

[८]

जौ पुरवा पुरवाई पावै। सूखी नदिया नाव चलावै॥

पुरवा = पूर्वाषाढ

[९]

दिन सात चलै जो बाँड़ा। सूखे जल सातों खाँड़ा॥

बाँड़ा = अग्निकोण

[१०]

पहिला पवन पुरुब से आवै। बरसै मेघ अन्न सरसावै॥

[११]

पुरुवा मे जो पछिवाँ बहै। हँसि के नारि पुरुष से कहै॥
ऊ बरसे ई करे भतार। घाघ कहै यह सगुन विचार॥

[१२]

बयार चलै ईसाना। ऊँची खेती करौ किसाना॥

[१३]

बायु चलै जो पछिमा। माँड कहाँ से चखना॥

[१४]

बायु चलै जो उतरा। माँड पियेंगे कुतरा॥

[१५]

बायु चलै जो दखिना। डोला पानी लखना॥

[१६]

बायु चलै जो पुरवा। पियो माँड का कुरवा॥

[१७]

सब दिन बरसै दखिना बाय। कभी न बरसै बरखा पाय ॥

[१८]

सावन पछिवाँ भादौं पुरवा आसिन बहै इसान।
कातिक कंता सींक न डोलै गाजैं सबै किसान ॥

[१९]

पूस बदी दसमी दिवस, बादर चमके बीज।
तो बरसै भर भादौं, साधो खेलो तीज ॥

[२०]

माघ पूस जो दखिना चलै। तो सावन के लच्छन भलै ॥

[२१]

छिन पुरवैया छिन पछियाँव। छिन-छिन बहै बबूला बाव ॥
बादर ऊपर बादर धावै। तब भड्डर पानी बरसावै ॥

[२२]

सावन के मुख पछिमा। उहै समय की लछिमा ॥

लछिमा = लक्षण

[२३]

बायू में जब बायु समाय। घाघ कहैं जल कहाँ अमाय ॥

[२४]

औवा बौवा बहै बतास। तब जानो बरखा कै आस ॥

[२५]

फागुन मास बहै पुरवाई। तब गेहूँ में गेरुई धाई ॥

[२६]

माघै पूस बहै पुरवाई। तब सरसों को माहूँ खाई ॥

[२७]

जै दिन भादौ बहै पछार । तै दिन पूस मे परै तुसार ॥

[२८]

सावन क पछुवाँ दिन दुइ चार । चूल्ही के पाछे उपजै सार ॥

[२९]

सावन मास बहै पुरवाई । बरधा बेंचि लिहा धेनु गाई ॥

[३०]

दखिनी कुलच्छिनी । माघ पूस सुलच्छिनी ॥

[३१]

चैत के पछुवाँ भादौ जल्ला । भादौ पछुवाँ माघ क पल्ला ॥

जल्ला = जल; पल्ला = पाला ।

वर्षा-विज्ञान

[१]

एक मास ऋतु आगे धावै । आधा जेठ असाढ़ कहावै ॥

[२]

माघ क ऊखम जेठ क जाड़ । पहिले बरखा भरिगा ताल ॥
कहैं घाघ हम होब वियोगी । कुवाँ खोदि के धोइहैं धोबी ॥

[३]

दिन में गरमी रात में ओस । कहैं घाघ बरखा सौ कोस ॥

[४]

उलटे गिरगिट ऊँचे चढ़ै । बरखा होइ भूइँ जल बुड़ै ॥

[५]

दिन को बादर रात को तारे । चलो कंत जहँ जीवैं बारे ॥

[६]

ढेले ऊपर चील जो बोलै । गली-गली में पानी डोलै ॥

[७]

उलटा बादर जो चढ़ै, विधवा खड़ी नहाय ।
कहैं घाघ सुनु भड्डरी, यह बरसे वह जाय ॥
[पाठान्तर—वह पानी लै आवै, यह पानी लै जाय ॥]

[८]

एक बूँद जो चैत में परै । सहस बूँद सावन में हरै ॥

[९]

दूर गुड़सा दूर पानी । नीयर गुड़सा नीयर पानी ॥
[गुड़सा=रीवाँ नाम का एक कीड़ा । यह पेड़ पर ऊपर चढ़-

कर बोले तो वर्षा देर में आयेगी। नीचे बोले तो बरसात क़रीब होगी।]

[१०]

दिन का बादर। सूम का आदर ॥

[११]

धनुष पड़ै बंगाली। मेह साँझ या सकाली ॥

[बंगाली=बंगाल की तरफ़। सकाल=सबेरा।]

[१२]

जेठ मास जो तपै निरासा। तब जानो बरखा कै आसा ॥

[१३]

तपै मृगसिरा जोय। तो बरखा पूरन होय ॥

[१४]

दिन को बद्दर रात मे चन्दर। बहै पुरवैया झब्बर-झब्बर ॥

घाघ कहैं कछु होनी होई। कुँवा के पानी धोबी धोई ॥

[१५]

पूरब धनुहीं पच्छिम भान। घाघ कहैं बरखा नियरान ॥

[१६]

छिन पुरवैया छिन पछियावँ। छिन छिन बहै बबूला बाव ॥

बादर ऊपर बादर धावै। तबै घाघ पानी बरसावै ॥

[१७]

चमके पच्छिम उत्तर ओर। तब जान्यों पानी है जोर ॥

[१८]

साँझै धनुक बिहानै पानी। कहैं घाघ सुनु पंडित ज्ञानी ॥

[१६]

सुक्रवार की बादरी, रहै सनीचर छाय।
कहैं घाघ सुनु घाघिनी, बिन बरसे नहिँ जाय॥

[२०]

उत्तर चमकै बीजली, पूरब बहनो बाउ।
घाघ कहैं सुनु भड्डरी, बरखा भीतर लाउ॥
अर्थात् पानी बहुत जल्द बरसेगा।

[२१]

करिया बादर जी डरवावै। भूरे बदरे पानी आवै॥

[२२]

जो हर होंगे बरसनहार। काह करेगी दखिन बयार॥

[२३]

साँझे धनुष सकारे मोरा। ये दोनों पानी के बौरा॥

[२४]

पछियाँव क बादर। लबार क आदर॥

[२५]

पहिले पानि नदी उफनायँ। तौ जानियो कि बरखा नायँ॥

[२६]

पूलो परिवा गाजै। तो दिना बहत्तरि बाजै॥

[२७]

भैंस जो जन्मे पँड़वा, बहू जो जन्मे धी।
समै कुलच्छन जानिये, कातिक बरसे मीं॥

[२८]

माघ मे बादर लाल धरै। तब जान्यो साँचो पथरा परै।

[२९]

जब बरखा चित्रा में होय। सगरी खेती जावै खोय ॥

[३०]

मघा, भूमि अघा।

[३१]

मघा के बरसे, माता के परसे। भूखा न माँगे फिर कुछ हर से॥

[३२]

जो कहुँ मग्घा बरसै जल। सब नाजों में होगा फल॥

[३३]

रोहिनि बरसै मृग तपै, कुछ कुछ अद्रा जाय।
कहैं घाघ घाघिनि से, स्वान भात नहिं खाय॥

[३४]

सावन सुक्ला सत्तमी, गगन स्वच्छ जो होय।
कहैं घाघ सुनु घाघिनी, पुहुमी खेती खोय॥

[३५]

आदि न बरसै अदरा, हस्त न बरसै निदान।
कहै घाघ सुनु भड्डरी, भये किसान पिसान॥

[३६]

सिंहा गरजै। हथिया लरजै॥

[३७]

आर्द्रं चौथ। मघ पंचक॥

[३८]

धनि वह राजा धनि वह देस। जहवाँ बरसै अगहन सेस॥
पूस में दूना माघ सवाई। फागुन बरसै घरौं से जाई॥

[३९]

पूरब के बादर पच्छिम जायँ। पतली पकावै मोटी पकाव ॥
पछुवाँ बादर पुरब क जायँ। मोटी पकावे पतली पकाव ॥

[४०]

लाल पियर जब होय अकास। तब नाहीं बरखा कै आस ॥

[४१]

ढेकी बोलें जाय अकास। अब नाहीं बरखा कै आस ॥

[४२]

रात दिना घमछाहीं। घाघ कहैं अब बरखा नाहीं ॥

[४३]

रात निबद्दर दिन को घटा। घाघ कहैं अब बरखा हटा ॥

[४४]

बोली लोखरि फूली कास। अब नाहीं बरखा कै आस ॥

[४५]

जब बहै हबहचा कोन। तब बनजारा लादै नोन ॥

[४६]

उगे अगस्त फुले बन कासा। अब छोड़ो बरखा कै आसा ॥

[४७]

पुक्ख पुनरबस भरे न ताल। फिर बरसेगा अगिली साल ॥

[४८]

जब बरसेगा उत्तरा। नाज न खावे कुत्तरा ॥

[फसल अच्छी होगी।]

[४९]

यक पानी जो बरसै स्वाती। कुरमिनि पहिरै सोने क पाती ॥

[५०]

हथिया पूँछ डोलावै। घर बैठे गोहूँ आवै॥

[५१]

हस्त बरसे तीन होय, साली सक्कर मास।
हस्त बरसे तीन जायँ, तिल, कोदो, कपास॥

[५२]

जो बरसे पुनरबस स्वाति। चरखा चले न बोले ताँति॥

[५३]

हथिया बरसे चित्रा मँडराय। घर बैठे किसान रिरियाय॥

[५४]

चीत के बरसे तीन जायँ। मोथी मास उखार॥

[५५]

चढ़त जो बरसै चित्रा, उतरत बरसै हस्त।
कितनौ राजा डाँड़ ले, हारे नाहिँ गिरस्त॥

[५६]

भुअरि भैंसिया चँहुली जोय। पूस महावट बिरले होय॥

[५७]

रात करे घाप-घूप दिन करे छाया। कहैं घाघ अब बरखा गया॥

[५८]

आवत अदरा ना दियो, जात न दीन्ह्यो हस्त।
मघा मान जो ना कियो, तौ का करै गिरस्त॥

[५९]

कातिक सुद एकादसी, वादल बिजुरी होय।
तो असाढ़ मे भड्डरी, बरखा चोखी होय॥

[७७]

जो बदरी बादर माँ खमसे । कहैं भड्डरी पानी बरसै ॥

[७८]

आसाढ़ मास आठें अँधियारी । जो निकले चन्दा जलधारी ॥
चन्दा निकले बादल फोड़ । साढे तीन मास बरखा का जोग ॥

[७९]

आगे रवि पीछे चलै, मंगल जो आसाढ़ ।
तो बरसै अनमोल ही, पृथी अनन्दै बाढ़ ॥

[८०]

रात निर्मली दिन को छाँहीं । कहैं भड्डरी पानी नाहीं ॥

[८१]

सावन सुकला सत्तमी, छिपि कै ऊगै भान ।
तब लग दैव बरीसिहै, जब लग देव उठान ॥

]

सावन केरे प्रथम दिन, उवत न दीखै भान ।
चार महीना बरसै पानी, याको है परमान ॥

[८३]

तीतर बरनी बादरी, रहै गगन पर छाय ।
कहै डंक सुनु भड्डरी, बिन बरसे ना जाय ॥

[८४]

कलसे पानी गरम है, चिरियाँ न्हावै धूर ।
अंडा लै चींटी चढ़ै, तौ बरखा भरपूर ॥

[८५]

सावन उखमें भादो जाड़ । बरखा मारे ठाढ़ कछाँह ।
जौ पुरवा पुरवाई पावै । झूरी नदिया नाव चलावै ॥
ओरी क पानी बँडेरी धावै ॥

[८६]

अगहन द्वादस मेघ असाढ़ । असाढ बरसे अछ्लाधार ॥

[८७]

मघा में मच्छर पुरवा डाँस । उत्रा में भई सब की नास ॥

[८८]

अद्रा बरसे पुनबंस जाय । दीन आन कोऊ ना खाय ॥

[८९]

सावन सूखा स्यारी । भादौ सूखा उन्हारी ॥

[९०]

हथिया बरसे चित्रा मँडराय । घर बैठे किसान रिरियाय ॥

[९१]

चटका मघा न चटका उत्तर । दूध भात में परगा मूसर ॥

[९२]

माघ महावट पूस बिनौरा । फागुन बरसै न खोरा ॥

[९३]

चढतै बरसै अद्रा, उतरत बरसै हस्त ।
कितनो मालिक डाँड ले, सुखी रहै गिरहस्त ॥

[९४]

चढ़त बरसै चित्रा, उतरत बरसै हस्त ।
कितनो राजा डाढ़ ले, हारेन नँहि गृहस्त ॥

[९५]

एक पानी जो बरसै स्वाती । कुरमिन पहिरै सोने की पाती ॥

[९६]

बिन भादौ के बरसे । बिन माता के परसे ।

[९७]

रोहिनि जो बरसै नहीं, और बरसे जेठ नित मूल।
एक बूँद स्वाती पड़ै, लागै तीनों तूल॥

[९८]

हस्त बरसे तीन होय शाली शक्कर मास।
हस्त बरसे तीन जायँ तिल कोदो कपास॥

[९९]

आवत आदर ना दियौ, जात न दीनो हस्त।
ये दोनों पछितायेंगे, पाहुन और गृहस्त॥

[१००]

क्या रोहिनि बरसा करे, बचै जेठ नित मूल।
एक बूँद कृतिका पडे, नासै तीनों तूल॥

[१०१]

माघ मास जो पड़ै न सीत। महँगा नाज जानियौ मीत॥

[१०२]

कातिक मावस देखै जोसी। रवि, सनि, भौमवार जो होसी॥
स्वाती नखत्रा पुख जोग। काल पड़ै औ नासै लोग॥

[१०३]

निकला सोहै तारा। धेनू दूध न कहरियों गारा॥
निकला लंका का राऊ। धेनू दूध न बैलों चाऊ॥

[१०४]

काहें पंडित पढ़ि-पढ़ि मरो। पूस अमावस की सुधि करो॥
मूल बिसाखा पूरवाषाढ़। झूरा जान जो बहरे ठाढ़॥

[१०५]

पूस उजेली सप्तमी, अष्टमी नौमी गाज।
मेघ होय तो जान लो, अब सुभ होइहै काज॥

[१०६]

पूस मास की सप्तमी, जो पानी नहिं देय।
आरद्रा बरसै सही, जल थल एक करेय॥

[१०७]

पूस अँधेरी सप्तमी, भिन भिन बादल होय।
सावन सुदी पूनो, बरषा अच्छी होय॥

[१०८]

पूस बदी दसमी दिवस, बादल चमकै बीज।
तो बरसे भरे भादों, साधो खेलो तीज॥

[१०९]

मार्ग बदी आठै दिन बरसै। सो मग्घा भर सावन बरसै॥

[११०]

पूस मास दसवीं अँधियारी। बदली होय घोर अँधियारी॥
सावन दसमी के दिवस आय। भरे मेघ चौहद्दी बरसाय॥

[१११]

चैत मास उजियाले पाख। आठों दिवस बरसता राख॥
नवें दिवस जित बिजली होय। ता दिस काल हलाहल होय॥

[११२]

माघ मास में बीज भिगोये। फिर बैसाख में टेसू धोये॥
जेठ मास जो तपै निरासा। तो जानो बरषा की आसा॥

[११३]

अद्रा भरनी रोहिनी, मघा उत्तरा तीन।
आन मङ्गल आँधी चलै, तब लों बरषा छीन॥

[११४]

अद्रा तो बरसै नहीं, मृगसिर पवन न जोय।
तो यों भाखै भड्डरी, बरषा बूँद न होय॥

[११५]

तपै मृगसिरा जोय। तो बरषा पूरन होय॥

[११६]

जेठ बदी दशमी दिना जो होवै शनिवार!
पानी होवै न धरती में होवे हाहाकार॥

[११७]

अद्रा बरसै पुनरबस जाय। दीन अन्न कोऊ ना खाय॥

[११८]

पूनो पुरवा गरजे। दिना बहत्तर बरसे॥

[११९]

असाढ़ मास आठैं अँधियारी। जो निकले चन्दा जलधारी॥
चन्दा निकलै बादर फोट। साढ़े तीन मास बरषा का जोग॥

[१२०]

चित्रा स्वाती विसाखरी, जो बरसै आषाढ़।
चलो पिया परदेसै, भारी पड़िहैं काल॥

[१२१]

कर्क के मङ्गल होय भवानी। दैव धूल बरसैंगे पानी॥

[१२२]

दर्सों अषाढी कृष्ण की, मङ्गल रोहिनी होय।
सस्ता धान बिकाय सो, हाथ न छूये कोय॥

[१२३]

सुदी असाढ़ की पञ्चमी, गज घम घम्मा होय।
तो यों जानो भड्डरी, मधुरा मेघा जोय॥

[१२४]

श्रावण सुकला सप्तमी, उदय जो देखे भान।
या जल मिलिहै कूप में, या गंगा असनान॥

[१२५]

भादों बदी एकादसी, जो ना छिटकै मेघ।
चार मास बरसै नहीं, यह भाखै सहदेव॥

[१२६]

भादों मासै ऊजरी, लखौ मूल रविवार॥
तो यों भाखै भड्डली, साख भली नरहार॥

[१२७]

चित्रा स्वाती बिसाखरी, ना सावन बरखंत।
हाली अन्नै संग्रहो, दूनो मोल करन्त॥

[१२८]

सावन कृष्ण एकादसी, जेतो रोहिनि होय।
तेतो समया जानियो, खरी घसै जिनि कोय॥

[१२९]

भादों मास तीज अँधियारी। मेघ न बरसे खेत बोहारी॥

[१२०]

पुरवा बादल पच्छिम जाय। वासे वृष्टि अधिक बरसाय॥
जो पश्चिम से पूरब जाय। वर्षा बहुत न्यून हो जाय॥

[१२१]

नैऋत्य भूमि बूँद ना परै। राजा परजा भूखों मरै॥

[१२२]

सावन बदी एकादसी, बादल ऊगै सूर।
तो यों भाषै भड्डली, घर-घर बाजै तूर॥

[१२३]

पुरवाई बहुतै बहै, विधवा पान चबाय।
वह पानी ले आवे, वह पानी लै जाय॥

[१२४]

सावन सुकला सप्तमी, चन्दा छिटिक करै।
की जल देखै कूप में, कि कामिनि सीस धरै॥

[१२५]

सावन पहिली पञ्चमी, जोर की चलै बयार।
तुम जाना पिय मालवा, हम जावैं पितु-सार॥

[१२६]

सावन शुक्ला सप्तमी, उभरे निकले भान।
हम जायँ पिय माइके, तुम कर लो गुजरान॥

[१२७]

अद्रा तो बरसै नहीं, मृगसिर पवन न जोय।
भाषै ऐसा भड्डरी, बरषा बूँद न होय॥

[१३८]

धुर असाढ़ की अष्टमी, ससि निर्मल जो दीख।
पीव जाय के मालवा, माँगत फिरिहैं भीख॥

[१३९]

नवीं असाढ़ी बादली, जो गरजै घन घोर।
कहैं भड्डरी ज्योतिषी, काल पड़ै चहुँ ओर॥

[१४०]

दशी असाढ़ी कृष्ण को, मंगल रोहिनी होय।
सस्ता धान बिकाइगो, हाथ न छुइहै कोय॥

[१४१]

दिन को बादल रात तरैयाँ। ये नारायन काह करैयाँ॥

[१४२]

असाढ मास पूनो दिवस, बादल घेरे चंद।
तो भड्डर जोसी कहैं, होवै परम अनंद॥

[१४३]

सावन पहिली पंचमी, चन्दा छिटिक करै।
की जल देखे कूप में, की सुन्दरि नीर भरै॥

[१४४]

आगे मङ्गल पीछे भान। बरखा होवे ओस समान॥
आगे मेघा पीछे भान। बरखा होवे ओस समान॥
आगे मेघा पीछे भान। पानी-पानी रटै किसान॥

[१४५]

सावन पुरवाई चलै, भादों में पछियाव।
कन्त डँगरवा बेंच के, लरिका भागि जियाव॥

[१४६]

सावन पहिली पञ्चमी, गरभ उदै जो भान।
बरखा होगी अति घनी, ऊँचे जानो धान॥

[१४७]

गरभै ऊगे का भयो, जो गरज्यो अधिरात।
तुम जैयो पिय मालवे, हम जैहैं गुजरात॥

[१४८]

मघा मारै पुरवा सँवारै। उत्तरा भर भर खेत निहारै॥

[१४९]

अद्रा भरनी रोहनी, मघा उत्तरा तीन।
आज मङ्गल आँधी चले, तब तो बरषा छीन॥

[१५०]

धुर आषाढ़ की बिज्जुली, चमक निरन्तर जोय।
सोम शुक्र औ गुरु परै, भारी बरषा होय॥

[१५१]

अगहन बरसै बूढ़ि बिआय। तौनै देस रसातल जाय।

[१५२]

इन्द्र धनुष जो पूरब देखी। नीच ऊँच थल एकै लेखी।
साँझे धनुष बिहाने पानी। कहैं घाघ सुन पंडित ज्ञानी॥

[१५३]

साठी होवै साठ दिना। जब पानी बरसै रात दिना॥

[१५४]

सावन सूखे धान। भादों सूखे गेहूँ॥

[१५५]

पानी बरसे आधा पूस। आधा गेहूँ आधा भूस॥

बैल

हिन्दुस्तान जैसे गर्म और खेतिहर मुल्क मे बैल किसानों के सबसे बड़े मददगार साथी हैं। अच्छा किसान अपने बैलों को बेटे की तरह प्यार करता और पालता है।

हज़ारों बरस की संगति से किसान ने बैलों की नस्लों और उनके स्वभाव की पूरी-पूरी जानकारी प्राप्त कर ली है, और उसे उसने कहावतों मे सुरक्षित रख दिया है।

किसानों की माली हालत उनके हलों से आँकी जाती है। एक हल में दो बैल लगते हैं। जिस किसान के जितने हलों की खेती होती है, उसके पास उतने जोड़ी बैल होते हैं।

संस्कृत की एक प्राचीन पुस्तक में हलों के आधार पर किसान के विभव की व्याख्या इस प्रकार की गई है :—

नित्यं दशहले लक्ष्मीर्नित्यं पञ्चहले धनम्।
नित्यं त्रिहले भक्तं च नित्यमेकहले ऋणम्॥

'दश हल चलानेवाले गृहस्थ के यहाँ लक्ष्मी, पाँच हल चलानेवाले के यहाँ धन, तीन हलवाले के यहाँ भात या आहार-मात्र और एक हलवाले के यहाँ ऋण रहता है।'

गाँववालों ने इसी को अपनी बोलचाल में इस प्रकार कर लिया है।—

दस हल राव आठ हल राना। चार हलों का बड़ा किसाना॥
दो हल खेती एक हल बारी। एक बैल से भली कुदारी॥

× ×

एक हल हत्या दो हल काज। तीन हल खेती चार हल राज॥

बैल कैसे होने चाहियें, इस विषय की कुछ कहावतें आगे दी जाती हैं :—

[१]

एक बात तुम सुनहु हमारी। बूढ़ बैल से भली कुदारी॥

[२]

नाटा-खोंटा बेंचिके, चारि धुरन्धर लेहु।
आपन काम निकारि के, औरहु मँगनी देहु॥

[३]

डग-डग डोलन फरका पेलन, कहाँ चले तुम बाँड़ा।
पहिले खाबइ रान परोसी, गोसैयाँ कब छाँड़ा॥

[४]

भैंसा बरद की खेती करै, करजा काढ़ि बिरानो खाय।
बधिया ऐंचत है यहरी को, भैंसा ओहरी को लै जाय॥

फरका पेलन = बड़ी-बड़ी सींगों से छप्पर ढकेलनेवाला। बाँड़ा = पुँछकटा। रान-परोसी = महल्लेवाले।

[५]

वह किसान है पातर। जो बरदा राखै गादर॥

[६]

जौतै का पुरबी लादै क दमोय। हेंगा क काम दे जो देवहा होय॥

[७]

सींग मुड़े माथा उठा, मुँह का होवे गोल।
रोम नरम चंचल करन, तेज बैल अनमोल॥

[८]

ना मोंहि नाधो ढलिया कुलिया, ना मोंहि नाधों दायें।
बीस बरस तक करौं बरदई, जो ना मिलिहैं गायें॥

[९]

समथर जोतै पूत चरावै। लगते जेठ भुसौला छावै॥
भादों मास उठे जो गरदा। बीस बरस तक जोतो बरदा॥

[१०]

जहाँ देखिहो रूपा धँवर। सुका चार बरु दीहअ अवर॥

[११]

एक समय विधना का खेल। रहा उसर मैं चरत अकेल॥
एक बटोही हर हर कहा। ठाढ़े गिरा होस ना रहा॥

गादर बैल का कथन।

[१२]

पूँछ झब्बा औ छोटे कान। ऐसे बरद मेहनती जान॥

[१३]

बैल तरकना टूटी नाव। ये काहू दिन दैहैं दाँव॥

तरकना=चौंकनेवाला।

[१४]

छोटा मुँह ऐंठा कान। यही बैल की है पहचान॥

[१५]

बरद बिसाहन जाओ कन्ता। खैरा का जनि देखो दन्ता॥
जहाँ परै खैरा की खुरी। तो कर डारै चापर पुरी॥
जहाँ परै खैरा की लार। बढ़नी लैके बुहारो सार॥

खैरा=कत्थई रंग का। चापर=नष्ट। सार=बैल बांधने की जगह।

[१६]

उजर बरौनी मुँह का महुवा। ताहि देखि हरवाहा रोवा॥

महुवा=पीले रंग का।

[१७]

नीला कन्धा बगन खुरा। कबहूँ न निकले कन्ता बुरा॥

बैंगन खुरा=बैंगनी रंग के खुरवाला।

[१८]

स्वेत रंग औ पीठ बरारी। ताहि देखि जनि भूल्यो लारी॥

बरारी=दबी हुई रीढ़वाला।

[१९]

बाँसड़ औ मुँह धौरा। उन्हें देखि चरवाहा रौरा॥

बाँसड=उभड़ी हुई रीढवाला। धौरा=सफेद।

[२०]

नासू करै राज का नास।

नासू=कम पसली वाला।

[२१]

छोट सींग औ छोटी पूँछ। ऐसे को ले लो बे पूँछ॥

[२२]

सौंख कहै मोर देख कला। बे मेहरी का करौ घरा।

[२३]

छद्दर कहै मैं आऊँ-जाऊँ। सद्दर कहै गुसैयें खाऊँ॥

नौदर कहै मैं नौ दिस धाऊँ। हित कुटुम्ब उपरोहित खाऊँ॥

छद्दर=छः दाँतवाला। सद्दर=सात दाँतवाला। नौदर=नौ दाँतवाला।

[२४]

लम्बे लम्बे कान। और ढीला मुतान॥

छोड़ो छोड़ो किसान। न तो जात है प्रान॥

मुतान=पेशाब करने की इन्द्रिय।

[२५]

बैल लीजै कजरा। दाम दीजै अगरा॥

कजरा = जिसकी आँखें काली हों।

[२६]

घोंची देखै ओहि पार। ली खोलै यहि पार॥

घोंची = जिसकी सींग आगे की ओर मुड़ी हो।

[२७]

निटिया बरद छोटिया हारी। दूब कहै मोर काह उखारी॥

निटिया = नाटा बैल। छोटिया = छोटा। हारी = हलवाहा।

[२८]

सात दाँत उदन्त को, रंग जो काला होय।

इनको कबहुँ न लीजिये, दाम चहै जो होय॥

[२९]

हिरन मुतान औ पतली पूँछ। बैल बेसाहो कन्त बे पूँछ॥

हिरन मुतान = हिरन की तरह पेशाब करनेवाला।

हा त में यह हिनमुतान कहलाता है।

[३०]

बरद बेसाहन जाओ कन्ता। कबरा जनि देखो दन्ता॥

कबरा = चितकबरा।

[३१]

कार कछोटा झबरे कान। इन्हैं छाड़ि जनि लीजै आन॥

कार = काला। कछोटा = पूछ के नीचे का हिस्सा।

[३२]

कार कछौटी सुनरे बान। इन्हैं छाडि जनि बेसह्यो आन॥

बान = रंग।

[३३]

मुँह का मोट माथ का महुआ। इन्हैं देखि जनि भूल्यो रहुआ ॥
धरती नहीं हराई जोतै। बैठ मेंड़ पर पागुर करै ॥

महुआ = पीला रंग।

[३४]

करिया काछी धौरा बान। इन्हैं छाँड़ि जनि बेसह्यो आन ॥

[३५]

अमहा जबहा जोतहु जाय। भीख माँगि के जाहु बिलाय ॥

अमहा और जबहा = बैलों की जातियाँ।

[३६]

जहाँ परै फुलवा की लार। झाड़ू लैके बुहारो सार ॥

[३७]

पतली पेंडुली मोटी रान। पूँछ होय भुइँ में तरियान ॥
जाके होवै ऐसी गोई। वाको तकैं और सब कोई ॥

गोई = बैलों की जोड़ी।

[३८]

है उत्तम खेती वाकी। होय मेवाती गोई जाकी ॥

[३९]

मत कोई लीजो मुसरहा बाहन। खसम मारि के डालै पायन ॥

मुसरहा = जिसका डील लटका हो।

[४०]

बैल मुसरहा जो कोई ले। राज भंग पल में कर दे।
त्रिया बाल सब कुछ छुट जाय। भीख माँगि के घर-घर खाय ॥

[४१]

बड़सिंगा जनि लीजौ मोल। कुएँ में डारो रुपिया खोल ॥

[४२]

जहँवाँ देखिह लोह बलिया। तहँवाँ दीहा खोलि थैलिया॥

लोह=लाल।

[४३]

जहँ देखो पटवा की डोर। तहवाँ दीजै थैली छोर॥

पटवा=पीला रंग।

[४४]

मियनी बैल बड़ो बलवान। तनिक में करिहै ठाढ़े कान॥

मियनी=बैल की एक जाति।

[४५]

धूप धूर धूवाँ हो जहँवाँ। बरस पचीस बरद रह तहँवाँ॥

[४६]

बाछा बैल बहुरिया जोय। ना घर रहै न खेती होय॥

[४७]

ताका भैंसा गादर बैल। नारि कुलच्छनि बालक छैल॥
इनसे बाचैं चातुर लोग। राज छोड़ि के साधै जोग॥

[४८]

बैल बगौधा निरधिन जोय। वहि घर ओरहन कबहुँ न होय॥

[४९]

बैल मरखना चमकुल जोय। वा घर ओरहन नित उठि होय॥

[५०]

बिन बैलन खेती करै, बिन भैयन के रार।
बिन मेहरारू घर करै, चौदह साख लबार॥

[५१]

दाँत गिरे औ खुर घिसे, पीठ बोझ नहिँ लेय।
ऐसे बूढ़े बैल को, कौन बाँध भुस देय॥

[५२]

बाँधा बछड़ा जाय मठाय। बैठा ज्वान जाय तुँदिआय॥

[५३]

बूढ़ा बैल बिसाहे, झीना कापड़ लेय।
आपुन करे नसौनी, दैवै दूषण देय॥

[५४]

चरके भरौती माघ में महुवा। इन्हें देखि जन भूल्यौ रहुवा॥
घाम परे तो आधे तरे। नहिं रुपया पानी में परे॥

[५५]

उदन्त बरदे उदन्त ब्याय। आप जाय या खसमै खाय॥

[५६]

भैंस कन्देलिया पिय लाये। माँगे दूध कहाँ से आये॥

[५७]

सींग गिरैला बरद के, औ मनई का कोढ़।
यह नीके ना होयँगे, चाहे बद लो होड़॥

[५८]

बैल चमकना जोत में, औ चमकीली नार।
ये बैरी हैं जान के, लाज रखैं करतार॥

[५९]

जब देखो पिय संपति थोड़ी। बिसहो गाय बिआउर घोड़ी॥

[६०]

बरद बगौदा मरकहा होय। वहि घर उरहन नित नित होय॥

[६१]

अगहन में ना दी थी कोर। तेरे बैल क्या ले गये चोर॥

[६२]

मर्द निकौनी बरदै दाँय। दुवेरी चलने में दुख पाय॥

[६३]

खेत बे पानी बूढ़ा बैल। सो गृहस्थ साँझै गहै गैल॥

जोताई

[१]

उत्तम खेती जो हर गहा। मध्यम खेती जो सँग रहा।
जो पूछेसि हरवाहा कहाँ। बीज बूड़िगे तिनके तहाँ॥

[२]

उत्तम खेती आप सेती। मध्यम खेती भाई सेती।
निकृष्ट खेती नौकर सेती। बिगड़ गई तो बलाय सेती॥

[३]

जो हल जोतै खेती वाकी। और नहीं तो जाकी ताकी॥

[४]

कहा होय बहु बाहें। जोता न जाय थाहें॥

[५]

खेत बेपनिया जोतो तब। ऊपर कुँवा खोदाओ जब॥

[६]

कोड़ै, खाद जोत गहराई। तब खेती का मज़ा दिखाई॥

[७]

मैदे गेहूँ ढेले चना।

[८]

गेहूँ बाहें। धान बिदाहें।

[९]

माघ मघारै, जेठ में जारै, भादों सारै, तेकर मेहरी डेहरी पारै॥

[१०]

सौ तोबकर करै पचास। बरधे बरधा काटै घास॥

[११]

खाले ऊँचे नावो चास । थोर के जोतो ढेर के घास ॥

[१२]

जोते खेत घास ना टूटै । तेकर भाग साँझ ही फूटै ॥

[१३]

गहिर न जोतै बोवै धान । सो घर कोठिला भरै किसान ॥

[१४]

दो हर खेती एक हर बारी । बूढ़ बैल से भली कुदारी ॥

[१५]

कातिक मास रात हल जोतौ । टाँग पसारे घरं मत सूतौ ॥

[१६]

आगे गेहूँ पीछे धान । उसको कहिये बड़ा किसान ॥

[१७]

माघा ऊख माड़ा । बीस बाहों में गाढा ॥

[१८]

गेहूँ भवा काहें ? । असाढ के दो बाहें ॥

[१९]

गेहूँ भवा काहें । सोलह दायँ बाहें ॥

[२०]

तेरह कातिक तीन असाढ़ । जो चूका सो गया बजार ॥

[२१]

बीज फले फल अच्छा देत । जितना गहिरा जोतै खेत ॥

[२२]

बाली छोटी भई काहें ? बिना असाढ़ की दो बाहें ॥

[२३]

जोंधरी जोते तोड मड़ोर । तो वह डारै कोठिला फोर ॥

[२४]

बाहैं क्यों न असाढ़ एक बार । अब क्यों बाहै बारंबार ॥

[२५]

तीन कियारी तेरह गोड़ । तब देखो ऊखी की पोर ।

[२६]

जो ढेले मारे तोड मड़ोर । तांको दूँगी कोठिला फोर ॥

[२७]

मेंड़ बाँध दस जोतन दे । दस मन बिगहा मोसे ले ॥

[२८]

असाढ़ जोतैं लड़के बारे, सावन भादों हरवाहे ॥
कुआर जोतै घर का बेटा, तब ऊँचे हो होनहारे ॥

[२९]

सौ कै जोत पचासै जोतै । ऊँची बाँधै बारी ।
येहू पर जो दून न उपजै । दिह्यो घाघ को गारी ॥

[३०]

नौ नसी एक कसी । नौ नाहन एक बाहन ॥

[३१]

कच्चा खेत न जोतै कोई । नाहीं बीज न अँकुरै कोई ॥

[३२]

एक हर हत्या दो हर काज । तीन हर खेती चार हर राज ॥

[३३]

बाँह न कीन्हो मोटा । बीज बतावैं खोटा ।

[३४]

जोत न मानै अरसी चना । कहा न मानै हरामी जना ॥

[३५]

गेहूँ गवा काहें । कातिक के चौवाहें ॥

[३६]

थोर जोताई बहुत हँगाई, ऊँचे बँधिये आरी ।
उपजै तो उपजै, नाहीं तो घाघै देवै गारी ॥

[३७]

थोड़ा जोतै बहुत हँगावे , ऊँच न बाँधे आड़ ।
ऊँचे पर खेती करे , पैदा होवे भाड़ ॥

[३८]

गेहूँ बाहा धान गाहा । ईख गुड़ाई से है आहा ॥

[३९]

रँड़है गेहूँ कुसहै धान । गड़रा की जड़ जड़हन जान ।
फूली घास रो देयँ किसान । उसमें होय आन का तान ॥

[४०]

जब सैल खटाखट बाजै । तब चना खूबही गाजै ॥

[४१]

बाँह न जाने मसुरी चना । छित न जाने हरामी जना ॥

[४२]

पानी बरसे बहन न पावै । तब खेती को मजा चखावै ॥

[४३]

जब बरसै तब बाँधौ क्यारी । बड़ा किसान जो हाथ कुदारी ॥

[४४]

हल लगा पताल । तो टूट गया काल ।

[४५]

छोटी नसी। धरती हँसी।

[४६]

पाही जोतै तब घर जाँय। तेहि गिरहस्त भवानी खायँ॥

[४७]

गेहूँ भवा काहें। सोलह बाहें नौ गाहें॥

[४८]

कहा होय बहु बाहें। जोता न जाय थाहें॥

[४९]

बिगरे जोत पुराने बिया। ताकी खेती छिया बिया॥

[५०]

चिरैया में चीरफार। असरेखा में टार-टार॥
मघा में काँदो सार।

[५१]

गेहूँ बाहे चना दिलाये। धान बिदाहें मकी निराये।
ऊख कसाये।

[५२]

सौ बाहें मूर। पचास बाहें गूर। पचीस बाहें जवा। जो चाहे सो लवा।

[५३]

उहै किसान मने मोहि भावै। ऊखुदि पेरि के फगुवा गावै॥

[५४]

दुरिआरि खेती गाभिन गाय। जब जानी जब मुँहतर जाय॥

खाद

खाद खेती की जान है। जो किसान खेत में खाद नहीं डालता, वह व्यर्थ परिश्रम करता है।

खाद और खाद डालने के तरीकों पर भी देहात में कहावतें प्रचलित हैं। उनमें से कुछ कहावतें यहाँ दी जाती हैं :—

[१]

खाद देय तो होवै खेती। नहीं तो रहे नदी की रेती॥

[२]

गोबर मैला पानी सड़ै। तब खेती में दाना पड़ै॥

[३]

जाकर डालो गोबर खाद। तब देखो खेती का स्वाद॥

[४]

खेते पाँसा जो न किसाना। उसके घरे दरिद्र समाना॥

[५]

जेकरे खेत पड़ा नहिं गोबर। वहि किसान को जान्यो दूबर॥

[६]

खेती करै खाद से भरै। सौ मन कोठिला में लै धरै॥

[७]

खाद परै तो खेत। नाहीं कूड़ा रेत॥

[८]

अबर खेत जो छुट्टी खाय। सड़ै बहुत तो बहुत मोटाय॥

[९]

असाढ़ में खाद खेत मे जावै। तब भरि मूठी दाना पावै॥

[१०]

गोबर चोकर चकवर रूसा । इनको छोड़े होय न भूसा ॥

[११]

गोबर मैला नीम की खली । या से खेती दूनी फली ॥

[१२]

कुड़हल राखो खाद पटाय । तब धानों के बीज दिखाय ॥

कुड़हल = ऊसर

[१३]

जो तुम देवो नील की जूठी । सब खादों में रहे अनूठी ॥

[१४]

वही किसानी में है पूरा । जो छोड़ै हड्डी का चूरा ॥

[१५]

सन के डंठल खेत छिटावै । तिनते लाभ चौगुना पावै ॥

[१६]

खादै कूड़ा न टरै, करम लिखा टरि जाय ।
रहिमन कहै बनाय कै, देवो पास बनाय ॥

[१७]

सनई बोवै सनई काटै, सनई सारै खेत मझार ।
उलटै पलटै दोनों जोतै, वही दीजै गल्ला का झार ॥

[१८]

खेलै पासा जो न किसाना । उसके घरे दरिद्र समाना ॥

[१९]

मुइँ भइ काली काहें । जीव अंश अधिका ॥

[२०]

तोड़ दीन्ह क्यारी। खेत गा उजारी ॥

[२१]

गेहूँ आये बाल, खेत बनाओ ताल।

[२२]

सरसे अरसी, निरसे चना।

[२३]

सावन न मारे सीट की बेटा। अब देखें क्या खाओ बेटा ॥

[२४]

जोत गहराई धूरि उधिरावै। घास दूब कुछ रहन न पावै ॥

[२५]

साते पाँच तृतिया दसमी, एकादसि में जीव।
एहि तिथिन पर जोतहु, तौ प्रसन्न हो सीव ॥

[२६]

सौ चास। न एक पास ॥

बीज की तौल

फ़ी बीघा कितना बीज बोना चाहिये, इसकी भी कहावतें हैं। कुछ यहाँ दी जाती हैं :—

[१]

जौ गोहूँ बोवै पाँच पसेर। मटर का बीघा तीसै सेर॥

[२]

बोवै चना पसेरी तीन। सेर तीन की जोन्हरी कीन॥

[३]

पाँच पसेरी बिगहा धान। तीन पसेरी जड़हन मान॥

[४]

दो सेर मोथी अरहर मास। डेढ़ सेर बीघा बीज कपास॥

[५]

सवा सेर बीघा साँवाँ मान। तिल्ली सरसों अँजुरी जान॥

[६]

डेढ़ सेर बजरा बजरी साँवाँ। कोदो काकुन सवैया बोवा॥

[७]

बरैं कोदो सेर बोवाओ। डेढ़ सेर बीघा तीसी नाओ।

[८]

चना जाति चौहान बाजरा मुगल कहावै।
जौ की जाति पठान मूँछ पर ताव दिखावै॥

बोआई

बीज अच्छा हो, पर बोने का तरीका गड़बड़ हो तो फ़सल अच्छी नहीं होगी। गाँवों में बोआई के बारे में भी बहुत-सी कहावतें प्रचलित हैं। उनमें से कुछ यहाँ दी जाती हैं :—

[१]

'जब बर्रे बरोठे आई। तब रबी की होय बुआई॥

[२]

बुद्ध बृहस्पति दो भले, सुक्र न भले बखान।
रवि मंगल बोनी करै, द्वार न आवै धान॥

[३]

'बुध बउनी'। सुक लउनी।

[४]

आधे हथिया मूरि मुराई। आधे हथिया सरसों राई।

[५]

हस्त न बजरी, चित्र न चना। स्वाति न गोहूँ, बिसाख न धना॥

[६]

अगाई। सो सवाई।

[७]

दीवाली को बोये दिवालिया।

[८]

सावन सावाँ अगहन जवा। जितना बोवै उतना लवा॥

[९]

अगहन बवा। कहूँ मन कहूँ सवा।

[१०]

कोठिला बैठी बोली जई। आधे अगहन काहे न बई॥

[११]

कोठिला बैठी बोली जई। खिचड़ी खाकर क्यों नहि वई॥
जो कहुँ बोउतेउ बिगहा चार। तो मैं डरतिउँ कोठिला फार॥

[१२]

अगहन जो कोउ बोवै जौवा। होइ तो होइ नहिं खावै कौवा॥

[१३]

अद्रा धान पुनर्बस पैया। गया किसान जो बोवै चिरैया॥

[१४]

अद्रा रेंड़ पुनरबस पाती। लाग चिरैया दिया न बाती॥

[१५]

पुरबा में जिन रोपा भइया। एक धान में सोलह पैया॥

[१६]

मक्का जोन्हरी औ बजरी। इनको बोवै कुछ बिड़री॥

[१७]

घनी घनी सनई बोवै। तब सुतरी की आसा होवै॥

[१८]

सरसे अरसी। निरसे चना।

[१९]

पुक्ख पुनर्बस बोवै धान। असलेखा जोन्हरी परमान॥

[२०]

चित्रा गोहूँ अद्रा धान। उनके गेरुई न उनके घाम॥

[२१]

कातिक बोवै अगहन भरै। ताको हाकिम फिर का करै॥

[२२]

बोवै बजरा आये पुक्ख। फिर मन कैसे पावै सुक्ख॥

[२३]

ऊगो हरिनी फूली कास। अब का बोये निगोड़े मास॥

[२४]

मारूँ हरिनी तोड़ूँ कास। बोऊँ उर्द हथिया की आस॥

[२५]

सन घना बन बेगरा, मेढक फंदे ज्वार।
पैग पैग पर बाजरा, करै दरिद्रै पार॥

[२६]

नरसी गेहूँ सरसी जवा। अति के बरसे चना भवा॥

[२७]

कदम कदम पर बाजरा, मेंढ कुदौनी ज्वार।
ऐसा बोवै जो कोऊ, घर घर भरै कुठार॥

[२८]

हरिन छलाँगन काँकरी, पैगे पैग कपास।
जाय कहो किसान से, बोवै घनी उखार॥

[२९]

छीछी भली जौ चना, छीछी भली कपास।
जिनकी छीछी ऊखड़ी, उनकी छोड़ो आस॥

[३०]

गाजर गंजी मूरी। तीनों बोवै दूरी॥

[३१]

दाना भरसी। बोया सरसी।

[३२]

पूस न बोये। पीस खाये ॥

[३३]

बोओ गेहूँ काट कपास। होवे ढेला न होवे घास ॥

[३४]

कुड़हल भदई बोओ यार। तब चिउरा की होय बहार ॥

[३५]

रोहिनि खाट मृगसिरा छुउनी। अद्रा आवे धान की बोउनी ॥

[३६]

बोवत बने तो बोइयो। नहीं बरा बनाकर खइयो ॥

[३७]

पहिले काँकरि पीछे धान। उसको कहिये पूर किसान ॥

[३८]

जो तेरे कुनबा घना। तो क्यों न बोये चना ॥

[३९]

बाड़ी में बाड़ी करै, करै ईख में ईख।
वे घर यों ही जायँगे, सुनै पराई सीख ॥

[४०]

चना चित्तरा चौगुना, स्वाती गोहूँ होय।

[४१]

या तो बोओ कपास औ ईख। या तो माँग के खाओ भीख ॥

[४२]

जो तू भूखा माल का। ईख कर ले नाल का ॥

[४३]

मकड़ी घासा पूरा जाला। बीज चने का भरि भरि डाला॥

जिन दिनों मकड़ी जब घास पर जाला तनने लगे, तब चना बोना चाहिये।

[४४]

रोहिनि मृगसिर बोये मक्का। उरद मड़ुवा होय न टक्का॥
मृगसिर में जो बोये चेना। जमींदार को कुछ नहिं देना॥

[४५]

भादों चार औ आसिन चार। आदि अंत कहँ जोड़ विचार॥
कहैं घाघ केराव क बोवनी। कोठिला भरि के राखहु अपनी॥

[४६]

आलू बोवै अँधेरे पाख। खाद में डालो कूड़ा राख॥
समय समय जो सींचा करै। दूना आलू घर में धरै॥

[४७]

रोहिनि कोदो मृगसिरा धान। अद्रा जोन्हरी बोवै किसान॥

[४८]

चित्रा गेहूँ स्वाती भूसा। अनुराधा में नाज न भूसा॥

[४९]

माघ मसीना बोइये झार। फिर राखौ रब्बी की डार॥

[५०]

आकर कोदो नीव जवा। गाडर गेहूँ बेर चना।

[५१]

कर्क बोवावै कौंकरी, सिंह अबोनो जाय।
ऐसा बोले भड्डरी, कीड़ा फिर फिर खाय॥

[५२]

आगे की खेती आगे आगे। पीछे की खेती भाग जागे॥

[५३]

कुही असावस मूल बिन, रोहिनि बिन अख तीज।
सावन सरवन ना मिले, वृथा बहोरो बीज॥

[५४]

बहु बोना बहु करियाना औ बहुतै बोया चना।
कहै मनोहर जंगली, जावेंगे ये तीनों जना॥

[५५]

कमती करै गाजा बाजा। जौने लागै तौने राजा॥

[५६]

अति ऊँचे भुइँधरन पै, भुजगन के स्थान।
तुलसी अति नीचे सुखद, ऊँख अन्न अरु पान॥

[५७]

आस पास रबी, बीच में ख़रीफ़।
नोन मिर्च डाल के, खा गया हरीफ़॥

[५८]

साठी में साठी करै, बाढ़ी में बाढ़ी।
ईख में जो धान बोवै, फूँको वाकी दाढ़ी॥

[५९]

तिल कोरें। उर्द बिलोरें।

[६०]

विधि का लिखा न होई आन। आधे चित्रा फूटै धान।

[६१]

सावन सूखे धान। भादों सूखे गेहूँ॥

[६२]

हथिया में हाथ गोड़ चित्रा में फूल।
चढ़त सेवाती झंपा झूल॥

[६३]

ऊख तक खेती, हाथी तक बनिज।

[६४]

उठके बजरा यों हँस बोलै। खाये बूढ़ युवा हो जाय॥

[६५]

रूँध बाँध के फाग दिखाये। सो किसान मोरे मन भाये॥

[६६]

खेती करै ऊख कपास। घर करै व्यवहरिया पास॥

[६७]

ऊँख सरवती दिवला धान। इन्हें छाँड़ि जनि बोवो आन॥

[६८]

ऊख तो कर ले राँढ़। और पेरे उसका साँढ़॥

[६९]

ऊख गोड़ि के तुरत दबावै। तो फिर ऊख बहुत सुख पावै॥

[७०]

जो कपास को नाहीं गोड़ी। उसके हाथ न लागै कौड़ी॥

[७१]

कपास चुनाई। खेत बनाई।

[७२]

प्रीति तो कीजै ऊख से, जामें रस की खानि।
जहाँ गाँठ तहँ रस नहीं, यही प्रीति की बानि॥

[७३]

ऊख करै सब कोई । जौं बीच में जेठ न होई ॥

[७४]

तीन कियारी तेरह गोड़ । तब देखो ऊखी के पोर ॥

[७५]

जेठ में जरै माघ में ठरै । तब जीभी पर रोड़ा परै ॥

[७६]

ऊख कचाई काहे से । स्वाती पानी पाये से ॥

सिंचाई

[१]

सभी किसानी हेठी। अगहनियाँ पानी जेठी ॥

[२]

धान पान उखेरा। तीनों पानी के चेरा ॥

[३]

तीन कियारी तेरह गोड़। तब देखो ऊखी की पोर ॥

[४]

धान पान औ खीरा। तीनों पानी के कीरा ॥

[५]

तरकारी है तरकारी। या में पानी की अधिकारी ॥

[६]

काले फूल न पाया पानी। धान मरा अधबीच जवानी ॥

[७]

चैना जी का लेना। सोलह पानी देना ॥
बीस-बीस के बच्छा हारे, हारे बलम नगीना ॥
हाथ में रोटी बगल में पैना।
एक बार बहै पुरवाई, लेना है ना देना ॥

[८]

चना सींचकर जब हो आवै। ताको पहिलै तुरत खोंटावै ॥

[९]

साठी होवै साठवें दिन। पानी पावै आठवें दिन ॥

[१०]

अगहन में सरवा भर। फिर करवा भर॥

अगहन में फसल के लिये एक कटोरा पानी उतना ही लाभदायक है, जितना दूसरे महीनों में एक घड़ा भर।

[११]

गेहूँ आये थाल। खेत बनाओ ताल॥

[१२]

खेत बेपानी बुड्ढा बैल। सो गिरस्त साँझे घर गैल॥

निराई

[१]

दो पत्ती क्यों न निराये । अब बीनत क्यों पछिताये ।।

[कपास में दो पत्तियाँ लगते ही न निराकर चुनते समय अब क्यों पछताते हो ?]

[२]

सावन भादौं खेत निरावै । तब गृहस्त बहुतै सुख पावै ।।

[३]

कपास चुनाई । खेत खनाई ।

[४]

सावन भादौं खेत निरावै । तब गृहस्त बहुतै सुख पावै ।।

[५]

बाँध कुदारी, खुरपी हाथ । लाठी हँसुवा राखै साथ ।।
काटै घास निरावै खेत । पूरा किसान वही कह देत ।।

[६]

विधि का लिखा न होई आन । आधे चित्रा फूटै धान ।।

[७]

मघा न मारे पूर्वा सँवारे । उत्तर भर खेत निहारै ।।

[८]

भली जाति कुरमिनि कै, खुरपी हाथ ।
आपन खेत निरावैं, पिय के साथ ।।

[९]

गेहूँ बाहे । चना दलाये ।।
धान गाहे, मक्की निराये, ऊख कसाये ।।

कटाई

[१]

लाग बसंत। ऊख पकन्त।

[२]

कन्या धाने मीने जौ। जहाँ चाहे तहाँ लौ॥

[३]

चना अधपका जौ पका काटै। गोहूँ बाली लटका काटै॥

[४]

आये मेष। हरी न देख।

मेष-राशि में फसल काट लेनी चाहिये।

[५]

सात सेवाती। धान उपाठा।

स्वाती नक्षत्र के सात दिन बीत जाने पर धान पक जाता है।

मड़ाई और ओसाई

[१]

पछिवाँ हवा ओसावै जोई। घाघ कहैं घुन कबहुँ न होई॥

[२]

दो दिन पछुवाँ छः पुरवाई। गेहूँ जौ को लेहु दँवाई॥
ताके बाद ओसावै जोई। भूसा दाना अलगै होई॥

[३]

गेहूँ जौ जब पछुँवा पावै। तब जल्दी से दायाँ जावै॥

फ़सल के रोग

[१]

कुम्भे आवै मीने जाय। पेढ़ी लागै पाली खाय॥

[२]

गेहूँ गेरुई गाँधी धान। बिना अन्न के मरा किसान॥

[३]

माघ में बादर लाल धरै। तब जान्यौ साँचो पाथर परै॥

[४]

जब बरषा चित्रा में होय। सगरी खेती जावै खोय॥

[५]

फागुन मास बहै पुरवाई। तब गेहूँ में गेरुई धाई॥

[६]

माघ पूस बहै पुरवाई। तब सरसों का माहूँ खाई॥

[७]

चना में सरदी बहुत समाई। ताको जान गधैला खाई॥

[८]

नीचे ओद ऊपर बदराई। घाघ कहै गेरुई अब धाई॥

[९]

कर्म-हीन खेती करै। कि ओला गिरै कि पाला परै॥

[१०]

जेकरे ऊखर लगै बोहाई। तेहि पर आवै बड़ी तबाही॥

[११]

जै दिन भादों बहै पछार। तै दिन पूस में परै तुसार॥

[१२]

ऊख कचाई काहे से। स्वाती का पानी पाये से॥

[१३]

उत्तर से जल फूहीं पड़ैं। मूल साँप दोनों अवतरैं॥

[१४]

चित्रा बरसै माटी मारै। आगे से गेरुई के कारे॥

[१५]

सावन भादों कुहरा आये। मास पूस में पाला खाये॥

[१६]

गेहूँ गेरुई चरका धान। बिना अन्न के मरा किसान॥

काल-निर्णय

[१]

माह सुदी पून्यो दिवस, चंद निर्मलो जोय ॥
पसु बेंचौ कन संग्रहौ, काल हलाहल होय ॥

[२]

जेठ बदी दसमी दिना, जो सनिबासर होय ॥
पानी होय न धरनि में, बिरला जीवै कोय ॥

[३]

रात को बोलै कागला, दिन में बोलै स्याल ॥
तो यों भाखै भड्डली, निश्चै पड़ि है काल ॥

[४]

पँच मंगल हो फागुनै, पूस पाँच सनि होय।
काल पड़ै तब भड्डरी, बीज बवौ मति कोय ॥

[५]

मृगसिर वायु न बाजिया, रोहिन तपै न जेठ ॥
गोरी बीनै कांकरा, खड़ी खेजड़ी हेठ ॥

खेजड़ी = एक जंगली पेड़

[६]

आर्द्रा तो बरसी नहीं, मृगसिर पौन न जोय।
तो जानो ऐ भड्डली, वर्षा बूँद न होय ॥

[७]

तेरह दिन का देखो पाख। अन्न महँग समझो बैसाख ॥

[८]

कर्क संक्रमी मंगलवार । मकर संक्रमी सनिहि विचार ।।
पन्द्रह महुरतवारी होय । देस उजाड़ करै यों जोय ।।

[९]

जिन वारौं रवि संक्रमै, तिनै अमावस होय ।
खप्पर हाथा जग भ्रमै, भीख न घालै कोय ।।

[१०]

भोर समै डरडम्बरा, रात उजेरी होय ।
दुपहरिया सूरज तपै, दुरभिछ तेऊ जोय ।।

[११]

सावन सुकला सत्तमी, जो बरसै अधिरात ।
तू पिय जाओ मालवा, हम जाये गुजरात ।।

[१२]

सावन सुकला सत्तमी, उवत जो दीखै भान ।
या जल मिलिहैं कूप में, या गंगा असनान ।।

[१३]

सावन पहिली पंचमी, जोर की चलै बयार ।
तुम पिय जाना मालवा, हम जाबै पितुसार ।।

[१४]

आगे मेघा पीछे भान । पानी पानी रटै किसान ।।

[१५]

कृष्ण अषाढ़ी प्रतिपदा, जो उत्तर गरजन्त ।
छत्री छत्री जूझिया, निहचै काल पड़न्त ।।

[१६]

चित्रा स्वाति बिसाखड़ी, जो बरसै आषाढ़ ।
चलौ नराँ बिदेसड़ौ, परिहै काल सुगाढ़ ॥

[१७]

सुदी अषाढ़ में बुध को, उदै भयो जो देख ।
सुक्र अस्त सावन लखो, महाकाल अवरेख ॥

[१८]

जेठ उज्यारी तीज दिन, आर्द्रा रिष बरसन्त ।
जोसी भाखै भड्डरी, दुर्भिछ अविस करन्त ॥

[१९]

नवैं असाढ़े बादलो, जो गरजै घनघोर ।
कहैं भड्डरी ज्योतिषी, काल पड़ै चहुँओर ॥

[२०]

रोहिणि माहीं रोहिणी, एक घड़ी जो दीख ।
हाथ में खपरा मेदिनी, घर-घर माँगै भीख ॥

[२१]

कृतिका जो कोरी गई, अद्रा मेंह न बूँद ।
तौ यों जानों भड्डरी, काल मचावै दूँद ॥

[२२]

पाँच मंगरो फागुनो, पौष पाँच सनि होय ।
काल पड़ै तब भड्डरी, बीज बवौ मति कोय ॥

[२३]

मंगलवारी मावसी, फागुन चैती जोय ।
पसु बेचौं कन संग्रहौ, अवसि दुकाली होय ॥

[२४]

चैत मास उजियाले पाख। आठें दिवस बरसता राख॥
नव बरसे जित बिजली जोय। ता दिसि काल हलाहल होय॥

[२५]

मंगलवारी होय दिवारी। हसैं किसान रोवै बैपारी॥

[२६]

माघ सुदी पून्यो दिवस, चंद्र निर्मली जोय।
पसु बेंचौ कन संग्रहौ, काल हलाहल होय॥

[२७]

एक मास में ग्रहण जो दोई। तौ भी अन्न महँगो होई॥

[२८]

दो आसिन दो भादौ, दो असाढ़ के माँह।
सोना चाँदी बेचकर, नाज बेसाहो नाह॥

[२९]

मंगल सोम होय सिवराती। पछिवाँ बाय बहै दिन राती॥
घोड़ा रोड़ा टिड्डी उड़ै। राजा मरै कि परती पड़ै॥

[३०]

माघ मास जो पड़ै न सीत। महँगा नाज जानियो मीत॥

[३१]

रवि दूनी सनि चौगुनी मंगल भाव करै।
पूस अमावस को पड़ै बुध तो बैल मरै॥

[२२]

माघ उजाली तीज को, बादल बिजली देख।
गेहूँ जौ संचय करो, महँगो होवे पेख॥

[२३]

सोम शुक्र सनीचरी, पूस अमावस होय।
घर घर होय बधावरी, बुरा न मानै कोय॥

[२४]

एक पाख दो गहना। राजा मरै कि सहना॥

खेती की फुटकर कहावतें

[१]

उत्तम खेती मध्यम बान। अधम चाकरी भीख निदान॥

[२]

आये मेख हरी नं देख। आये मेघ, हरी हरी देख॥

[३]

दो तौई, घर खोई। दो जोई, घर खोई।

[४]

कर्महीन खेती करै। बरधा मरै कि सूखा परै॥

] ५]

बाँधा बछड़ा जाय मठाय। बैठा ज्वान जाय तुँदियाय॥

[६]

कदम कदम पीपल मुकदम, गेहूँ ठाकुर जौ दीवान॥
अरहर चेरी चना गुलाम, सरसों ठाढे करै सलाम॥

[७]

अहिर मिताई बादर छाई। होवे होवे नाहीं नाई॥

[८]

ऊँचे चढ़ के बोला मँडुवा। सब नाजों का मैं हूँ भँडुवा॥
आठ दिना मुझको जो खाय। भले मर्द से उठा न जाय॥

९]

बाढ़ें पूत पिता के धर्मा। खेती उपजै अपने कर्मा॥

[१०]

खेती करै अधिया। न बैल मरै न बधिया॥

[११]

खेती करै साँझ घर सोवै। काटै चोर हाथ धरि रोवै॥

[१२]

खेत बेपनियाँ जोतो तब। ऊपर कुँआ खोदाओ जब॥

[१३]

राम बाँस जहँ धँसे अचूका।
तहँ पानी की आस अखूटा॥

[१४]

धान गिरै सुभागे का। गेहूँ गिरै अभागे का॥

[१५]

सर्व तपै जो रोहिणी, सर्व तपै जो मूल।
मघा तपै जो जेठ की, उपजै सातो तूल॥

[१६]

रँडहै गेहुँ कुसहै धान। गँड़रा की जड़ जड़हन जान॥
फुली घास रो देयँ किसान। उसमें होय आन का तान॥

[१७]

मग्घा मकड़ी पुरवा डाँस। उतरा में है सब को नास॥

[१८]

बाँध कुदारी खुरपी हाथ। लाठी हँसिया राखे साथ॥
काटे घास निरावै खेत। पुरा किसान वही कह देत॥

[१६]

नित्तहिं खेती दुसरे गाय। जो नहिं देखै तेकर जाय॥
घर बैठे जो बनवै बात। देह में वस्त्र न पेट में भात॥

[२०]

पहिले छायो तीन घरा। सार भुसौला औ बढ़हरा॥

[२१]

जब देखो पिय संपति थोड़ी। बिसहो गाय बियाउरि घोड़ी॥

[२२]

पाँचै आम पचीसे महुवा। तीस बरस में इमली कहुआ॥

सुखी किसान

[१]

जिसका ऊँचा बैठना, जिसका खेत निचान ॥
उसका बैरी क्या करे, जिसके मीत दिवान ॥

[२]

दस हर राव आठ हर राना । चार हरों का बड़ा किसाना ॥

[३]

खेत होय गोइँड़े हर होय चार । घर होय गिहथिन गऊ दुधार ॥
अरहर की दाल जड़हन का भात । गागल निबुवा औ घिउ तात ॥
सह रस खंड दही जो होय । बाँके नैन परोसै जोय ॥
कहैं घाघ तब सबही झूँठा । उहाँ छाड़ि इहवैं बैकूँठा ॥

[४]

ऊँचि अँटारी मधुर बतास । घाघ कहैं घरही कैलास ॥

[५]

बहु बजार बनिहार बनि, बारी बेटा बैल ॥
बेवहर बढ़ई बन बबुर, बात सुनो यह छैल ॥
जो बकार बारह बसैं, सो पूरन गिरहस्त ॥
औरन को सुख दे सदा, आप रहै अलमस्त ॥

[६]

गाड़ी जीत लई भैंसे ने धरती जीती अँजना धान ॥
खेती जीत लई लोधे ने रोटी खेत लई मँगवाय ॥

[७]

नीक जाति कुरमिनि कै खुरपी हाथ।
आपन खेत निरावैं पिय के साथ॥

[८]

चेना चोरी चाकरी, हारे करै किसान॥

दुःखी किसान

[१]

सावन में ससुरारी गये, भादौं खाये पूआ।
चैत में छैला पूछत डोलैं, तोहरे केतिक हूआ॥

[२]

आये असाढ़ तो भूमि भई सँवरी।
सैयाँ तुम जोति लेहु बिघा चारि अवरी॥
आइ गइल अगहन लागि गइल बेहरी।
भागि गइलें मरद धराइ गइल मेहरी॥

[३]

तीन बरद घर में दो चाकी। उगमन खेत राजकी बाकी॥
उगमन = पूर्व दिशा में।

[४]

भैंस कँदेलिया पिय लाये। माँगे दूध कहाँ से आये॥

[५]

कुचकट पनहीं बतकट जोय। जो पहिलौंठी बिटिया होय॥
पातरि कृषी बौरहा भाय। घाघ कहैं दुख कहाँ समाय॥

[६]

बिन बैलन खेती करै, बिन भैयन के रार॥
बिन मेहरारू घर करै, चौदह साख लबार॥

[७]

असाढ़ मास जो घूमा कीन। ताकी खेती होवै छीन॥

[८]

रिन कै फिकिरि पुत्र कै सोच। नित उठि पंथ चलैं जे रोज॥
बिना अगिनि ये जरिगै चारि। जिनकै अधबिच मरिगै नारि॥